

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180037

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H85.1

Accession No. H1899

Author M49K

Title काश्मीर ५२ हसन।

This book should be returned on or before the date
last marked below.

काश्मीर पर हमला

[एक आपबीती कहानी]

लेखिका

श्रीमती कृष्णा मेहता

सर्वोदय साहित्य भण्डार
हुसैनियालम रोड, हैदराबाद (दक्षिण).

१९५१

नवयुग साहित्य सदन-प्रकाशन

प्रकाशक,
गोकुलदास श्रूत,
नवयुग साहित्य सदन, इन्दौर

पहली बार : १९५१

मूल्य

अढ़ाई रुपये

मुद्रक
नैशनल प्रिंटिंग वर्क्स, दिल्ली

प्रकाशकीय

काश्मीर का प्रश्न आज विश्वव्यापी बन गया है। संयुक्तराष्ट्र-संघ अभी तक उस गुथी को नहीं सुलझा सका है। वैसे उसकी कहानी में कोई उलझन नहीं है। सभी जानते हैं कि पाकिस्तान ने किस प्रकार, सीमा पार के कैबाईलियों को धर्म के नाम पर भड़काकर इस सुन्दर प्रदेश को बरबाद करने की छुट्टी दे दी थी। उन्होंने वहाँ क्या किया इसके बारे में बहुत-सी रोमांचकारी कहानियाँ लोगों ने सुनी हैं पर अबतक उसका कोई प्रामाणिक विवरण जनता के सामने नहीं आया था। ऐसा विवरण वही दे सकता है जो उस भयंकर संघर्ष से गुज़रा हो। इस पुस्तक की लेखिका श्रीमती कृष्णा मेहता मुजफ्फराबाद के तत्कालीन जिलाधीश स्व० श्री दुनीचन्द मेहता की पत्नी हैं। मेहता साहब ने आक्रमण के समय वीरतापूर्वक अपना कर्तव्य पूरा करते हुए मौत को गले लगाया था और तब उनकी पत्नी और बच्चों को जिस भीषण और मर्मस्पर्शी परिस्थितियों से गुज़रना पड़ा था उसीका निष्पक्ष वर्णन लेखिका ने किया है। श्रीमती मेहता लेखिका नहीं हैं परन्तु घटनाओं की तीव्रता ने उनकी लेखनी में वह शक्ति भर दी है कि शब्द स्वयं बोल उठते हैं। उन्होंने जहाँ मनुष्य के भीतर जागते हुए राक्षस को देखा है वहाँ शैतान के भीतर शिव के दर्शन भी किये हैं और दोनों का समान भाव से वर्णन किया है। यह लेखिका के निष्पक्ष दृष्टिकोण का प्रमाण है।

इस पुस्तक में केवल रोमांचकारी घटनाओं का ही वर्णन नहीं है बल्कि एक इतिहासकार के लिए तथा राजनीति के उस विद्यार्थी के लिए, जो काश्मीर के प्रश्न की निष्पक्ष जांच करना चाहता है, बहुमूल्य और प्रामाणिक सामग्री भी है।

श्रीमती मेहता चूँकि लेखिका नहीं हैं इसलिए पुस्तक की भाषा आदि के संशोधन में उनका अन्य बन्धुओं से सहायता लेना स्वाभाविक था। सर्वश्री विष्णु प्रभाकर तथा शम्भुनाथ भट्ट ने विशेष रूप से इस पुस्तक के संशोधन और सम्पादन में योग दिया है इसलिए वे लेखिका और प्रकाशक दोनों के धन्यवाद के अधिकारी हैं।

विषय-सूची

१. तूफान से पहले	१
२. तूफान आगया	७
३. बीच भंवर में	१४
४. मुंहबोला भाई	२२
५. इस्लाम की शिक्षा	३०
६. कृष्णगंगा की गोद में	३७
७. वजीर साहब का बलिदान	८३
८. मेरी दुर्बलता और मेरी शक्ति	४७
९. वे पवित्र फूल	५२
१०. फिर उजड़े सदन में	५६
११. मुसलमान भी डरने लगे	६२
१२. ये नेक इन्सान	६५
१३. मौलवी के घर में	७०
१४. मेरे भाई	७३
१५. शैतान हमदर्द के रूप में	७८
१६. नरक या स्वर्ग	८४
१७. कुछ और घटनाएं	८९
१८. वह हत्याकांड	९४
१९. खान का परिचय	९९
२०. पाकिस्तान के आंसू	१०२
२१. मुज़फ़्फ़राबाद ! अलविदा	१०७
२२. रावलपिंडी कैप में	११३
२३. मुक्ति के स्थान पर जेल	१२३
२४. फिर नरक में	१३१
२५. भारत नहीं जाएंगी	१४०
२६. इसे सारी उम्र पाकिस्तान में रखो	१४७
२७. भारतमाता की जय	१५५

: १ :

तूफान से पहले

काश्मीर के पश्चिमोत्तर में सीमा के समीप मुज़फ़्फराबाद का प्रदेश है। क़बाइली हमले से पहिले यह रियासत काश्मीर का एक ज़िला था। यह छोटा-सा प्रदेश पर्वतों से घिरा हुआ और हरा-भरा है। इसके बीच से कृष्णगंगा नदी बहती है। यहांके लोगों की वेश-भूषा पंजाबियों से मिलती-जुलती है। यहांके लोग मेहनती और सरल हैं—प्रकृति के नियम के अनुसार धनवान भी हैं और निर्धन भी। इस देश के लोग—अधिकतर—देखने में सुन्दर और सुडौल हैं। यहांसे एक रास्ता रावल-पिंडी को जाता है और दूसरा एबटाबाद, ज़िला हजारे को। ये दोनों स्थान पाकिस्तान में हैं। रियासत काश्मीर की ओर से यहां एक वजीर-वज़ारत (ज़िलाधीश) और कई अफसर—सबजज, असिस्टेंट इन्स्पेक्टर पुलिस, इंजीनियर, असिस्टेंट सर्जन तथा जंगलात का डिविजनल अफसर—हुआ करते थे।

मैं जिन दिनों की बात लिख रही हूं वह भारत विभाजन के बाद का समय था और उन दिनों शासन की ओर से यहां एक फौज का कर्नल और उसके साथ फौज की एक टुकड़ी भी थी।

जुलाई सन् १९४७ में मेरे पति श्री दुनीचन्द मेहता को काश्मीर सरकार ने मुज़फ़्फराबाद वजीर-वज़ारत बनाकर भेजा। श्रीनगर में वह असिस्टेंट गवर्नर के पद पर थे। वह जुलाई में ही अपना नया पद सम्हालने के लिए श्रीनगर से मुज़फ़्फराबाद गये। मैं उस समय साथ जा न सकी, क्योंकि हमारे यहां बहुत से अतिथि आये हुए थे। एक मास पश्चात् वे किसी सरकारी काम से श्रीनगर आये और वापसी पर बच्चों को साथ लेते गये। मुझे दो-तीन दिन के पश्चात् आने को कह गये क्योंकि

हमारे अतिथि भी दो-तीन दिन बाद जानेवाले थे । मुज़फ़राबाद पहुँचते ही उन्होंने एक कर्मचारी को मुझे लेने के लिए भेजा, ताकि रास्ते में मुझे कोई कष्ट न हो ।

एक सप्ताह के फूरात् में भी मुज़फ़राबाद चली गई । मैं वहाँ पहुँची ज़रूर; किन्तु इस बार मुझे वहाँ कुछ अच्छा-सा न लगा । यह मैं नहीं जानती थी कि बात क्या है । कोई अपरिचित जगह भी तो नहीं थी । हम वहाँ चौथी बार गये थे । परन्तु न जाने क्यों इस बार मुझे वहाँ हर चीज़ से डर-सा लग रहा था । मैं हैरान थी कि बात क्या है । दिल इतना उदास रहा कि श्रीनगर से साथ लाया हुआ सामान तक भी मैंने पूरा न खोला, कुछ आवश्यक चीज़ें ही खोलकर उपयोग में लाती रही । शेष सब बंधी-की-बंधी रखी रहीं । जी चाहता था कि कहीं दूर भाग जाऊँ । बातों-ही-बातों में मैं उनसे (श्री मेहता से) अक्सर कह भी देती थी कि हमें कहीं जाना है, यहाँ नहीं रहना है । इस कारण मैं सामान नहीं खोलूँगी ।

मेरे पति उन दिनों काम में इतने व्यस्त थे कि उन्हें बात करने तक का अवसर नहीं मिलता था । कर्नल के साथ वे कभी एक सीमा पर और कभी दूसरी सीमा पर जाते, गाव-गांव फिरते परन्तु उन्होंने हमें यह कभी नहीं बताया कि यहाँ कुछ गड़बड़ होनेवाली है । देखते-देखते हमारी कोठी के सामने वाली पहाड़ियों पर मोर्चे बनने आरम्भ हो गए । हमारी कोठी एक छोटे से टीले पर थी । उसके चारों ओर काफी खुली जगह थी । उसके बीच में एक छोटा-सा मैदान और बाग़ था । बाग़ और कोठी के चारों ओर लकड़ी के तख्तों का जंगला लगा हुआ था । हमारी कोठी से थोड़ी दूर असिस्टेंट इन्स्पेक्टर पुलिस की कोठी थी । उस जगह से लगभग दो फरलांग दूर हस्पताल और डाक्टर की कोठी थी । हमारी कोठी के एक ओर कुछ दूरी पर एक मस्जिद थी और दूसरी ओर साथ ही मुसलमानों की एक ज़ियारतगाह के साथ घास और घने वृक्षों से आच्छादित घना जंगल था । पहाड़ी के बीच में से एक छोटी

सी पगडंडी हमारी कोठी को इस ज़ियारतगाह से मिलाती थी। इस राह से मनुष्यों का आना-जाना कम ही होता था। हां, कभी-कभी जब वहां गिद्ध और उल्लू बोलते तो उनकी तलाश में कुत्ते ज़रूर उस राह से गुज़रते देखे गये थे।

मेरे मुज़फ़्फराबाद जाने के तीन दिन बाद जन्माष्टमी का त्योहार आया। हम सबने घर में व्रत रखा। शाम को मैं भगवान् के दर्शन के लिए मन्दिर में गई। पूजा की सामग्री और फल-फूल लिये नौकर साथ था। लेकिन जैसे ही वह द्वार पर पहुंचा उसने ठोकर खाई और उसके हाथ से थाल गिर पड़ा। उसी समय मेरा माथा ठनका कि हो-न-हो कुछ होने वाला है। यह भगवान् ने खतरे की घंटी दी। दो दिन तक उस घटना का असर मेरे मन पर रहा। तीसरे दिन मैं सब कुछ भूल गई। पर उस महीने में अजीब ही बातें देखने में आईं। सांप इतने निकलते थे कि हम उनकी वजह से बेहद परेशान थे। कभी वे बच्चों के झूलों पर पाये गए तो कभी बैडमिंटन खेलने की जगह पर। एक दिन तो हमारे यहां सोये हुए दो चपरासियों के मुंह पर एक बड़ा सांप गिर पड़ा। खैरियत यह हुई कि उसने काटा नहीं। ऐसा लगता था कि काल हर तरफ से हमें निगलना चाहता है। मैं अपने बच्चों सहित नित्य सायंकाल को ध्यान से ईश्वर-भजन करती थी। इतना आनन्द आता था कि हर समय भजन में ही लगे रहने की चाह रहती थी।

मैं अपने घर को एक आदर्श गृहस्थी समझती थी। मैं कभी उससे ऊबी नहीं थी। हमें कितनी ही आर्थिक और दूसरी कठिनाइयां सहनी पड़ी थीं, परन्तु गृहस्वामी की सत्यनिष्ठा के कारण हम हमेशा निश्चित रहते थे। हम जानते थे कि हमारे घर में ऐसी कोई बात नहीं होती जिसके कारण दूसरों के सामने शर्मिन्दा होना पड़े। यद्यपि मेरे पति एक अच्छे पद पर थे, परन्तु हमारा घरेलू-जीवन मजदूरों का-सा था। हमारे घर में कभी कोई चीज़ मुफ्त या रिश्तों के रूप

में नहीं आती थी। वे अक्सर मुझसे कहा करते थे, “मेरे पास धन नहीं है। मेरे बच्चे सच्चाई और मेहनत की कमाई पर पले हुए हैं। तुम्हें चाहिए कि तुम इनको तपस्या का जीवन विताना सिखाओ। वही इनके काम आयेगा। सुख का जीवन मनुष्य के लिए एक बोझ बन जाता है।”

बच्चे तो उनकी देख-रेख में ऐसे ही बने थे, पर मैं उनके जीते जी अपने आपको तपस्विनी न बना सकी। एक धनी बाप की पहली संतान होने के कारण मैंने अपना बचपन आराम और अमीरी में बिताया था। दास-दासियों के बीच पली हुई होने से मेरे दिमाग पर कुलीनता और अमीरी का भूत सवार था। शुरू में जब मैं ससुराल आई तब से मैंने अपना जीवन अपने पति के जीवन के अनुरूप कष्ट-सहिष्णु बनाना चाहा, किन्तु ऐसा कर न पाई। मन चाहता था कि मैं भी जीवन को वैसा ही कठोर बनाऊं, परन्तु ऐसा होता नहीं था। बहुत बार तो मैं अपनी इस अक्षमता पर रो-रो पड़ती थी।

जब मुजफ्फराबाद में मेरा मन नहीं लगा तो मैंने उनसे कहा, “मैं दो-चार दिन के लिए श्रीनगर जाना चाहती हूँ। बच्चे यहीं रहें, मैं शीघ्र लौट आऊंगी।” पहले तो वे मान गये और सीट का प्रबन्ध भी कर आये, परन्तु बाद में कहने लगे, “अभी न जाओ। मैं कुछ फौजी अफसरों को दावत पर बुलाना चाहता हूँ, यह काम करके तुम चली जाना।”

और कुछ दिन यों ही बीत गये। एक दिन उन्होंने बाहर से आते ही कहा, “सुनो, आज कर्नल साहब मुझसे कह रहे थे कि मैं अपने बच्चों को श्रीनगर भेज दूँ और खुद उनके यहाँ जाकर रहूँ। कर्नल यह भी कह रहे थे कि दोमेल में—जहाँ पर वे रहते थे—जीप और फोन आदि का खासा प्रबन्ध है। सूचना देने और आने-जाने के साधन की आवश्यकता पड़ने पर भी परेशान नहीं होना पड़ेगा।” मैंने पूछा, “तो आपने उन्हें क्या जवाब दिया।” वे बोले, “मैंने कर्नल से कह दिया है कि मझसे यह नहीं हो सकेगा कि मैं जनता को तो शासन

के आदेशानुसार यहांसे बाहर न जाने दूँ और अपने परिवार को भेज दूँ। अगर कुछ गड़बड़ी हुई तो जो हाल सारी जनता का होगा वही मेरे वीवी-वच्चों का भी होगा। मैं अपने कर्तव्य-पथ से गिरना नहीं चाहता।” यह सुन मेरा हृदय प्रफुल्लित हो उठा और उनके प्रति श्रद्धा से मेरा सिर झुक गया। मैंने उनका उत्साह बढ़ाते हुए कहा, “आपने जो कुछ कहा है, बिल्कुल सही कहा है। आपको अपने निश्चय पर दृढ़ रहना चाहिए। भगवान् आपकी सहायता करेंगे।”

यहां पर एक बात स्पष्ट करने योग्य है कि मुज़फ़्फराबाद सीमा प्रदेश होने पर भी शासकवर्ग की लापरवाही के कारण असुरक्षित था। और तो और, समय पर सूचना देने के साधन फोन आदि तक की व्यवस्था नहीं थी। हां, यह आदेश अवश्य था—लोगों को डर के कारण शहर छोड़ने नहीं दिया जाय।

इस समय की बातचीत से मुझे कुछ-कुछ मालूम हुआ कि यहां गड़बड़ होनेवाली है; यह भी शक गुज़रा कि वह इस बारे में सब कुछ जानते हैं। उन्होंने जीवन में मुझसे कोई बात नहीं छिपाई थी। प्रायः प्रत्येक बात पर वह मेरी राय लेते थे। घर की खटपट मैं जानती ही न थी। कभी भी मैंने ऐसा कोई काम नहीं किया जो उनकी इच्छा या आज्ञा के प्रतिकूल हो। उन्हें भी मुझे कभी कुछ कहने की ज़रूरत नहीं पड़ी थी। हम एक दूसरे की भावना इशारों-इशारों में ही समझ जाते थे। लेकिन कुछ भी हो उन दिनों उनकी सदा शांत रहनेवाली तबीयत में कुछ झुंझलाहट की झलक दिखाई पड़ती थी। वह मुझसे बाहर की बातों का भेद नहीं बताते थे। मैं भी हैरान और परेशान थी। यही सोचकर झुप रहती थी कि काम की अधिकता के कारण वह ऐसे हो रहे हैं। परन्तु एक ओर तो यह हालत थी, दूसरी ओर वह अपने बाग़ में सब्जियां और फूल लगवा रहे थे। उन्हें इन बातों का बड़ा शौक था। वह घर की खाने-पीने की चीजों में बड़ी दिलचस्पी लेते थे। मुझे ऐसी कई बातों में उनसे काफी सहायता मिलती थी।

२१ अक्टूबर, १९४७ को हमारे यहां रात के समय फौज के कर्नल और कैप्टिन आदि की दावत थी। उस दिन थोड़ी-थोड़ी वर्षा हो रही थी और इस कारण कुछ-कुछ सर्दी भी थी। रात के दस बज गये पर वे लोग खाने पर नहीं आये। सब पास ही की पुलिस सुपरिन्टेंडेंट की कोठी में बैठे हुए थे। खाना मैंने खुद पकाया था। मैंने बुलावा भेजा। जवाब मिला कि कैप्टिन कहीं जीप पर गये हैं, उनके आने पर खाना होगा। ये जाति के मुसलमान थे और सीमा की गति विधि जानने के लिए गये थे। लौटकर उन्होंने “सब ठीक है” की सूचना दी। खाना खाकर सभी अपने-अपने ठिकानों पर चले गये।

रात को साढ़े बारह बजे मेहता साहब अपने सोने के कमरे में आये। सोये, पर उन्हें नीद नहीं आई। तब वे सब बच्चों को उठा लाए और लगे सबके साथ रमी (ताश का एक खेल) खेलने। मुझे भी मजबूर होकर खेल में शामिल होना पड़ा। फिर उन्होंने चाय मंगवाई। मैं हैरान थी कि ये आज क्या कर रहे हैं। मेरे न चाहने पर उस दिन उन्होंने यह कहते हुए मुझे चाय पीने के लिए मजबूर किया, “देखो, आज मैं तुम्हें चाय पीने के लिए कह रहा हूं। कल से तुम्हें कोई नहीं कहेगा, सुना। पीछे पछताओगी।” यह सुनते ही मेरे कलेजे में धक-धक होने लगी। मैंने चाय ली, परन्तु न जाने प्याली में क्या गिर पड़ा। मैंने उसे झट फेंक दिया और वहमी मनुष्य की तरह उनसे बार-बार पूछने लगी, “आपने अभी यह क्या कहा था।” वे कहने लगे, “कुछ नहीं, मुह से ऐसी ही बात निकल गई।” थी तो बात साधारण सी और कही भी उन्होंने मजाक में ही थी, परन्तु उसने मेरे हृदय में तीव्र वेदना पैदा कर दी। मैंने खेल बन्द कर दिया, सबको बंद करना पड़ा। रात काफी हो चुकी थी। सब सोने के लिए अपने-अपने कमरों में चले गए। कुछ क्षण बाद उन्होंने मुझे आवाज़ दी कि बच्चों को कमरे में सुलाकर बेबी को मेरे पास ले आओ (बेबी मेरा सबसे छोटा लड़का है, उसकी आयु उस समय ७ वर्ष की थी)। वह उसे बहुत चाहते थे। मैं उसे उठाकर ले

आई और उसे उनकी चारपाई पर सुला दिया। वह सोये हुए बेबी को देखकर कहने लगे, “देखो यह कैसा मस्त सोया पड़ा है।” मैंने इस बात का उत्तर नहीं दिया। मैं उनके उस दिन के विलक्षण व्यवहार को देखकर सोच में पड़ गई थी कि आखिर ये कर क्या रहे हैं। कुछ देर बाद देखते-ही-देखते वह भी गहरी नींद में सो गये।

: २ :

तूफान आगया

सवेरे के ५ बजे होंगे; अचानक मेरी आंख खुली। मैंने सुना गोलियों की भयानक आवाज़ पर्वत की ओर से चट्टानों से टकरा-टकरा कर आरही है। मैं झट उनकी चारपाई के पास जाकर उन्हें जगाने लगी, किन्तु वे इतनी गहरी नींद में थे कि कई आवाजों के बाद जागे। मेरे मुंह से अचानक ये शब्द निकले, “हमला होगया, आप उठते क्यों नहीं” (हालांकि मुझे कुछ खबर नहीं थी)। उन्होंने करवट बदलते हुए कहा, “यह हमला नहीं है। हमारी फौज चांदमारी कर रही होगी।” मैंने जल्दी से उनसे पूछा, “क्या रात को कर्नल ने चांदमारी के विषय में आपसे कुछ कहा था?” उन्होंने उत्तर दिया, “नहीं तो।” मैंने हड़बड़ाकर कहा, “तब तो हमला हुआ है। आप उठिए, क्या सोच रहे हैं?” उन्हें फिर भी यकीन नहीं आ रहा था। मेरे अनुरोध पर वे उठे और उन्होंने बाहर जाकर मैदान में जो कुछ देखा उससे मालूम हुआ कि गोलियां दनादन हमारी ही कोठी की तरफ आ रही हैं और लकड़ी के जंगले से टकरा रही हैं। वह तेजी से आगे बढ़े। मैंने कहा, “आप ज़रा बचकर जाइये, ऐसा न हो कि कहीं गोली लग जाये।” उन्होंने जल्दी में संक्षिप्त-सा उत्तर दिया, “मुझे गोली नहीं लगती।” इतना कहकर वह कपड़े पहन बाहर निकल आये।

मैं बच्चों को साथ लेकर बरामदे में आई और गोलियों के आने

वाली दिशा की ओर देखने लगी। हमें कोई आदमी नज़र नहीं आ रहा था परन्तु गोलियों की बौछार निरन्तर आती दिखाई दे रही थी। कुछ गोलियां जंगले के तख्तों को चीरकर भीतर तक आती थीं; किन्तु बच्चों के दिल में ज़रा भी भय नहीं था। वे जोर-जोर से हंस रहे थे। मैंने बच्चों से कहा, “जाकर कपड़े पहन आओ, सर्दी लगने का डर है।” रात को कुछ वर्षा हो जाने के कारण सर्दी होगई थी। मेरे दोनों लड़के, जिनमें से एक को आयु सात वर्ष और दूसरे की साढ़े आठ वर्ष की थी, जाकर थोड़ी ही देर में कपड़े पहन आये। बड़े ने बुश शर्ट पहन रखी थी। छोटे ने एक स्वेटर भी पहना हुआ था। नंगे पैर वे फिर दौड़े-दौड़े बरामदे में आये। चारों लड़कियां भी पुराने ‘पुल ओवर’ पहन कर नंगे पैर ही तमाशा देखने आईं। इनमें एक मेरे जेठ की लड़की थी, जो कुछ समय पहले मेरे पास श्रीनगर आई थी और हमारा तबादला होने पर मेरे साथ यहां चली आई थी। इस चौदह वर्षीय लड़की का नाम स्वदेश था। मेरी बड़ी लड़की बीना साढ़े चौदह साल की थी, मंझली शीला साढ़े दस साल की और सबसे छोटी कमलेश साढ़े नौ साल की थी। ये सब अबोध बालक गोलियों की आवाज़ पर हंस-हंस कर लोट पोट हो रहे थे। न जाने क्यों मेरे मन में भी उस समय अधिक घबराहट नहीं थी! मैं भी बच्चों के साथ वह दृश्य देखती रही। जब गोलियों का वेग अधिक बढ़ा तब मैंने बच्चों से भीतर जाने के लिए कहा पर वे एक न माने, उल्टे मुझे ही डरपोक बताने लगे।

इधर हम इन बातों में लगे थे, उधर ग्राउन्ड के बाहर सब-इन्स्पेक्टर पुलिस तेईस सिपाहियों को साथ लिये मेहता साहब से आ मिला। इन सिपाहियों में बीस मुसलमान थे और तीन हिन्दू। सब-इन्स्पेक्टर स्वयं हिन्दू राजपूत था। वजीर साहब को उन्होंने बताया कि हमला हो गया है और शत्रु कृष्णगंगा का पुल पारकर नगर के समीप आ रहे हैं। इतने में वह भीतर आये। मैंने उनसे पूछा, “आप दोमेल जाकर फौज क्यों नहीं बुला रहे हैं?” वह बोले, “गोलियां

तेजी से चल रही हैं, कुछ थम जायं तो दोमेल जाऊ। तुम बच्चों को चाय वगैरा तो दो।” इतना कहकर वह फिर तेजी से बाहर निकल गये और उसके बाद वापस नहीं लौटे। मेरी और उनकी यह अन्तिम मुलाकात और अन्तिम बातचीत थी। हां, बाहर जाते-जाते बच्चों को देखकर बड़े जोर से हंसे और बोले, “देखो ! मेरे बच्चे गोलियों की आवाज़ सुनकर ज़रा भी नहीं घबराते, निर्भय होकर हंस रहे हैं। इन्हें ऐसा ही होना चाहिए।”

इस भयानक विपत्ति के समय कोठी के सब कर्मचारी तितर-बितर हो गये थे। मेरे पास केवल मेरा एक नौकर ओमप्रकाश रहा। वह हमारे ही इलाके का था और बड़ा विश्वासपात्र सेवक था।

हम अब परेशान थे कि क्या करें। नगर में चारों ओर भगदड़ मची हुई थी। गोलियों की बौछार, लोगों के चीत्कार और हाहाकार से दिल दहल रहा था। इतने में बाहर से किसी व्यक्ति ने आकर कहा, “हमलावर हस्पताल तक पहुंच गये हैं। वे जहां जाते हैं आग लगाते हैं। हस्पताल में आग लगा दी गई है, बेचारे असहाय रोगी भीतर ही जल रहे हैं।” यह सुनकर मैं सहमी। हस्पताल बिल्कुल करीब था। मैंने बच्चों को अंदर कमरे में कर लिया। हमारी कोठी एक-मंजिली थी। दोनों ओर बरामदे थे। रसोई पीछे की ओर थी और उसी तरफ से पूजा के कमरे में से होकर पीछे जियारतगाह वाली पगडंडी के सामने एक दरवाज़ा खुलता था। मैंने जल्दी में न जाने क्या सोचकर जेवर उतारे और एक पोटली में बांध लिये। उस समय मेरे तन पर सबसे पुराने और हल्के कपड़े थे। मैंने तब यह सोचा तक नहीं कि कोई मजबूत कपड़ा पहनूं।

मैं अभी मुश्किल से अन्दर गई थी कि आवाज़ आई, ‘सुपरिन्टेंडेंट की कोठी जल रही है।’ अब मेरे होश उड़े कि क्या किया जाय। कुछ समय में नहीं आ रहा था कि पिछले दरवाजे से हमारे एक मुसलमान चपरासी ने द्वार खटखटाकर कहा, “आप यहां क्या कर रही हैं ?

हमलावर आपके सोने के कमरे का द्वार तोड़ रहे हैं। वे लगभग ६० आदमी हैं। आप कृपा कर बच्चों समेत बाहर आ जाइये। हम जियारतगाह वाली पगडंडी पर कहीं इन बच्चों को छिपा देंगे।” घबराहट में मैंने उससे पूछा, “मेहता साहब कहा हैं?” वह कहने लगा, “वे मोर्चे पर गये हैं और महफूज है। आप जल्दी आ जाइये।” मैं किकर्तव्य विमूढ-सी हो रही थी। एक ओर तो मैंने सोचा कि वे अपना कर्तव्य निभा रहे हैं। मेरे ऊपर बच्चों की रक्षा का भार है। किसी भी प्रकार उनकी रक्षा करके मुझे यह कर्तव्य पूरा करना चाहिए। दूसरी ओर मेरे मन में यह खटका था कि उनकी गैरहाजिरी में घर छोड़ना अच्छा नहीं है। आखिर मैं भारतीय नारी थी। मैं इसी दुविधा में थी कि बाहर से वह फिर हड़बड़ाकर बोला, “जल्दी कीजिए, नहीं तो गजब हो जायगा। ये लोग बुरी तरह से मार-काट करते आ रहे हैं।” यह सुनकर मुझसे न रहा गया। नंगे पांव खाली हाथ एक चादर और एक गुप्ती साथ लिये बच्चों को लेकर, मैं उस भरे घर से, सब कुछ छोड़छाड़ कर चल दी। गुप्ती इसलिए साथ रखी कि अगर कहीं कभी इन मासूम बच्चों की इज्जत पर हमला हो तो इससे पूर्व कि वे अपमानित हों, इस गुप्ती से वे सदा की नींद सोकर अपने मान-धन की रक्षा कर सकें।

बाहर निकलते ही हम जियारतगाह वाली पगडंडी पर चल पड़े। जाती बार मैंने उस उजड़ी हुई बस्ती पर एक निगाह डाली जहां कुछ क्षण पहले मेरी सुख-पूर्ण गृहस्थी बसी हुई थी और अब डरावना अंधकार छाता जा रहा था। गोलियां अब भी चल रही थीं, इतनी जोर से, कि कानों के पर्दे फटे जा रहे थे। न जाने, उस समय हम उस अलंघनीय पगडंडी से जा कैसे रहे थे। पांव फिसल जाता तो गिर कर लाश तक के टुकड़े-टुकड़े हो जाते। थोड़ी दूर चलकर हम घास पर सुस्ताने बैठे। तभी जोरों से वर्षा होने लगी। जो कुछ कपड़े हमारे तन पर थे, वे भी भीग गये। बच्चे सर्दी से ठिठुरने लगे। मैंने उनके ऊपर खेस डाल दिया। वे बेचारे उसमें दुबककर बैठे रहे।

अब गोलियों की आवाज़ और भी नज़दीक से आने लगी। मैं एक अनजान राही की तरह वहां बैठी थी कि हस्पताल का एक बूढ़ा कर्मचारी चरण घबराया हुआ पास से गुज़रा। मैंने पूछा, “भैया तुम इतने घबराये हुए क्यों हो ?” वह बोला, “मेरा बारह वर्ष का लड़का हस्पताल में था और वह अब जल रहा है। सुना है कि जितने मरीज़ वहां थे वे सबके सब उसके साथ जल रहे हैं। न जाने मेरा बच्चा कहां होगा ?” यह कहते हुए ममता भरा हृदय लेकर वह हस्पताल की ओर दौड़ा चला गया। बाद में पता चला कि उसकी लाश हस्पताल के करीब पड़ी देखी गई थी और उसकी गोद में उसका झूलसा हुआ मुर्दा बच्चा था।

हम लगभग ढाई घंटे वहीं पड़े रहे। सर्दी के कारण बच्चों का रंग उड़ गया, मानो उनमें खून ही नहीं था। इतने में हमें ढूँढता हुआ ओम् वहां आया। वह रो रहा था। मैंने एकदम उससे पूछा, “ओम् ! तुम कहां थे, रो क्यों रहे हो ?” बच्चे उसे रोता देखकर हंसने लगे, “वाह ओम् ! तुम कितने डरपोक हो। देखो हम नहीं डरते। तुम तो कहते थे कि तुम किसी से नहीं डरते। अब यह क्या हो गया है जो कायर बनकर रो रहे हो ?” वह कुछ नहीं बोला। मैंने उससे फिर पूछा, “बात क्या है बताओ तो, तुम इतना रो क्यों रहे हो।” वह ज़रा रुककर बोला, “जब आप यहां आईं तो मैं कोठी में ही था। साठ कबाइली वहां आये और सब जेवरात और कीमती कपड़े निकाल कर ले गये। और साहब के कपड़े भी अलमारी से निकाल कर पहन रहे थे।” मैंने उसकी बात काटते हुए कहा, “बस, इसी पर तुम इतना रो रहे हो। भाई, कपड़े और जेवर हमने ही तो बनवाये थे। जिन्दा रहे तो फिर बनवा लेंगे। पर, हां, एक बात सुनो। अगर तुम कोठी में जाकर साहब का गर्म सूट ला सको तो अच्छा होगा। वे प्रातःकाल ठंडे कपड़ों में ही गये हैं, उन्हें सर्दी लग रही होगी।” यह सुनते ही उसने एक आह भरी और जाने के लिए उठा। पर कुछ

दूर चलकर फिर लौट आया, कहने लगा, “मैं नहीं जा सकता। जब मैं यहां आ रहा था तो कोठी में से किसीके कराहने की-सी आवाज सुनी थी।” इतना कहते-कहते वह सहसा रुक गया। तब न जाने क्या सोचकर मैंने भी उससे कहा, “अच्छा, रहने दो।” इतने में हमारी कोठी जलती हुई दिखाई पड़ी। हमारे साथ के चपरासी ने कहा, “देखिये, आपका घर जल रहा है।” यह देखकर मेरी छोटी लड़की कमलेश घबराई हुई कहने लगी, “माताजी, मैं क्या करूं? मेरी गुड़ियों का घर जल रहा होगा और बीच में बेचारी गुड़ियां भी जल गई होंगी।” नन्ही बालिका को तो गुड़ियों के ही संसार का परिचय था। पर मैं यह देखकर स्तब्ध रह गई। “हे भगवान्, अब मैं क्या करूं? जाने वह किस हाल में और कहां होंगे? अब मैं इन नन्हें बच्चों को लेकर कहां जाऊं?” इधर मेरी परेशानी बढ़ रही थी, उधर अब बच्चों की हंसी गायब थी। उन्हें लग रहा था कि विपत्ति आ रही है परन्तु वे मौन थे। चपरासी कहने लगा, “माताजी, चलिए मैं आपको कहीं महफूज जगह पहुंचा आऊं, नहीं तो ये बच्चे सर्दी के मारे मर जायेंगे। और कहीं हमलावर भी आप सबको ढूँढ़ने यहां आये तो क्या बनेगा। हमें यहां से चलना चाहिए।” हम सब उठ खड़े हुए और अपना सर्वस्व गंवाकर दर-दर की ठोकें खाने चल पड़े। बच्चे चल रहे थे, नंगे पैर—मुड़-मुड़कर जलते हुए घर के काले धुंए को आकाश से बातें करते देखते हुए। आहें-भरने के सिवा हमारे पास अब धरा ही क्या था।

चलते-चलते हम एक नाले पर पहुंचे। सामने से दस-ग्यारह आदमी हमारी ओर आते हुए दिखाई दिये। हममें सबसे आगे सुरेश था। उन्होंने उसे रोककर पूछा, “बता तू किसका लड़का है और कहां जा रहा है?” सुरेश ने उत्तर दिया, “मैं यहां के वजीर का लड़का हूं।” वह जानता था कि ऐसा कहने में खतरे का डर है; किन्तु उसे सच बोलने की दीक्षा मिली थी। इसलिए वह झूठ न बोल सका। यह जवाब सुनते ही उन्होंने कहा, “हां, हां, तुम सब जल्दी जाओ।

तुम्हारे लिए वजीर साहब ने नवाबा चपरासी के यहां ठहरने का इंतजाम किया है ।” यह नवाबा तहसील का चपरासी था । हम गिरते-पड़ते नवाबा के घर पहुंचे । यह मकान हमारी कोठी से आधे मील की दूरी पर एक ऐसी ऊंची जगह था, जहां से सारा शहर नज़र आता था ।

मेरे वहां पहुंचते ही उसका सब परिवार और शहर के कई मुसलमान जो भाग कर यहां आये थे, बाहर निकले और मुझे आदर से भीतर ले गये । कहने लगे, “तू हमारे नेक हाकिम की स्त्री है । हमारी आंखों में तेरी इज्जत वैसी ही कायम है । घर अपना है—बैठिये ।” मैं अंदर गई । कई औरतों ने मेरे बच्चों की हालत देखकर आंसू बहाये और हमलावरों को जली-कटी सुनाने लगीं । मैंने उन लोगों से मेहता साहब के बारे में पूछा, “वे कहां हैं ?” वे बेग़्नी से बोले, “हमें मालूम नहीं कि वे कहां हैं ।” कुछ देर बाद वहां सुपरिन्टेंडेंट पुलिस का अर्दली शिवदयाल आया । यह बaramoola का रहनेवाला था, हमारी कोठी पर अक्सर आया करता था । आते ही वह ओम् से मिला । दोनों कुछ बातचीत करने लगे । मैंने शिवदयाल से पूछा, “भाई, तुम्हें मालूम है कि मेहता साहब कहां हैं ? तुम तो तब वहीं थे, जब वह घर से बाहर निकले थे ।” वह बोला, “वे साहब (सुपरिन्टेंडेंट पुलिस) के साथ तेईस सिपाही लेकर हाईस्कूल की तरफ गये हैं । वहां सैनिकों ने कई दिन पहिले एक तोप गाड़ रखी है और वे वहां महफूज़ है ।”

इधर वच्चे सर्दी के मारे थर-थर कांप रहे थे । यह देखकर नवाबा की औरत ने आग जलाई । मैंने बच्चों के गीले कपड़े उतार-उतार कर उसपर सुखाये, अच्छी तरह तो क्या सूखते, फिर भी कुछ अन्तर जरूर हुआ ।

वहां से शहर के जलने का भयानक दृश्य देखकर यही प्रतीत होता था कि प्रलय हो रही है । चारों ओर हाहाकार मचा हुआ था । पहाड़ियों पर लोग अपने परिवारों समेत भागते नज़र आ रहे थे । आग की लपटें आसमान से बातें कर रही थीं । आकाश धुएं से ढक गया

था। जहां मैं थी वहां पर भी बहुत से आदमी आसपास से आकर इकट्ठे हो गये। मैं पागलों की तरह हर एक व्यक्ति से मेहता साहब का हाल पूछती थी। कोई कुछ कहता तो कोई कुछ। सही उत्तर कोई नहीं देता था। आनेकले बस इतना कहते जाते थे कि हमलावर मर्दों को मार रहे हैं, औरतों और लड़कियों को पकड़कर ले जा रहे हैं। जिस मकान में घुसते हैं लूटकर फिर उसमें आग लगा देते हैं।

चार बज गये। बच्चों ने प्रातःकाल से कुछ भी नहीं खाया था। भूख से वे निढाल हो रहे थे। घर की मालिकन ने यह देखकर मर्कई के आटे की एक रोटी बनाई और बच्चों के लिए मुझे दी। मैंने उस रोटी के छः हिस्से किये और प्रत्येक बच्चे को एक-एक हिस्सा दे दिया।

: ३ :

बीच भंवर में

रात के दस बजे तक हम इसी तरह बैठे रहे। दस बजे नवाबा आया और अपनी स्त्री को बाहर बुलाकर कुछ कहने लगा। वह जब लौटकर आई तो मुझसे कहने लगी, “आप हमारे यहांसे अभी चली जाइये, आप यहां नहीं रह सकतीं। हमलावर यहां आकर हमें तुम्हें पनाह देने पर मार देंगे।” मैंने कहा, “मैं इस अंधेरी रात में कहां जाऊ। मैं यहां किसी को नहीं जानती।” परन्तु उसने मेरी एक बात नहीं सुनी। इतने में उसके पति ने भी अन्दर आकर कहा, “आप जल्दी यहांसे चली जाइये। वजीर साहब और पुलिस सुपरिन्टेंडेंट दोनों जीप में ऊड़ी गये हैं।” मुझे उसकी यह बात मनगढ़न्त लगी। मैंने उससे तत्काल कहा, “तू गलत कहता है, वे ऐसे भागनेवाले नहीं हैं।” उसने झट कुरानपाक की कसम खाकर कहा कि नहीं वे ऊड़ी गये हैं।

मैं जब दिन में यहां आई थी तब उन्होंने मुझे इज्जत से बैठाया था। पर अब रात के घोर अंधकार में वे मुझे निकाल रहे थे। मैंने मन-ही-मन

कहा, “मनुष्य कितनी जल्दी बदल जाता है। अभी देवता होता है तो अभी राक्षस बन जाता है।” पर मैं कर क्या सकती थी। लाचार होकर मैंने उससे कहा, “अगर तुम्हें मेरे कारण नुकसान पहुंचने का डर है, तो मैं अभी यहां से चली जाती हूं। जो होगा, सहन कर लूंगी; परन्तु अपने लिए किसीको मुसीबत में नहीं डालूंगी। पर एक बात है तुम्हें हमारे साथ आना होगा। मैं अपनी कोठी के चौकीदार के घर जाना चाहती हूं।” वह कुछ दिन पहले छुट्टी पर गया था। वह जाति का मुसलमान था और बड़ा सज्जन था। उसका घर यहां से काफी दूर था। नवाबा कहने लगा, “अच्छा मैं जोगियों के गांव तक आपको पहुंचा आऊंगा। सुबह वहां का नम्बरदार आपको उस चौकीदार के गांव तक पहुंचा देगा। यह जोगियों का गांव प्रसिद्ध गुंडों का गांव था। मैं उसके कहने के ढंग से उसकी शरारत भांप गई। इसलिए मैंने अपने साथ ओम् और शिवदयाल को लिया। उनके अतिरिक्त वह चपरासी जो हमें कोठी से निकाल लाया था, साथ आया।

रास्ता पहाड़ी था—कांटों और कंकरोں से भरपूर। इतना भयानक कि पैर फिसला और हड्डी-पसली चूर। उसपर हिंसक जंतुओं की आवाजें सुनाई दे रही थीं। सामने शहर जलता हुआ दिखाई दे रहा था। जलती आग की रोशनी में जलते हुए मकान काले ठूठ के समान लग रहे थे। गोलियां अब भी चल रही थीं।

मैं अपने इस छोटे से काफिले में सबसे पीछे थी। यह हमारी विपत्ति-यात्रा का पहला सफर था। न जाने क्या सोचते हुए हम इस भयानक रात में चल रहे थे। कुछ दूर चलकर हम एक पहाड़ी बस्ती पर चढ़े। नवाबा ने वहां एक आदमी को बुलाकर कहा, “भाई, हम सुबह तक तुम्हारे यहां ठहरना चाहते हैं।” उसने हमें अपने यहां ठहराया। असल में वह उसका कोई रिश्तेदार था। बच्चे इस कदर थके हुए थे कि आगे चलने की तनिक भी शक्ति नहीं थी। बेचारे सर्दों से पहिले ही परेशान थे—उसपर कपड़े कुछ-कुछ गीले थे। इसलिए

उनके दांत बज रहे थे। घरवालों ने एक खाट और एक रजाई दी। बच्चों को एक मोटी-सी मकई की रोटी भी खाने को दी। मैंने लेने से इन्कार करना चाहा पर बच्चों की ललचाई आंखें देखकर मैं ऐसा न क सकती। लाचार मैंने रोटी लेकर बच्चों में बांट दी। उसे खाकर वे खाट पर लेटते ही गहरी नींद में सो गये। मैं भी बच्चों के पास पड़ी रही। जो रजाई हमें ओढ़ने को मिली थी यदि कुछ समय पहले वह हमें कोठी के आसपास कहीं पड़ी हुई मिलती तो उसे दूर फिकवाना तो मामूली बात थी, हम उस जगह तक को साफ करवाते; पर अब यह अवस्था थी कि उसी रजाई के लिए हमें दिल से उनका धन्यवाद करना पड़ा।

इस कमरे में बहुत से तेज धारवाले भाले चमक रहे थे, उन्हें देखकर दिल दहल उठता था। हम लगभग आधा घंटा लेटे होंगे कि मुझे बाहर से कुछ आदमियों की कानाफूसी सुनाई दी। मैं उठी और किवाड़ खोलकर देखने लगी। वहां तीन व्यक्ति आपसमें धीरे-धीरे कुछ बातें कर रहे थे। उनमें से एक नवाबा था। बाकी दो मेरे परिचित नहीं थे। उन दोनों में से एक के हाथ में पैनी धार का भाला था और दूसरे के हाथ में एक कुल्हाड़ा। मैंने उनसे पूछा, “तुम क्या सलाह कर रहे हो?” नवाबा उठा और जल्दी से कहने लगा, “आप यहां भी नहीं रह सकतीं क्योंकि सवेरे यहां पर भी हमलावर आनेवाले हैं। आपकी खातिर वे इनको भी तबाह कर देंगे। आपको अभी यहांसे चले जाना चाहिए।” यह सुनकर मेरा सिर चकरा उठा। सवेरे से मैंने पानी तक नहीं पिया था। चिन्ताएं इतनी थीं कि कुछ सूझता नहीं था फिर भी—इनपर हमारे कारण कोई विपत्ति न आये, यह खयाल अवश्य आया। इसी कारण मैंने उत्तर दिया, “मुझे रास्ता मालूम नहीं है, तुम्हें साथ चलना पड़ेगा।” वह कहने लगा, “मैं तो नहीं चल सकता। मेरे बच्चे अकेले हैं। हां, मैं यहां से एक आदमी आपके साथ कर दूंगा। पर आपको उसे बीस रुपये देने होंगे।” मैंने कहा, “भाई! मैं घर से बीस पैसे भी लेकर नहीं चली हूं, बीस रुपये कहां से हूं।” वह बोला, “पर उसे इससे क्या, वह तो रुपये लेगा,

आप कहीं से दें ।” मैं परेशान थी कि रुपये कहां से दूं । हममें से किसी के पास रुपये नहीं थे । सब एक दूसरे का मुंह ताकने लगे । वह वक़्त उस समय इतना कठोर बन गया कि उसने साफ कह दिया, “मैं फिर आपकी कोई सहायता नहीं कर सकता । आप यहां से निकल जायें ।” तब एकदम मेरा ध्यान जेवरों पर गया । मैंने कान का एक जेवर (टाप्स) उसे दिखाया और कहा, “यह लो, मैं तुम्हें यह देती हूं ।” वस माया ने उसे जकड़ लिया । वह शट बाहर से एक व्यक्ति को लाया और बोला, “यह इसे दें ।” मैंने कहा, “यहां तो मैं नहीं दूंगी; ठिकाने पर पहुंच कर ही दूंगी ।” वे चाहते तो सब कुछ छीनकर मुझे निकाल देते । पर उन्हें इस बात का खयाल नहीं रहा कि मेरे पास कुछ और भी है । मैंने बच्चों को जगाया । बेचारे हड़बड़ाकर उठ बैठे और आनेवाली विपत्ति की राह देखने लगे । मैंने उनसे कहा, “उठो चलें । घब्रराने की कोई बात नहीं । मुसीबत का मुकाबिला करना हम लोगों का फर्ज है ।”

हम उस नये आदमी के साथ चल पड़े । नवाबा साथ नहीं आया । रात के एक बजे हम सब अंधेरे में रास्ता टटोलते हुए जा रहे थे । वहां सड़क नहीं थी । कांटों और कंकड़ों से भरपूर पहाड़ी पगडंडी थी । प्रभु की कृपा से हमें न तो कहीं कांटा ही चुभा और न ठोकर ही लगी ।

कुछ दूर चलकर पीछे से हमें एक आवाज़ सुनाई दी । मैंने पीछे मुड़कर देखा, एक सिख नवजवान टार्च जलाये हुए हमारे पीछे-पीछे आ रहा था । मेरे साथी उसे पहचानते थे । उन्होंने उससे पूछा, “कहां जा रहे हो ?” उसने एक नामी सिख सरदार का नाम लेते हुए कहा, “वह और उसका परिवार इस रास्ते से भाग रहे थे कि उनका दस साल का बच्चा पहाड़ी से गिर पड़ा । उसकी दशा बड़ी शोचनीय है । क्षणों का मेहमान है । आप भी अपने बच्चों को हिफाज़त से ले जाइये ।” मैं उस समय क्या कर सकती थी । चारों ओर मौत ही मौत दिखाई दे

रही थी। सब बच्चे आगे थे और मैं सबसे पीछे थी। अंधेरे में कभी-कभी हम एक दूसरे से बिछुड़ जाते थे। तब बड़ा परेशान होना पड़ता था।

चलते-चलते शिवदयाल पास आकर कहने लगा, “मैं कुछ आगे गया था, वहां कुछ हिन्दू मिले थे। उनके साथ मुजफ्फराबाद का एक नामी रईस भी है। उन्होंने मुझसे कहा है कि अगर तुम लोग अपना भला चाहते हो तो अपने साथी मुसलमानों को अलग कर दो और हमारे साथ आओ। उसने मुझे उन लोगों की बात मान लेने को कहा। मैंने भी यही उचित समझा और मुसलमान भाई से कहा, “भाई ! अब तुम जाओ, अपने बाल-बच्चों को सम्भालो। हमें जहां किस्मत ले जायेगी वहां चले जायेंगे।” और प्रतिज्ञानुसार मैंने कान का जेवर उसे दे दिया। उसने प्रसन्नता से लिया और बड़े अदब से सलाम करके लौट गया। जाते समय एक दर्द भरी दृष्टि उसने मेरी और मेरे बच्चों की ओर डाली। लगता था कि वह भी हमारे दुःख से दुःखी है। मानव-मन के कितने रंग हैं।

हम कुछ आगे बढ़े। देखा कि कुछ पुरुष, स्त्री और बच्चों का एक काफिला जा रहा है। हम भी उसके साथ आ मिले। रास्ते में एक पुरुष ने मेरे छोटे बच्चे पर दया करके उसे गोदी में उठा लिया। वह बहुत थक गया था। चलते-चलते हम एक स्थान पर पहुंचे। उसका नाम ‘बोथा’ था। वहां गुरुद्वारा था। हम सब उसीमें ठहरे। हमसे पहले वहां और कुछ आदमी थे। अंधेरे में कुछ सुझाई न देता था। प्यास के मारे जान निकल रही थी। साथ वाले आदमियों ने थोड़ा-सा पानी पिलाया। परन्तु देखते ही देखते वहां से एक-एक करके सब आदमी चले गये। किसीने हमें साथ चलने तक को नहीं कहा। हमने भी साथ वालों को ढूंढा परन्तु वहां तो हर एक को अपनी-अपनी पड़ी हुई थी। मैंने शिवदयाल से कहा, “भाई, तुम भी साथ न छोड़ देना। कहीं ठिकाने पर पहुंचा कर ही जाना।” वह बोला, “मां, मैं जब तक हूँ कभी इस दुःख में तुम्हारा और इन बच्चों का साथ नहीं छोड़ूंगा।”

मैने उससे कहा, “हमें यहां नहीं रहना चाहिए क्योंकि वे लोग गुहद्वारा जलाने के लिए प्रातःकाल ही आवेंगे। हमें कहीं आगे चलना चाहिए।” परन्तु हम कहां जायें, किस रास्ते जायें इसका हमें कुछ पता नहीं था। फिर भी वहां रहना हमने ठीक नहीं समझा। हम उठे और चल पड़े। जो रास्ता सामने दिखाई दिया उसीको हमने पकड़ा।

कुछ देर चलने के बाद थोड़ी-थोड़ी रोशनी होने लगी। हम लगातार चलते चले गये। आगे एक पहाड़ी पर चलते हुए हमें लाठियां लिये कुछ व्यक्ति दिखाई दिए। उन्होंने हमें पहाड़ी पर चढ़ने से रोका। कहने लगे, “तुम कहां जा रहे हो?” हमने चौकीदार के गांव का नाम बताया। उन्होंने कहा, “खबरदार! आगे एक कदम न रखना, सरकार का हुक्म है कि कोई इस रास्ते न जाय।” हम जहां के तहां खड़े रहे। पूछा “हम कहां जायें?” पर उन्हें इस बात से कोई मतलब नहीं था। उस समय उनकी आंखों में खून उतरा हुआ था। वे सब मुजफ्फराबाद के किसान थे। अगर वे चाहते तो हमें लाठियां मार-मार कर वहीं ढेर कर देते। पर न जाने क्यों उनका हाथ हम पर नहीं उठा। उन्होंने हमें जाने दिया। हम चढ़ाई से नीचे उतरने लगे। अब हममें एक कदम चलने की भी हिम्मत नहीं रही थी। सर्दी के कारण बच्चों का रंग मीला हो गया था, और दांत कटकटा रहे थे।

नीचे उतरकर हमें एक बूढ़ा मुसलमान मिला। मैने उससे कहा, “बाबा, अगर तुम एक घंटे के लिए हमें अपने घर ले चलो तो बड़ा उपकार होगा। ये बच्चे हाथ गर्मा लेंगे।” उसे कुछ दया आई। वह हमें अपने घर ले गया। उसका घर मुजफ्फराबाद से लगभग १० मील दूर था। वह एक गरीब किसान था। उसके मकान में अगले भाग में एक बरामदा था। कमरे में एक ओर गाय-भैंसें बंधी हुई थीं। उसीमें एक तरफ चूल्हा था। कुछ टूटे-फूटे बर्तन थे और दो-चार फटे-पुराने लिहाफ। दो एक खाटें भी थीं। एक तलवार भी खूंटो पर लटक रही थी। उसके परिवार

में दो लड़के, तीन लड़कियां और घरवाली थी। भीतर लेजाकर उसन हमें आदर से बिठाया और अपनी स्त्री से कहा, “ये हमारे मेहमान हैं, इनका अदब करना हमारा फर्ज है। देखो तो इनकी क्या हालत है? खुदा रहम करे।” बच्चे आग देखते ही चूल्हे से चिमट गये। हम सबने हाथ गर्माये। उसका लड़का मेरे बड़े लड़के का सहपाठी निकला। उसने बाप से जाकर कहा कि यह वजीर साहब का लड़का है। वे दोनों आपस में गले मिले। उस समय इन मासूम बच्चों का कैसा अजीब मिलन था। अब उसकी मां हमारे लिए खाना पकाने की चिंता में लगी। उसने चाय और मकई की रोटी बनाई। साथ ही कुछ भुट्टे भूनकर दिये, बच्चों ने चाय पी और रोटी खाई। मैंने सिर्फ भुट्टे के कुछ दाने खाये। इच्छा तो कुछ खाने की न थी पर खाये इसलिए कि मेरे दांत भी बैठ रहे थे। हमें वहां पहुंच कर इतना सुख मिला कि मैं वर्णन नहीं कर सकती।

वे खाना बनाने में लगे। मुझे पूछा, “तुम सब हमारे हाथ का पका हुआ भोजन खाओगी कि नहीं? अगर नहीं तो खुद बनाओ।” मैंने कहा कि मुझे इस बात का परहेज नहीं है; परन्तु मैं खाना नहीं खाऊंगी। बच्चे खालेंगे। उनके पास जो कुछ था सो उन्होंने निकाला, पकाया। पर गरीब की झोपड़ी में इतना कहां कि सबका पेट भर जाय। फिर भी जो टुकड़ा-टुकड़ा बच्चों के हिस्से में आया उससे उनका जीवन बना रहा, यही क्या कम था। उसके बाद उन्होंने कमरे में हमें एक खाट दी। मैं और बच्चे मुर्दों की तरह उसपर पड़ गये। शिवदयाल और ओम् जमीन पर सोये। इतने में बाहर से यह शोर सुनाई दिया कि हमलावर कहीं नजदीक आ पहुंचे हैं। मैंने उठकर शिवदयाल से कहा, “भाई, सुनो, यह तलवार सामने लटक रही है। जब वे लोग यहां आवेंगे तो तुम फौरन इन सब लड़कियों को इससे कत्ल कर देना।” लड़कियां भी बेचारी तैयार थीं। किन्तु कुदरत को कुछ और ही मंजूर था। जिसके घर में हम ठहरे हुए थे उसके पड़ोसी उसके खिलाफ हो गये।

वे उसपर दबाव डालने लगे कि वह हमें अपने यहां से निकाल दे। वह भला आदमी था। कहने लगा, “भाई घर पर आये मेहमान को मैं नहीं निकाल सकता। हमारा मजहब हमें यह नहीं सिखाता। तुम लोगों ने इस समय खुदा को भुला दिया है। याद रखो खुदा सब देख रहा है।” परन्तु उसकी कौन सुनता था। वे तो अपने आग्रह पर डटे रहे।

कुछ देर बाद घर का मालिक कहीं बाहर चला गया। तब उसके एक करीबी रिश्तेदार ने उसकी स्त्री और बच्चों से कुछ सलाह की और बन्दूक हाथ में लेकर भीतर आया। हम सब खाट से उतर कर नीचे खड़े होगये। उसने बन्दूक तानकर कहा, “यहां से निकल जाओ नहीं तो अभी फायर कर दूंगा।” यह व्यक्ति सीमा-प्रांत में पहले कहीं फौज में रह चुका था। मैंने दिल में सोचा कि अच्छा है कि यह फायर कर दे, हम बहादुरी से गोलियां खायेंगे। और उससे कहा, “तुम फायर करदो, तो अच्छा है; मैं इस समय कहां जाऊं?” हममें दस कदम चलने की भी हिम्मत नहीं थी। उसने हमें बहुत धमकाया परन्तु हमारा उत्तर यही मिला कि वह फायर करदे। कुछ देर बाद वह बोला, “अच्छा तुम और तुम्हारे बच्चे यहां रह सकते हैं किन्तु यह दो मर्द यहां नहीं रह सकते।” वह दोनों भी जाना चाहते थे क्योंकि उनको मार दिये जाने का डर था। मैंने उनसे कहा, “भाई, जाओ। मेरे लिये अपने आपको विपत्ति में न डालो। भगवान् सब अच्छा ही करेगा।” वे दोनों बच्चों को देखते हुए और आंसू बहाते हुए विवश होकर चले गये। और हम सब एक ठंडी आह भरकर खाट पर बैठे रहे। साथ लाई हुई गुप्ती ओम् अपने साथ ले गया। सारा दिन हम वहीं पड़े रहे। बच्चों को दो दिन से ेट भर खाना नहीं मिला था। बार-बार वे आहें भर रहे थे। मैंने अब बच्चों से कहा, “घबराओ मत, हिम्मत से काम लो। यह तुम्हारी परीक्षा है। देखो, मैं तुम्हें अक्सर अपनी प्राचीन संस्कृति की कहानियां सुनाया करती थी। क्या था हमारी प्राचीन संस्कृति का

आदर्श ? अपने आत्म-गौरव के लिए मौत स खेलना, बस । वही तुम्हें भी करना है ।”

गांव के सब लोग लूट-खसोट करने बाहर गये हुए थे । केवल स्त्रियां घरों में थीं । दिन भर यही कोलाहल मचा रहा कि अब यहां पहुंचे और अब वहां । फलां गांव जलाया, अमुक गांव लूटा । बेचारी स्त्रियां भय से कांप रही थीं और कबाइलियों को भरपेट कोस रही थीं । इसीमें रात हो गई । कोई सोया नहीं । घर का मालिक कहीं से थोड़ा सा आटा लाया और अपने परिचित जनों को थोड़ा-थोड़ा दे आया ।

: ४ :

मुंहबोला भाई

बारह बजे तक हम लोग बैठे रहे । बारह बजे घर की मालिकन और उसका एक रिश्तेदार भीतर आकर कहने लगे, “यहां से अभी निकल जाइये । हम तुम्हें यहां नहीं रख सकते ।” मैंने कहा, “अभी-अभी तो हमारे साथियों को निकाल दिया । अब रात के बारह बजे मैं इन बच्चों को लेकर कहां जाऊं । रातभर रहने दीजिए । सवेरे हम चले जायेंगे ।” वे कुछ सुनने को तैयार न थे । मुझे वह आदमी शरारती नज़र आ रहा था । कहने लगा, “हम तुम्हें उस ऊंची पहाड़ी पर पहुंचा देंगे जहां गर्मी के दिनों में हम मवेशी रखते हैं । वहां पत्थरों की एक कन्दरा है । उसमें तुम और बच्चे रहना । कभी-कभी हम लोग तुम्हें यहां से खाना पहुंचा देंगे ।” मुझे कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या करूं और कहां जाऊं ? जाने किन पापों का प्रायश्चित्त करना पड़ रहा है । परन्तु भगवान् भी समय-समय पर इस तरह बचाता है कि आश्चर्य से चकित रह जाना पड़ता है । वे जब हमको बहुत ही तंग करने लगे तो एक नवयुवक वहां आया और मेरी ओर

आंसू भरी आंखों से देखकर कहने लगा, “बहिन! मैं एक मामूली आदमी हूँ! क्या तुम मेरी एक बात मानोगी—मैं तुम्हें अपनी बहिन समझता हूँ और जहां तक मुझसे हो सकेगा, अपने ऊपर आपत्तियां झेलकर मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा। मेरे हृदय की आवाज़ मुझे मजबूर कर रही है कि तुम्हारी कुछ मदद करूं।” मुझे न जाने क्या सूझी। मैंने सहसा फिर फिर के डुपट्टे का आंचल फाड़ा और उसके हाथों में राखी बांधी। अंगुली से खून निकाला और उससे उसके माथे पर तिलक लगाया। उसने भी यह सब चुपचाप करने दिया। मुझे यह सब करने में एक अद्भुत सुख का अनुभव हो रहा था। मैंने उससे कहा, “भैया, यह हमारी पुरानी सभ्यता है। हुमायूँ के समय में भी यह रस्म हुई थी और भाई को बहिन का कौल निभाना पड़ा था। मैं भी तुम्हें अपना भाई समझ रही हूँ। आशा है कि तुम इस प्रतिज्ञा को निभाओगे।”

कुछ देर बाद उसने उन घरवालों से कहा, “रात भर इन्हें यहां रहने दीजिये। प्रातःकाल मैं इनको अपने घर ले जाऊंगा।” और यह कहकर वह चला गया।

उसके चले जाने के बाद हम सोये रहे।

प्रातःकाल जब मैं उठी तो मेरा मन बहुत दुःखी हो रहा था। रह-रहकर रोना आता था। मन में उठ रहा था कि उनकी (मेहताजी) जान सलामत नहीं है। पर दूसरे ही क्षण मन में विचार आया, “यह आंसू बच्चों के लिए बहुत हानिकर होंगे। उनका मन टूट जायेगा और फिर वे बहादुरी से विपत्तियों का सामना नहीं कर सकेंगे।” यह सोचकर मैंने रोना बन्द कर दिया और जाकर बच्चों के पास बैठ गई।

घर का मालिक और मालिकन कहीं बाहर चले गये थे और उनके पीछे उनके बारह वर्षीय लड़के ने हमें घर से निकाल दिया। उसने कहा “यहां से चले जाओ, हम तुम्हें यहां नहीं रहने देंगे।” हमें निकलना पड़ा। वह समय बड़ा भयानक था। मैंने सुना कि उस गांव की हिन्दू

स्त्रियों और कन्याओं ने एक मकान में अग्नि प्रज्वलित की और स्वच्छ कपड़े पहन कर मंत्र-पाठ करते हुए उसमें कूद पड़ीं । इस तरह उन्होंने हंसते-हंसते जौहर की प्रथा का अनुकरण किया । कहते हैं बाद में हमलावरों ने जलती हुई लाशें खींचकर बाहर निकालीं और उनके शरीर से जेवर उतारे । जिस समय पास के गांव में यह सब हो रहा था उसी समय उन्होंने हमें घर से निकाल दिया । मैंने बच्चों को आगे चलने को कहा और खुद उनके पीछे-पीछे चलने लगी । कहां जाऊं, यह कुछ समझ में नहीं आ रहा था । पर चलना था सो सीधे ही चल पड़ी । कुछ दूर चलकर एक पहाड़ी पर चलना पड़ा । रास्ते में चट्टान की आड़ में एक कन्दरा दीख पड़ी । बच्चों को मैंने उसके भीतर बिठाया । खुद सामने बैठ गई ।

बच्चों को कंदरा में इसलिए बिठाया कि आनेजानेवालों को लड़कियों के बारे में मालूम न हो । हम वहां लगभग २॥ घंटे ठहरे । आसपास से गोलियों की आवाज़ आरही थी किन्तु हमें कोई नहीं लगी । कुछ देर बाद रातवाला मेरा मुंहबोला भाई मुझे खोजता हुआ वहां आ पहुंचा । उसे देखते ही बच्चे खुश हुए और कहने लगे, “देखो मां, तुम्हारा भाई आगया ।” उसने पास आते ही हमें जल्दी चलने को कहा । हम सब उसके साथ ही लिये । जब हम उसके घर पहुंचे तो उसने सन्तोष की सांस ली और कहा, “सबरे मैं दोमेल हमलावरों से यह पूछने गया था कि कुछ स्त्रियों को अपने यहां रखूं या नहीं ? उन्होंने रखने की इजाजत दे दी है । अब मैं खुले तौर पर तुम्हारी मदद कर सकूंगा । पर न जाने कब कौनसी पार्टी यहां आजाय और पूछे कि ये कौन हैं तो उस समय क्या कहूंगा । क्योंकि तुम्हारी शक्ल सूरत हमसे नहीं मिलती है । मेरा विचार है कि जब वे पूछें कि यह कौन है तो मैं कहूंगा, मेरी बहिन है और इसकी शादी स्यालकोट में हुई है । क्या तुम्हें यह तजवीज़ पसंद है ? इसमें कुछ हर्ज नहीं है । लड़कियों के बचाने के लिए तुम्हें यह सब करना पड़ेगा । तुम फिकर मत करो । खुदा पर यकीन रखो । सब ठीक होगा ।”

यह सुनते समय मेरा रोम-रोम उसका धन्यवाद कर रहा था। वह भी तो मुसलमान था। उसने तत्काल हमें दूध और रोटी लाकर दी। उसके परिवार में कुल ७ सदस्य थे। दो छोटी-छोटी लड़कियाँ, विमाता, और पिता। एक विवाहित बहिन और एक छोटा भाई। एक बरामदे और दो कमरों का उसका मकान था जिसमें उसके मवेशी भी साथ-साथ ही बंधे रहते थे। उसकी आर्थिक दशा दयनीय थी पर हृदय विशाल था।

हमारे लिए उसने मवेशीवाले कमरे में एक ओर एक खाट बिछा दी। चारपाई के नीचे गोबर पर एक चटाई डाल दी गई। हम लोगों को उसी चटाई पर लेटना पड़ा। वहाँ गोबर की इतनी दुर्गन्ध थी कि दम घुटने लगता था। दूसरी ओर मन में आशंका थी कि न जाने अब क्या सलूक हो। प्यास बेहद लग रही थी। घड़ी-घड़ी गला सूखता था। सांस जोर से लेने तक की मनाही थी। इधर बच्चों को पानी पीने के कारण पेशाब ज्यादा आता था। पेशाबघर तो वहाँ था नहीं इसलिए उन्हें बार-बार बाहर जाना पड़ता था। डर था कि कोई गांववाला देख न ले।

हमलावर मुकामी मुसलमानों में यह प्रचार कर रहे थे, “मुसलमानो, तुम्हें तैयार रहना चाहिए। सिख तुम पर हमला करेंगे।” बस फिर क्या था, गांव के सभी मर्द लाठियाँ, भाले, फरसे, बछें और बन्दूकें ले-लेकर घरों के बाहर घूम रहे थे। ऐसा मालूम हो रहा था कि सबके सब राक्षस खड़े हुए हैं। मनुष्यता उनमें नाम को नहीं रही थी।

इस प्रकार यह दिन भी बीत गया। थोड़ा अंधेरा हुआ तो उन्होंने हमें उस कैदखाने से निकाला। हम बाहर बरामदे में बैठ गये। उसकी बहिन बाप के वहाँ न आने पर रोने लगी। मैंने उसे ढाढ़स बंधाते हुए कहा, “बेटी, रोने से क्या होगा, उठकर रोटी बनाओ।” ये बेचारे गुर्बत के पंजे में इतने जकड़े हुए थे कि उस समय उनके पास खाने का सामान तक न था। फसल तैयार थी पर वह सब खेतों में बिना कटे पड़ी थी। इस समय आटा कहां से आये, यह समस्या थी। बड़ी मुश्किल से कहीं से वह भाई थोड़ा सा आटा, चावल और काशीफल

लाया। काशीफल का एक हिस्सा मैंने चूल्हे की राख में भूनन को रख दिया। उनके बच्चे पूरी खुराक न मिलने के कारण बहुत कमजोर थे। भूख की ज्वाला शांत करनेके लिये वे भुट्टे भून-भून कर खाते थे।

और लोग लूटमार में व्यस्त थे किन्तु मेरा भाई इन बातों से नफरत करता था। वह सचमुच एक उच्च कोटि का व्यक्ति था। कुछ देर ठहर कर मैंने अपने बच्चों से कहा, “देखो, बिना काम किये कुछ खाना पाप है। हमें भी कुछ करना चाहिए।” यह सुनकर सुरेश और वीणा दोनों लड़कियां उसकी बहिन के साथ चक्की में आटा पीसने गईं। बाकी बच्चों ने हाथों से मकई के भुट्टे छीलने शुरू किये। मैंने शाली के कुछ बाल लिये और उसकी स्त्री से उनमें से चावल निकालने की विधि पूछी। उसने बताया, “आप इन्हें पैरों तले मसलें तो कुछ चावल निकल आवेंगे।” वह खुद भैंसों को भूसा-चारा देने गई। नंगे पैर हमने काफी सफर किया था। न जाने इस कारण या वह काम करने का तरीका न आने के कारण मेरे दोनों पैरों से खून बहने लगा। मुझे अपने आपसे घृणा होने लगी। सोचा हमने अपने आपको कितना आराम-पसन्द बना लिया है। मैं कुछ भी काम नहीं कर सकती। बच्चों को कैसे रखूंगी? कैसे मजदूरी करूंगी? यह सोचते-सोचते मेरी आंखों से आंसुओं की धारा फूट पड़ी। इतने में घर की मालिकन आई। उसे मेरे जखमी पैरों को देखकर बड़ा दुःख हुआ। आंखों में आंसू भरकर उसने कहा, “बहिन! छोड़ दो। मैं तुम्हारा यह हाल नहीं देख सकती। जब तक हम हैं तुम्हें कुछ करने की जरूरत नहीं।” मैं सिर झुकाकर एक ओर बैठ गई और आने वाले सफर के दिनों का ध्यान करने लगी। इतने में दोनों बच्चियां चक्की से आटा पीस लाईं, दोनों मुस्करा रही थीं। मेरी नजर उनके हाथों पर पड़ी, देखती क्या हूं कि दोनों के हाथों में छाले पड़े हैं। यह देखकर मैं मौन हो गई। क्या कहती कुछ कहते नहीं बना।

खाना तैयार हुआ। बच्चों ने भी खाया परन्तु इतना कम कि न खाने के बराबर था। मैंने भी जो राख में काशीफल भूना था, वह

खाया। उनके बच्चों को भी पूरी खुराक नहीं मिली। परन्तु वे प्रसन्न थे। इन गरीब किसानों में कितनी सहनशीलता होती है।

उन्होंने हमें एक खाट दी। हम सब मवेशियोंवाले कमरे में लेट गये। सारी रात लोगों में बड़ी बेचैनी रही। कुछ घंटे खाट पर बैठे-बैठे हम अपनी वर्तमान स्थिति पर विचार करते रहे। रह-रह कर बच्चे पिताजी की बात करते थे। मैं उन्हें इन बातोंका क्या उत्तर देती। थोड़ी देर के लिए मेरी आंख लग गई। मेरे सिरहाने के साथ ही एक गाय बंधी थी। उसने सोते में ही मेरे सिर के बाल चाटने और चबाने आरम्भ किये। मेरी आंख खुल गई। बालों में बड़े जोर से दर्द हो रहा था।

सवेरा हुआ। हम उठे। बच्चों को बहुत भूख लग रही थी। खाने को उनके पास कुछ नहीं था। बच्चे मकई के भुट्टों के दाने निकालने लगे। उनके हाथों में छाले पहिले ही पड़े हुए थे। अब छोटे बच्चे के हाथ से भी खून बहने लगा। वह कपड़े से खून पोंछता जाता था। मेरी नज़र उसके नन्हें हाथों पर जा पड़ी तो मैंने उसे रोकना चाहा परन्तु वह न माना और बराबर दाने निकालता रहा। मैंने उठकर उसे प्यार से समझाया, वह कहने लगा, “मां, तुमने ही तो कहा था कि काम किये बिना खाना पाप है। अब मुझे क्यों रोकती हो?” मैंने कहा, “बेटा देखो, तुम्हारे हाथों से खून बह रहा है, यह मकई के दाने भी लाल हो रहे हैं।” वह कहने लगा, “ममी, क्या हाथ भी हमें काम नहीं करने देते?” इतने में घर की मालिकन आई और बच्चे को देखकर कहने लगी, “तुम मां का दिल नहीं रखती हो, बहिन। देखो, इन सब बच्चों के हाथों में कितने छाले पड़ गये हैं।” यह कहकर उसने बच्चों को काम करने से रोका।

थोड़ी देर बाद ही एक स्त्री आई और कहन लगी, “न जाने तुम्हारे पति हैं या नहीं। अब तुम्हारा क्या होगा? चलो अब इन बच्चों को मांगने के लिए भेज दिया करो। कोई रहम खाकर कुछ दे ही देगा।

तुम्हारा काम चल जायगा । तुम कहीं बैठ जाओ तो अच्छा है, बच्चे भी बच जायंगे ।” बैठ जाने का मतलब मैं समझती थी । मैं एकदम कांप उठी परन्तु चुप रही । उस सीधी-सादी औरत को क्या मालूम कि आत्मगौरव के आगे कठिन-से-कठिन बलिदान भी कुछ कीमत नहीं रखता । वे तो पेट पालना भर जानती थी चाहे कैसे भी पले । इतने में मेरा भाई बाहर से आया साथ ही उसका बाप भी था । दोनों कुछ घबराये से थे । मैंने पूछा, “क्या बात है ?” उसका बाप कहने लगा, “पड़ौस के कुछ आदमियों ने तुम लोगों को यहां देख लिया है और कबाइलियों से जाकर कहा है कि इनके यहां कुछ हिन्दू स्त्रियां हैं । बड़ा गज़ब हुआ । अब लड़कियों का क्या होगा ? बहिन सुनो, अगर तुम बुरा न मानो तो इन लड़कियों के बचाव की एक तरकीब है सो यह कि जब ये आयें तो ये कलमा पढ़ दें और कहें कि हम मुसलमान हैं ।” बच्चों ने कहीं स्कूल में पढ़-सुनकर कलमा सीखा था । कहने लगे, “भला कलमा पढ़ने से कहीं कोई मुसलमान बनता है ?” मैंने भाई से कहा, “झूठ कभी छिपता नहीं । यह न समझो कि मैं कलमा पढ़ना नहीं चाहती । सिखाओ मुझे—मैं पढ़ती हूं । परन्तु मैं झूठ नहीं बोलूंगी । मेरे मुंह से उस समय एक शब्द भी नहीं निकलेगा । चाहे तुम कितना ही रटाओ । तुम घबराओ नहीं । भगवान् सब ठीक करेंगे ।” वह कहने लगा, “आज वे घर-घर में से छिपी हुई हिन्दू स्त्रियों को निकाल कर बुरी तरह ले जा रहे हैं । न जाने खुदा अब क्या करना चाहता है ?”

खाना चूल्हे पर धरें का धरा रह गया । डर के मारे भूख मर गई । उन लोगो को अपनी भी बड़ी चिंता थी, क्योंकि कबाइली हिन्दू स्त्रियों को ढूंढने के बहाने मुसलमानों के घरों में घुसकर उन्हें भी लूटते थे । कहीं-कहीं तो उनकी स्त्रियों का भी अपहरण करते थे । देखते-देखते चार बज गये । तभी हट्टे-कट्टे दो मुसलमान हाथों में बन्दूकें लिये वहां आ पहुंचे । उनमें एक उस गांव का नम्बरदार था दूसरा अक्सर हमारे घर शहर में दूध देने आया करता था । मैंने उसे पहचाना, पर मैं कुछ

बोली नहीं। उन्होंने आते ही गरजकर कहा, “निकालो इन्हें यहां से। कबाइली तुम लोगों को बुला रहे हैं।” हम सब घर से निकले। वे साथ आये। रास्ते में जल्दी-जल्दी चलने की डांट भी बता रहे थे। मैंने दोनों लड़कों से कहा, “बेटो ! तुम्हारी मुझे चिन्ता नहीं है। सिर्फ एक बात समझाती हूं। सुनो ! मौत से मत डरना। वह हमारी दोस्त है। अगर तुम पर कोई फायर करदे, तो छाती आगे करना। भागकर पीठ पर गोली न खाना।” दोनों एक दूसरे की तरफ देखकर कहने लगे, “हम मौत से नहीं डरते।” मैंने फिर बड़ी लड़कियों से कहा, “पुत्रियो ! समय ने हमें सब कुछ दिखाया। अभी न जाने और क्या होगा। तुम्हें सोच समझकर काम करना चाहिए। भारत की बीर बालायें समय पड़ने पर मौत से खेली हैं यह ध्यान रखना।”)

कुछ दूर चलकर वे हमें एक स्थान पर ले गये। वहां पहले से ही कई हिन्दू व सिख मर्द तथा स्त्रियां बैठी थीं। सामने दो कबाइली खड़े थे। कारतूसों की माला पहिने वे बंदूकें लिये हुए वहां पहरा दे रहे थे। हमें भी उस टोली में बिठाया गया। इतने में और कबाइली आये, उनका रूप बड़ा भयानक था। उन्होंने कुछ देर आपस में मन्त्रणा की और फिर स्थानीय मुसलमानों से बोले, “देखो, इन्हें रात भर यहीं रखो और एक बछड़ा मारो। वह इन काफिरों को खिलाओ ताकि ये सब मुसलमान बन जायें।” इतना कहकर वे चले गये और मैं भगवान् का स्मरण करने लगी, “प्रभो ! हमारी लाज तुम्हारे हाथों में है। मुझे तुमपर विश्वास है। तुम ही अन्त तक बचाने वाले हो।”

कुछ देर बाद मेरा भाई आया और कहने लगा, “बहिन ! तुम चिन्ता मत करो। जबतक मैं हूं मुझे तुम्हारी चिन्ता है।” मैंने उसे अपने वे गहने दे दिये जो मैंने घर से निकलते समय तन से उतार कर रख लिये थे। उसने उन्हें लेते हुए कहा, “यह तुम्हारी अमानत है, बहिन ! जब चाहो ले लेना।” हम बात कर ही रहे थे कि वह व्यक्ति जो नम्बरदार के साथ अभी हमारे पास आया था मेरे समीप आया। कहने लगा,

“आपने मुझे पहचाना ? मैं आपके यहां दूध बेचने आया करता था । तब आप हम लोगों के सामने बाहर नहीं आती थीं ।” मैंने कहा, “मुझे खेद है कि मैं घर से कुछ भी साथ नहीं लाई । मुझे याद है कि हमें तुम्हारे कुछ रुपये देने हैं । यह तुम्हारा ऋण हम पर रहेगा ।” वह कहने लगा, “मुझे अफसोस है कि आपकी कुछ मदद नहीं कर सकता । हमें कबाइलियों का हुक्म मानना पड़ता है । मुझे माफ करना ।”

: ५ :

इस्लाम की शिक्षा

कुछ क्षण के बाद वे दोनों कबाइली नवयुवक आये और कहने लगे, “ इन्हें हम आज दोमेल ले जायेंगे इसलिए बछड़ा न मारो ।” और फिर एक-एक स्त्री-पुरुष की बुरी तरह तलाशी होने लगी । जिसके पास पैसा सोना जो कुछ भी था वे सब छीन रहे थे । लोग भागते हुए घरों से काफी चीजें साथ ले आये थे । कई स्त्रियों ने कमीजों के बार्डरों और सिलवारों में नोट सी रखे थे, कइयों ने कमर से जेवर बांध रखे थे । जिनकी कमर से जेवर बंधे हुए मिले, उनकी सख्ती से तलाशी ली गई । जिनकी कमीजों के बार्डरों में से धन छिपा मिला, उनकी कमीजें उतरवा ली गई ।

मेरी भी बारी आई । जब एक कबाइली ने मेरी कलाई पकड़ी तो मेरे मुंह से राम निकला । उसने झटका देकर मेरी कलाई छोड़ दी और कहा, “तुम इस झूठे मजहब को छोड़ दो । सच्चा मजहब इस्लाम है । जाओ उस तरफ खड़ी हो जाओ ।” वे फिर बच्चों की तलाशी लेने लगे । एक ने बच्चों की जेबें देखीं, जब कुछ न मिला तो सबको मेरे पास खड़ा किया । इतने में मेरा भाई वहां आया । उसने कबाइलियों से कहा, “खां, इन्हें मैं घर ले जाऊंगा, इजाजत है ?” उन्होंने कहा, “ले जाओ ।”

पर साथ ही एक ने जब मेरी दो बड़ी लड़कियों को देखा तो कहा, “सबको नहीं जाना होगा।” मैं रुक गई। भाई आंखों में आंसू भर कर विदा हुआ।

तलाशी चल रही थी। जिन्होंने अच्छे कपड़े पहन हुए थे उनके कपड़े ही उतार लिये जाते थे। बच्चों के गरम कोट, पुरुषों के ‘पुलोवर’, स्त्रियों के शाल, जो चीज़ मिलती, लेकर रख देते। उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि किसी के पास वस्त्र रहा है या नहीं। भगवान् ने हमें पहले ही बुद्धि दी थी। हम घर से कुछ भी साथ लेकर नहीं चले। संयोग से हमने कपड़े भी ऐसे पहिने थे जिन्हें देखकर कोई यह नहीं जान सकता था कि हम किसी अच्छे घराने से सम्बन्ध रखते हैं।

तलाशी समाप्त हुई, तो सबको चलने का हुक्म हुआ। सब चल पड़े। आगे-आगे वे खुद चले और पीछे मेरी दोनों बड़ी लड़कियों से चलने को कहा। मुझे उनकी नीयत पर सदेह हुआ। मैंने धीरे-धीरे लड़कियों से कहा, “देखो! मौत से कभी न डरना। जब समय मिले, नदी में या पहाड़ से कूद कर जान दे देना लेकिन जीतेजी अपने खानदान पर आंच न आने देना। तुम उस भारत की सन्तान हो जहाँ स्त्रियाँ जिन्दा सती हो जाया करती थीं।” मेरी बड़ी लड़की वीणा बोली, “माताजी, तुम चिन्ता मत करो। केवल हमारे इन नन्हें भाइयों का ध्यान रखो। हमें कुछ समझाने की आवश्यकता नहीं है। हमें अपने दिल और दिमाग से काम लेने दो। (जो अपने दिल और दिमाग से काम नहीं लेता, दूसरा उसे कब तक रास्ता दिखा सकता है।)” इस चौदह साल की बच्ची के मुख से ये शब्द सुनकर मुझे अचंभा हुआ और कुछ शान्ति भी हुई। एक कबाइली ने हमें बातें करते देखकर डांटा और लड़कियों को अपने समीप पीछे-पीछे आने को कहा। मैं उन्हें अकेले आगे नहीं भेजना चाहती थी। इधर बच्चों से तेज़ चला नहीं जा रहा था। प्रातःकाल से वे भी भूखे थे परन्तु मैं लड़कियों के साथ रहने के लिए उन्हें भी अपने साथ घसीटे ले जा रही थी। उनके चेहरे मुर्झा रहे थे। मौत सामने खड़ी थी, तनिक पैर फिसल जाय तो धम से नदी में गिरने

का डर था। दूसरी ओर यदि कोई चल न सके तो उस भयानक जंगल में अकेले रह जाने का डर था। उस समय सबको अपनी-अपनी पड़ी हुई थी। न मां बच्चे की सहायता कर सकती थी और न पति पत्नी की सुध ले सकता था।

मैंने फिर कबाइलियों के पास जाकर बातें करनी आरम्भ कीं। अंधेरा हो चला था और वे सबको तेज चलने को डांट रहे थे। टोली में कई औरतें गर्भवती थीं। डर के मारे उन्हें गर्भ-वेदना हो रही थी। मैंने कबाइलियों से कहा, “मैंने सुना है कि पठान कौम बहादुर और वायदे की पक्की होती है। और बहादुर कौम स्त्रियों और मासूम बच्चों पर अत्याचार नहीं किया करती। परन्तु तुम इन मासूम बच्चों को डांट रहे हो। क्या तुमने खुदा को भुला दिया है? क्या तुम्हारा इस्लाम तुम्हें यही सिखाता है? समय का कुछ पता नहीं। अभी दो दिन पहले मेरा पति यहां का वजीर था, अब न जाने वह कहां है? मैं और ये बच्चे दर-दर की ठोकें खा रहे हैं। हमें इस जिन्दगी से अपनी इज्जत और अस्मत् बहुत प्यारी है। जहां तक होगा हम इसकी रक्षा करेंगे; मगर तुम मेरी एक बात मान लो तो मैं तुम्हारा एहसान मानूंगी, वह यह कि तुम मुझे अपने सरदार के पास ले चलो।” ये दोनों हिन्दुस्तानी समझते थे। मेरी बातें सुनकर कहने लगे, “वाकई हमारा इस्लाम यह नहीं बताता परन्तु हम क्या करें। हमें आज्ञा ही ऐसी है।” उनका दिल अब कुछ-कुछ पिघल गया था। अब वे हम सबको धीरे-धीरे चलने देने लगे। कुछ क्षण बाद वे फिर बोले, “हम कितनी दूर से यहां लड़ने के लिए आये हैं। हम अपना परिवार वहीं छोड़ आये हैं। हमारे भी मां, बाप, भाई-बहिन, हैं। अभी हमारी शादी नहीं हुई है।” मैंने कहा, “तुम परिवार वाले हो, सबका दुःख दर्द जानते हो और हो भी जाति के बहादुर पठान। तुमसे तो हम नेकी की ही आशा रखते हैं।” यह सुनकर वे एक दूसरे का मुंह ताकने लगे।

मेरी बड़ी लड़की इनके साथ-साथ चल रही थी। मैं जरा पीछे रह

गई क्योंकि मेरा बड़ा लड़का थक गया था। मैं न उसे छोड़ सकती थी और न लड़की को। पर लड़की पर मुझे भरोसा था। मैं इसी उधेड़बुन में थी कि लड़की और एक युवक लौटकर मेरे पास आये। युवक कहने लगा, “जहां आज रात हम आप लोगों को ले जा रहे हैं, वहां बड़े जुलूम हो रहे हैं परन्तु हम कसम खाकर कहते हैं कि हम तेरी और तेरे इन बच्चों की हिफाजत करेंगे। तू हमारी मां है और ये लड़कियां हमारी बहनें।” मैं हैरान थी कि यह परिवर्तन कैसे हुआ? लड़की ने उनसे क्या कहा जो वे राक्षस से देवता बन गये। अब वह धीरे-धीरे चलने लगे थे और हम सबको भी धीरे-धीरे चलने को कह रहे थे। उनमें मनुष्यता जाग उठी थी। शायद उन्हें इस्लाम की शिक्षा याद आ रही थी।

दस बजे हम दोमेल पहुंचे। वहां काश्मीर रियासत का एक जानवरों का अस्पताल था जो जलने से रह गया था। यह कृष्णगंगा के किनारे पर था। इस मकान के कमरे अच्छे बड़े-बड़े थे। इन्हीं में से एक में हम रखे गये। वहां तीन दिन से और भी हिन्दू बच्चे और स्त्रियां रखी गई थीं। कमरे में इतना अंधकार और इतनी भीड़ थी कि दम घुटता था। जैसे ही हमारी टोली कमरे में आई वैसे ही वहशी कबाइली और डोगरा रेजिमेंट के कुछ बागी मुसलमान फौजी तूफान की तरह अन्दर आये और स्त्रियों और लड़कियों को टार्चों से देख देखकर ले जाने लगे। देखते-देखते एक कोहराम मच गया। वे बालायें और स्त्रियां उनके साथ जाने से इन्कार कर रही थीं और चीख रही थीं। परन्तु पाकिस्तान के भेजे हुए मुजाहिद कब तरह खानेवाले थे। उस समय लग रहा था कि नरक यदि कहीं है तो यहीं है परन्तु इसी नरक के बीच में वे दोनों नवयुवक हमें एक कोने में ठहरा कर खुद हमारे सामने खड़े होगये। हमारे पास ही बाहर जाने का एक दरवाजा था। मैं और बच्चे यह अत्याचार देखकर सिहर उठे थे। मैं फिर भी बच्चों से कह रही थी, “राम को पुकारो, वही रक्षा करेगा।” नवयुवक कबाइली कहने

लगे, “घबराओ मत । हम तुम्हारी हिफाजत करने का वायदा कर चुके हैं । जहां तक बन पड़ेगा हम उसे पूरा करेंगे ।”

और उन्होंने उस ओर किसीको नहीं आने दिया । वहां बहुत शोर मच गया था । उसे सुनकर बाहर से उनका एक अफसर आया । उसने कहा, “थोड़ी देर के लिए सबको छोड़ दो ।” पर वे कहां मानने वाले थे ।

थोड़ी देर बाद जब वे कुछ औरतों और लड़कियों को ले गये तो उन दो नवयुवक पहरेदारों के अतिरिक्त उनका कोई और आदमी वहां नहीं रहा । तब उन्होंने हमें द्वार के पास बैठाया और स्वयं बंदूकें लेकर द्वार के बीच में बैठ गये । उसी समय पास के कमरों से लोगों की चीख-पुकार आने लगी । यहां तीन दिन से बिना अन्न-पानी के लोग बंद थे, उनमें कई व्यक्ति अपनी अन्तिम घड़ियां गिन रहे थे पर वहां कौन सुनता ? मैं यह देखकर चुप न रह सकी । मैंने अपने पहरेदारों से कहा, “भाई इन असहाय लोगों को पानी दो, खुदा तुम्हारा भला करेगा ।” सचमुच वे देवता बन गये थे । उठे और बारी-बारी घड़ों में पानी लाकर उन्हें दे आये । अंधेरे में किसे मिला किसे नहीं यह नहीं मालूम । परन्तु फिर भी कुछ व्यक्तियों के प्राण अवश्य बच गए । शेष मनुष्यता की दुहाई देते हुए इस असार संसार से कूच कर गये ।

अनेक नारियां कोनों में दुबकी हुई पड़ी थीं । उनके बच्चे रो रहे थे । उनमें से कइयों ने तो अपने सतीत्व की रक्षा के लिए अपने बच्चों तक का गला घोट दिया था । कई देवियां शौच के बहाने बाहर गई और कृष्णगंगा की गोद में सो गईं । अनेकों माताओं ने अपने जिंदा बच्चे इस नदी की भेंट कर दिये ।

यह खबरें कबाइली सरदारों के पास पहुंची । उन्हें स्त्रियों का इस तरह मरना मंजूर नहीं था, वे उन्हें घुल-घुल कर मरते देखना चाहते थे । पहरा कड़ा कर दिया गया । एक और पार्टी आ गई । वे सब पुरुषों को पकड़-पकड़ कर दूसरे कमरे में ले गये । वे निहत्थे पुरुष यह समझ रहे थे कि ये लोग हमें मारने के लिए ले जा रहे हैं । अन्तिम विदा का वह

दृश्य बड़ा करुण था। बच्चे उनसे लिपट-लिपट जाते थे, पर वहां तरस खानेवाला कौन था ?

मेरे पास दो तीन स्त्रियां बैठी थीं। एक मां-बेटी थी। बेटी गर्भवती थी और उस समय उसे प्रसव-पीड़ा हो रही थी। वे लोग उसके पति को भी ले गये। जब सब चले गये तो उन दो नवयुवकों ने दरवाजे के बाहर मेरी दो लडकियों को मुलाकर उनपर कम्बल डाल दिया। जो भी वहां से गुजरता और पूछता, “यह क्या है ?” तो वे दोनों उत्तर देते, “कुछ नहीं, सिपाही सो रहे हैं।” मैंने उनसे पूछा, “तुम खाना नहीं खाओगे ?” कहने लगे, “हमें कई-कई दिन ऐसे ही बिताने पड़ते हैं। और अगर हम यहां से चले भी जायं, तो तुम मुसीबत में फंस जाओगी।”

इतने में फिर कई कबाइली मीरपुरी और जम्मू निवासी मुसलमान बागी फौजियों के साथ टाचें हाथ में लिये वहां आये। वे भी टाचों से देखकर स्त्रियों को ले जाने लगे। फिर हाहाकार मच गया। कबाइलियों से अधिक निर्दयी वे बागी फौजी थे, उन्होंने स्त्रियों की गोद से बच्चे छीन-छीन कर नीचे पटक दिये और खुद उनकी मांओं को घसीट कर ले गये। जो नारी विरोध करती थी और कहती थी, “मुझे जान से मार डालो, मुझे ले मत जाओ, मैं नहीं जाऊंगी,” उसे कई आदमी उठाकर ले जाते थे। जिस ओर हम बैठी हुई थीं कई बार उन्होंने उस ओर आने की भी चेष्टा की पर हर बार उन दो बहादुर पठानों ने बन्दूकों के कुदों से उन्हें मारा और डांटकर कहा, “अगर तुम लोगों ने इस तरफ आंख उठाई तो तबाह हो जाओगे।”

मैं अपने मन में सोचने लगी, कब तक ये लोग इन्हें रोके रखेंगे। मुझे भी बच्चों को लेकर कृष्णगंगा की गोद में समा जाना चाहिए पर फिर सोचा, “अगर मेरे बाद एक भी बच्चा जीवित रहा तो उसकी क्या दशा होगी। मेरे पति कितने दुःखी होंगे।” साथ ही यह विचार भी मन में आता था कि जब तक भगवान् हमारी रक्षा करेंगे तब तक मैं आत्महत्या नहीं करूंगी। यदि मुझे मरना ही है तो मैं कुछ करके मरना चाहती हूँ। जिस मौत का कोई उद्देश्य नहीं, उससे मुझे नफरत थी। /

आधी रात के बाद कुछ शांति हुई। तब उन दोनों नवयुवकों ने कहा, “अब हम अपनी जगह अपने ही दूसरे दोस्तों को छोड़े जाते हैं। हम चाहते हैं कि इन लड़कियों को तुमसे कहीं अलग रखें। सुबह होते-होते यदि इनपर किसी की गज़र पड़ गई तो गज़ब हो जायगा। तुम्हें एतबार हो तो हम इन्हें अपने साथ ले जायेंगे और जब तुम किसी ठिकाने पर पहुँच जाओगी तब हम इन्हें तुम्हारे पास पहुँचा देंगे। तुम चिंता मत करो। खुदा तुम्हारी मदद करेगा।” यह कहकर वे चले गये और अपनी जगह दो बुद्धू पठानों को छोड़ गये। उन्होंने आते ही बच्चों को अपने पास से सेब, अखरोट और खुमानियां दीं। बच्चे भूखे थे, खाने लगे। मैंने इन नये पहरेदारों से कहा, “क्या तुम बता सकते हो कि यहां के जिला-अफसरों के साथ कैसा सलूक हुआ। मेरा पति उन्हींमें था। वह यहां का वजीर था।” उनमें से एक बोला, “उसकी तो हमें पहचान नहीं। पर हमें सबसे पहले अफसरों को खत्म करने का हुक्म था। हमने आते ही सबको मार डाला।” यह सुनकर मेरा सिर चकराने लगा फिर वह कहने लगा, “न जाने क्यों मेरा दिल मुझे तुम्हारी और इन बच्चों की मदद करने को मजबूर कर रहा है।” मैंने किसी तरह संभलकर कहा, “खुदा को याद करो। इस समय यहां इन्सानियत सिसक-सिसक कर दम तोड़ रही है। कौन जानता है कि हमारी सहायता के लिए खुदा ने तुम्हारे रूप में फरिश्तों को भेजा हो।” यह सुनकर वे कलमा पढ़ने लगे। मुझसे कहा, “तुम भी पढो।” मैंने कहा, “मुझे नहीं आता।” वे मुझे सिखाने लगे।

तभी बाहर से एक और गिरोह आया। कमरे में फिर वही करुण-क्रंदन शुरू हुआ। जिस ओर दरवाजे के पास हम बैठे थे उस ओर भी दो लुटेरे आये और पूछने लगे, “यहां कौन है?” तब इन दोनों पठानों ने चिल्लाकर कहा, “यहां पर मत आना। तबाह हो जाओगे।” वे लोग दूसरी राह से भीतर आकर औरतों को ले जाने लगे। मेरे पास तीन स्त्रियां और थीं। वे भी उन नेक पठानों की दया से बची रहीं। कुछ देर

बाद उन नेक पठानों ने मुझे कहा, “क्या तुम हमारे मुल्क आना पसंद करोगी ? हम तुम्हें वहां पर एक जियारत पर रखेंगे। देखो, इस मुसीबत के वक्त में खुदा तुम्हारी कितनी मदद कर रहा है।” मैंने कहा, “मैं अपना बतन छोड़कर तुम्हारे देश कैसे जा सकती हूं ? मेरा पति है, ये बच्चे हैं। अभी मेरी अवस्था जियारत पर बैठने की नहीं है।”

हम ये बातें कर ही रहे थे कि कमरे में से फिर सिसकने की और कराहने की आवाजें आने लगीं। देखा—कुछ युवतियां बाहर जा रही हैं और बिछुड़ते समय दूसरी नारियों से क्षमा मांग रही हैं। “हमारे अपराध क्षमा करना ! न जाने किन पापों का फल अब हमें मिल रहा है। हम अब जीना नहीं चाहतीं।”

सुनकर मेरा माथा ठनका। आखिर ये क्या करने जा रही हैं। पर उस समय न पूछने का समय था न कुछ करने का। मैं भोर होने की राह देखने लगी।

: ६ :

कृष्णगंगा की गोद में

पौ फटी। वे दोनों नवयुवक अपने कहे के अनुसार मेरी दोनों लड़कियों को अपने साथ ले गये। मुझे अपनी लड़कियों पर तो पूरा भरोसा था ही, पर उन बहादुर नौजवानों पर भी कम नहीं था। उन्होंने अपनी जान पर खेलकर हमें बचाया था। साथ की स्त्रियां मुझसे कहने लगीं, “क्या तुम्हें इनपर भरोसा है ?” यह सुनकर मैं हैरान रह गई। रातभर उन्होंने इनकी रक्षा की थी। वे चाहते तो उन्हें बिना रोकटोक उठाकर ले जाते। परन्तु भगवान् ने इनकी बुद्धि बदल दी थी। यही विचारकर मैंने कहा, “उनसे मुझे किसी प्रकार की आशंका नहीं है और अपनी लड़कियों पर मुझे पूरा भरोसा है। समय पड़ने पर वे जान पर खेलना जानती हैं।”

पूरी रोशनी हो जाने पर शेष सब स्त्रियों को बाहर निकाला गया। वे सब दोमेल पुल के पास, कृष्णगंगा तट पर, शौचादि के लिये ले

जायी गईं। मैं भी उनके साथ थी। मैंने वहां वह रोमांचकारी और अद्भुत दृश्य देखा जिसे मैं कभी नहीं भूल सकती। कुछ स्त्रियां किनारे पर खड़ी हुई थीं और कुछ पानी के बीच चट्टानों पर। उनमें से अनेक मातायें अपने बच्चों को नदी में फेंक रही थी। कुछ बच्चे तो निःसहाय एकाध डुबकी खाकर बह जाते थे पर कुछ तट के पास ही अपनी मांओं से चिपट जाते थे और वे मातायें अपने ही हृदय के उन टुकड़ों को फिर पानी में फेंक देती थीं। उस समय उन देवियों की आकृति बहुत भयानक हो उठी थी। उनकी आंखें सूज गई थीं और उनके चेहरे मुर्दों की भांति भावहीन, रक्तहीन और चेष्टाहीन हो रहे थे। वे यही नहीं रकीं। देखते ही देखते उन्होंने स्वयं भी नदी के तीव्र प्रवाह में छलांगें लगानी शुरू कर दीं। यह देखकर किनारे पर खड़े हुए कवाइली दौड़े पर इससे पहले वे कुछ कर सकें चट्टानों पर बैठी नारियां जोर से चीखीं और धम से नदी में कूद पड़ीं। तब कई कवाइली पुल पर बन्दूकें तानकर खड़े हो गये और उन बहती हुई लाशों पर फायर करने लगे।

मैं ठीक नहीं बता सकती कि कितनी स्त्रियां और बच्चे नदी की भेंट हो गये। इतना भर याद है कि रात को हम जितनी स्त्रियां कमरे में बची थीं उनमें से केवल मैं और वे तीन स्त्रियां जो मेरे पास बैठीं थीं नदी में नहीं कूदीं। हृदय पर पत्थर रखे संज्ञाहीन-सी मैं यह करुण दृश्य देख रही थी और यंत्रवत् सोच रही थी कि भारतीय नारी में आज भी आत्मबलिदान की इतनी प्रबल भावना वर्तमान है। अपनी मानरक्षा के लिए वह कुछ भी कर सकती है कि इतने में मेरा बारह साल का लड़का दौड़कर नदी के किनारे पहुंचा। मैंने उसे देखा और मैं उसके पीछे दौड़ी। मैंने उसे पकड़ लिया। वह बोला, “मां, मुझे छोड़ दो। मैं भी नदी में कूदकर मरना चाहता हूं। मैं यह सहन नहीं कर सकता कि कोई मेरी बहनों की तरफ आंख उठाकर भी देखे।” इतना कहते-कहते वह तेजी से आगे सरका परन्तु मैंने उसे जोर से पीछे की ओर खींचा और कहा, “तुम कायर हो। तुम बुजदिलों की तरह कुछ किये बिना

ही मरना चाहते हो! मैं तुम्हें मौत से डरने के लिए नहीं कहती; परन्तु ऐसी मौत ढूँढ़ो जो तुम्हें अमर कर दे।” पर वह शान्त नहीं हुआ, बोला, “कोई खानदानी स्त्री जिन्दा नहीं रही, सब नदी में कूदकर मर गई। जाओ मां, तुम भी इन लड़कियों समेत नदी में कूद पड़ो। हम दोनों भाइयों को छोड़ दो। नहीं तो मैं जाता हूँ। मैं यह अत्याचार नहीं देख सकता।” मैं बड़े शशोपंज में पड़ गई। क्या करूँ, न तो दोनों लड़कियाँ ही मेरे पास थीं और न मेरा मन ही मुझे आत्महत्या करने की आज्ञा देता था। मुझे यह भी विश्वास था कि चाहे कुछ भी क्यों न हो भगवान् हमारी सहायता करेगा। इसलिए मैंने उसे समझाकर कहा, “बेटा, तुम क्यों हठ कर रहे हो? मैं नदी में कैसे कूद सकती हूँ। तुम जानते हो कि यह समाचार पढ़कर तुम्हारे पापा दुःखी होंगे। कम-से-कम जब तक मुझे उनके बारे में पूरी जानकारी नहीं मिल जाती तब तक मैं कुछ नहीं कर सकती।”

इतने में एक कबाइली मेरे पास आया और कहने लगा, “तुम छलांग क्यों नहीं लगाती? लगाओ हम नहीं रोकते।” मैंने कहा, “मैं ऐसा नहीं करूँगी।” यह कहकर मैं किनारे से हटकर सड़क पर आ गई। मैंने देखा—कई कबाइलियों की आंखों से आंसू बह रहे हैं। मैं समझ गई कि यह हत्याकांड देखकर ये लोग अपने किये पर पछता रहे हैं। मेरा साहस बढ़ा और मैं बेधड़क एक टोली में जाकर कहने लगी, “अब क्यों आंसू बहाते हो? अपने किये पर पछता रहे हो न? क्या तुम ऐसी ही लड़ाई यहां लड़ने आये हो? क्या यह काम करते हुए तुम अपने आपको कामयाब समझते हो? क्या तुमने खुदा को भी भुला दिया है? याद रखो, यह खून तुम्हारे सिरों पर सवार होकर बोलेगा? तुम्हें अपने किये का फल मिलेगा।” मेरी यह बातें सुनकर साथ की स्त्रियों ने टोक कर कहा, “चुप रहो। तुम इन्हें क्या कह रही हो? अपने ऊपर मुसीबत क्यों मोल ले रही हो?” मुझे नहीं मालूम कि उनमें से कितनों ने मेरी बात समझी परन्तु एक आदमी मेरे समीप आया और बोला, “तुम जो कुछ कह रही हो ठीक कह रही हो। मुझे बताओ मैं तुम्हारी क्या

सहायता करूं ?” वह कोई ओहदेदार मालूम पड़ता था । मैं उससे क्या कहती । लड़कियों का ध्यान आया । वे कहां होंगी ? उनसे कैसे मिलूंगी ? मैं यही सोच रही थी कि वह फिर बोला, “मैं तुम्हारे साथ एक शरीफ आदमी भेजता हूं । वह आराम से तुम्हें जेल में पहुंचा आयेगा । वहां और भी बचे हुए हिन्दू बन्द हैं ।” मैंने उसे धन्यवाद दिया और बच्चों को लेकर चल पड़ी ।

जब हम जरा आगे बढ़े तो तीनों स्त्रियां भी हमारे पीछे-पीछे आईं और साथ ही कुछ लोग और भी आये जो रात को हमारे कमरे में से छांट कर अलग किये गये थे । साथवाली एक देवी को गर्भ-वेदना हो रही थी । इस कारण उसे एक कदम भी चलना दूभर हो रहा था । परन्तु ज्यों-त्यों करके रोती-चिल्लाती वह चली आ रही थी ।

हमें अब शहर की ओर जाना था । वहीं पर एक छोटी-सी पहाड़ी के आंचल में जेल थी । सारा मार्ग जले हुए मकानों के खंडहरों से भरा हुआ था । हमारे साथ दो-एक सिपाही भी आये थे । उनके पास बंदूकें थीं । वे सब लोगों से ‘पाकिस्तान जिन्दाबाद’ कहलवाते थे और जो नहीं कहता था उसे डांट देते थे ।

जो शरीफ कबाइली मेरे साथ खास तौर से आया था, उसकी आयु मुश्किल से बाईस वर्ष की थी । चलते-चलते मैं उससे ऐसे ही बातें करने लगी । मैंने पूछा, “तुम इतनी दूर यहां कैसे आये ?” वह कहने लगा, “पाकिस्तान के हुक्मरानों ने कबाइलियों में इस बात को फैला रखा है कि इस्लाम खतरे में है और रियासत में मुसलमानों पर बड़े जुल्म हो रहे हैं । हमारी बहू-बेटियां महफूज नहीं हैं ।” इसपर मैंने उसे बताया, “चार दिन पहले रियासत में सब ठीक था परन्तु तुम लोगों ने आकर यहां यह तूफान पैदा कर दिया है ।” उसने फिर वही जवाब दिया कि पठान यह नहीं सह सकते थे कि उनके होते हुए कोई उनकी बहू-बेटियों पर उंगली उठा सके । पाकिस्तान बराबर यह कह रहा है कि रियासत में हमारी मां-बहनों पर हमले हो रहे हैं । मैं क्या

कहती, कुछ क्षण बाद मैंने फिर पूछा, “क्या तुम्हें कुछ वेतन मिलता है?” वह कहने लगा, “अभी तक कुछ फैसला नहीं हुआ है। उन्होंने हमें सिर्फ यही कहा है कि हिन्दुओं को कत्ल कर दो। उनकी जो औरत या लड़की तुम्हें पसन्द आवे ले जाओ। जो माल तुम्हें मिले लूट लो। घर जला दो। हमें सिर्फ जमीन चाहिए।” मैंने कहा, “भाई, बुरा न मानना। हमने सुना था कि पठान कौम बड़ी बहादुर होती है पर जो कुछ हमने देखा वह तो कोई बुजदिल और जलील भी नहीं करेगा। तुमने अपने ईमान को भुलाकर ये सब खून किये हैं। ये तुम्हारी गर्दनो पर सवार रहेंगे।” वह बोला, “हमारे वतन से बहुत से लोग लूट-मार के लिए आये हैं। हमने सुना है कि काश्मीर में ज़र (सोना) बहुत है।” मैंने पूछा, “तुम लोग हमें जेलों में क्यों ठूस रहे हो?” वह मेरी बात का कुछ उत्तर न देते हुए कहने लगा, “मर्दों को तो हमने तकरीबन खत्म कर दिया है। जो पहले दिन इधर-उधर छिप गये थे वही थोड़े से बच गये हैं। जो औरतें बची हैं वे या तो बड़ी-बूढ़ी हैं या जल्मी हैं। हां, कुछ जवान औरतें भी जेल में कैद कर रखी हैं।”

राह चलते हमें बराबर स्थानीय मुसलमान मिलते रहे। उनमें से कुछ हमारी दशा पर दुखित थे तो कुछ खुश भी थे। कहीं-कहीं कबाइलियों की टोलियों की टोलियां दीख पड़ती थीं। कोई नंगे पैर तो कोई फटा पुराना जूता पहने। कन्धों पर बन्दूकें और गले में कारतूसों की माला लिये हुए। जहां-तहां विकराल हंसी हंसते घूम रहे थे वे। कहीं-कहीं तो वे लोग लूट के माल पर आपस में झगड़ भी रहे थे।

एक स्थान पर वे मेरे लड़के विमल और लड़की कमलेश को देखकर कहने लगे, “बच्चों की यह जोड़ी कितनी सुन्दर है। हम चाहते हैं कि इन्हें अपने साथ ले जायें।” हमारे साथ के सिपाही ने अपनी ज़बान में उनसे कुछ कहा जो हमारी समझ में नहीं आया। वे बोले, “तुम जब इन्हें जेल से छोड़ोगे तो हम वहां से इनको उठा लावेंगे।” यदि वे चाहते तो बलात् उन्हें छीनकर ले जा सकते थे पर ईश्वर जिनकी सहायता करते

हैं उनका बाल भी बांका नहीं हो सकता। वे ललचाई आंखों से बच्चों को देखते रह गये और हम आगे बढ़ गये।

अब हम उस जगह पहुंचे जहां से हमारी कोठी की दीवार नज़र आरही थी। हमने वहाँ खड़े होकर अपने उजड़े घर को देखा। यह रसोईवाला भाग था जो जलने से रह गया था। मैंने अपने साथ के सिपाही से कहा, “वह हमारा घर है।” वह बोला, “आजकल वहाँ हमारे आदमी हैं।” हमें इस स्थान से आगे जाना था। मन चाहता था कि यहीं बैठकर अपने उजड़े घर को देखते रहें, किन्तु अब उस ओर देखना अपराध था। लाचार हम आगे बढ़े। कुछ ही देर बाद जेल के फाटक पर पहुंच गये।

वहाँ पर कुछ लोग पहरा दे रहे थे। हम अन्दर भेजे गये। हमारे साथ के सिपाही ने सलाम करके हमसे विदा ली। अन्दर जाकर देखा-वहाँ औरतें, बच्चे और पुरुष भरे पड़े हैं। भीड़-की-भीड़ इकट्ठी है। अनेकों के हाथ, टांग और बाजूओं पर छः-छः सात-सात गोलियां लगी हैं जो बदन के भीतर रहने के कारण उनके लिए असह्य पीड़ा का कारण बन रही है। एक ओर नन्हे-नन्हे बच्चे चार चार दिन के भूखे-प्यासे तड़प रहे हैं। कहीं कोई अपने बच्चे को लिये रो रहा है तो कोई परिवार के लिए। किसी की लड़की छीन ली गई है इस कारण वह विलाप कर रहा है। अनेक नवयुवतियों ने अपने चेहरों पर सूरत बिगाड़ने के लिए गोबर, मिट्टी और कीचड़ मल रखी है। यह दृश्य देखकर मुझे कंपकपी आने लगी पर तभी मैंने वहाँ शिवदयाल और ओमप्रकाश को देखा। वे हमारे पास आये और हमें एक कमरे में ले गये। कमरा क्या वह नरक-कुंड था।

वजीर साहब का बलिदान

मैं कमरे में एक ओर एक टूटी चारपाई पर बच्चों को लेकर बैठ गई। बैठते ही मैंने शिवदयाल और ओमप्रकाश से मेहता साहब के बारे में पूछा। उनके साथ जेल का भूतपूर्व दारोगा था। वह बोला, “माताजी, क्या कहूं। कुछ कहते नहीं बनता। मेहता साहब को तो पहले दिन ही.....।”

क्षण भर में मैं सब कुछ समझ गई। मेरी आंखों के आगे अंधेरा छा गया। सारा बदन कांपने लगा। ऐसा मालूम होने लगा कि मेरे प्राण अभी निकल जायेंगे। पांच मिनट तक मेरी ऐसी ही दशा रही। फिर मैंने अपने आप को संभाला और उससे पूछा, “क्या तुम पूरा हाल बता सकते हो?” इसपर ओम् बोला, “मैं उस समय वहीं पर था पर मैंने जानबूझ कर आपसे नहीं कहा। मैं जानता था कि आप यह सुनकर आपसे बाहर हो जायेंगी। क्या ताज्जुब कि आप उस वक्त बच्चों को लेकर कोठी में आजातीं या आग में कूद पड़तीं। आप जरूर कुछ-न-कुछ कर गुजरतीं और ये बच्चे बरबाद हो जाते। यदि आप कहीं बची भी रहतीं तब भी आपकी हिम्मत टूट जाती। सोचिए आप इतनी मुसीबतें कैसे सहन कर पातीं।” मैंने रोते हुए कहा, “तुमने यह क्या किया। उन्होंने तो वतन के लिये अपने को मिटा दिया, पर मैंने क्या किया। मैंने यह प्रण कर रखा था कि जीते-जी कभी उनका साथ न छोड़ूंगी। तुम अगर उस समय मुझसे कह देते तो मैं कोठी में जाकर बच्चों समेत वहीं स्वाहा हो जाती। पर अब मैं क्या कर सकती हूं। पास में मौत का कोई साधन नहीं। लड़कियां भी अभी तक नहीं आई हैं।” मुझे इस प्रकार विलाप करते देख वह बोला, “मैं कसम खाकर कहता हूं कि जब आप मर जायेंगी तब मैं उसी जगह जहां वजीर साहब का संस्कार हुआ है, आपका भी संस्कार कर दूंगा। चाहे इसके लिये

मुझे कितना भी कष्ट क्यों न उठाना पड़े।” भोला ओम् शायद यह समझ रहा था कि यह खबर सुनते ही मेरे प्राण पखेरू उड़ जायेंगे। काश कि ऐंझा हो पाता परन्तु अभी तो मुझे बहुत कुछ करना और देखना शेष था। मैंने कहा, “इस समय मौत भी हमसे नफरत करती है, वह हमारे पास नहीं फटकती। अच्छा, लेकिन तुम यह तो बताओ कि यह सब कैसे हुआ?” यह सुनकर दारोगा बोला, “बाहर सब लोगों में वजीर साहब के बलिदान की चर्चा है। उन्होंने बड़ी बहादुरी से सच्चाई पर जान दी है। आप ओम् से पूछिए।” दारोगा कहता गया, “जब वजीर साहब अपनी कोठी से बाहर निकले तो वे सुपरिन्टेंडेंट पुलिस, सब-इन्सपेक्टर पुलिस और तेईस पुलिस के सिपाहियों को साथ लेकर हाई स्कूल की ओर गये जहां कुछ दिन पहले एक तोप गाड़ कर रखी गई थी। वहां नौ डोगरे सिपाही नियत थे। पर वे भाग आये थे। सबने मेहता साहब को वहां जाने से रोका पर उन्होंने एक न मुनी और चल दिए। वहां कोई सिपाही नहीं था। हां, कुछ वहीं के मुसलमान जमा हो गये थे। वे वजीर साहब से कहने लगे, ‘तूने कभी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा है। हमें तेरी शराफत का लिहाज है। हम चाहते हैं कि तू अपनी जान यूँही न गंवा। इस समय तू कुछ नहीं कर सकता। पाकिस्तानी हजारों की गिनती में आये हैं। तेरे साथ हम वायदा करते हैं कि कहीं-न-कहीं छिपाकर हम तुझे बचायेंगे।’ परन्तु उन्होंने किसी की बात न मानी बल्कि उनसे कहा, ‘तुम्हारे मुल्क पर मुसीबत आई है इसे मिलकर बचाओ। तुम लोग उल्टा मुझे छिपने के लिए कह रहे हो। चलो जहां पुलिस है वहां जाकर हम मोर्चा लगावें,’ पर वहां उनकी कौन सुनता था। उन्होंने पुकार-पुकार कर सबको मुकाबले के लिए लाना चाहा पर सब लोग, यहां तक कि पुलिस के सिपाही भी, तितर-बितर होगये। कुछ थोड़े से आदमी उनके साथ वहां आये जहां पुलिस ग्रुप था। वहां भी किसी ने मोर्चा नहीं बनाया। जब वहां उनकी कोई मानने वाला

ही न था तब वह क्या करते ? विवश होकर उन्होंने कहा, 'मैंने मुकाबला करने की बहुत कोशिश की पर कोई सुनता ही नहीं है । सबको अपनी-अपनी पड़ी है । अब मैं तुम्हें नहीं बचा सकता । मैं अब घर जाता हूँ । वहाँ जाना भी मेरा फर्ज है ।' लोगों ने कहा, 'तुम्हारे घर में बहुत से कबाइली घुस गये हैं वहाँ मत जाओ ।' पर वह कब माननेवाले थे । वह अपनी कोठी की तरफ आये । साथ में एक राजपूत पुलिस सब-इन्स्पेक्टर था । वह फाटक के बाहर रहा और वजीर साहब भीतर गये ।" इतना कहने के बाद वह चुप होगया । उसका गला भर आया, कहने लगा, "आगे का हाल ओम् से पूछिये ।" मैंने मशीन की तरह ओम् की ओर देखा । वह भी रो रहा था । उसने रूंधे कंठ से कहा, " जब मेहता साहब अंदर आये, तब मैं बाथरूम में छिपा हुआ था । मैंने उन्हें खिड़की के शीशे में से भीतर आते देखा । उनकी नज़र मुझपर पड़ी, पूछा, 'ओम्, तुम्हारी माताजी कहां हैं ?' मैंने उन्हें हाथ से ज़ियारत की ओर इशारा किया । मेरे इशारे का मतलब समझ कर पुलिस अफसर तो पीछे वापिस मुड़ गया परन्तु वे वैसे ही खड़े रहे । मुझसे कहने लगे, 'तुम्हारी माताजी क्यों भागी ? यह भागने का नहीं बलिदान का समय था । मैं घर इसीलिए आया था कि सब मिलकर मौत को गले लगायेंगे ।' मैंने धीरे से कहा, 'आप यहां से चले जाइये । अन्दर साठ कबाइली हैं ।' परन्तु वे वहीं डटे रहे ।" यह कहते हुए ओम् बच्चों की तरह रोने लगा । मैंने उससे कहा, "ओम्, वे जानते थे कि मौत की साथिन मौत ही है और कोई नहीं । मैं बुज्दिल थी जो भाग आई । अब उसका फल भुगत रही हूँ । अच्छा, आगे क्या हुआ ?" वह बोला, " इतने में कबाइली बाहर निकल आये । वजीर साहब को देखकर सबने बन्दूकें तान लीं और कहा, 'काफ़र, पाकिस्तान मंजूर करो और अपने सर से हैट उतारो ।' वे चुप रहे । फिर वे कहने लगे 'बता तू हिन्दू है या मुसलमान ।' फिर भी वे चुप रहे । इतने में हमारे

पड़ौस का एक मुसलमान वहां आया और वजीर साहब से कहने लगा, “साहब, कह दो मैं मुसलमान हूं, बच जाओगे। तुम्हारे छोटे-छोटे बच्चे हैं। क्यों अपनी जान से हाथ धोते हो?” इतने में कबाइलियों ने फिर पूछा, “तुम हिन्दू हो या मुसलमान?” उस बार वजीर साहब ने कहा, “मैं हिन्दू हूं, मुसलमान नहीं।” बस फिर क्या था। सबने बन्दूकें तान लीं। एक.....दो.....तीन..... फायर पर फायर हुए। छाती आगे किये वे मुंह से राम.....राम कहते गये। बीथी गोली लगने पर वे नीचे गिर पड़े। मैं यह हत्याकांड देखकर भागा-भागा तुम्हारे पास आया। मुझे उस समय कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था, तभी तो मैं उस समय रो रहा था।” वह चुप हो गया। मैंने यंत्रवत् फिर पूछा, “तुम्हें इससे आगे का कुछ हाल मालूम है?” वह बोला, “शिवदयाल को मालूम है।” मैंने शिवदयाल से पूछा, “कहो शिवदयाल, उस शव का क्या हुआ? वह कहां है?” वह कहने लगा, “मेरे साथ का दूसरा साथी रामचंद्र आपकी कोठी के रास्ते से ही भागा था। रास्ते में उसने वजीर साहब की लाश पड़ी देखी। वह वहीं खड़ा होगया। उसी समय वहां पड़ौस का एक मुसलमान आया। उन दोनों ने लाश को उठाकर आपकी कोठी के सोने के कमरे में रखा और उनके पांव की चप्पल खोल दी। बाद में कोठी को आग लगाई गई तो शव का दाह-संस्कार भी वहीं होगया। मैंने बहुत से मुसलमानों से सुना है कि जब कबाइली उन्हें मारकर बाहर आये तो कहते थे, “कि आज हमने एक डोगरा जवान मारा है। उसकी बहादुरी हमें देर तक याद रहेगी। हमें उसे ज़िंदा गिरफ्तार करने का आर्डर था पर उसने ऐसे जवाब दिये कि हमें गुस्सा आगया और हमने फायर करके उसे खत्म कर दिया।” मैंने पूछा, “क्या उन्हें मालूम था कि वे यहां के वजीर हैं?” शिवदयाल बोला, “वे तो उनका इम्तहान ले रहे थे। वरना वे लोग जानते थे कि वे वजीर हैं और यह उनका मकान है।” यह सुनकर मेरी आंखों से रुके हुए आंसू फिर फूट पड़े परन्तु शीघ्र ही मैं

संभली और बोली, “मुझे खुशी है कि उन्होंने अपना फर्ज पूरा किया। सचमुच उन्हें छिपना शोभा नहीं देता। वे शुरू से ही सच्चाई के पुजारी थे, अंत में भी उन्होंने सत्य को ही बरा और उसके लिए अपने प्राण तक दे दिये।” मैंने बच्चों से भी कहा, “बेटा, देखो तुम्हारे पापा की कैसी शानदार मौत हुई। यह सबक तुम्हें भी सीखना है। सुनो, मुझे तब खुशी होगी जब हम सब उन्हींकी तरह अपना फर्ज निभाते हुए हंसते-हंसते अपना बलिदान कर देंगे। तुम खुश-नसीब बच्चे हो। तुम्हारा बाप बहादुर था।” तब हम सबने प्रण किया कि हम ऐसा कोई काम नहीं करेंगे जिससे उनके पवित्र नाम पर धब्बा लगे या जिससे उनकी आत्मा को दुःख पहुंचे। उस समय मैं पागल की तरह उन्हें उपदेश दे रही थी। क्या वे मासूम बच्चे मेरी बात को पूरी तरह समझते थे? मैं हृदय का बोझ हलका कर रही थी। रोक नहीं बल्कि उनकी वीरता की बातें याद करके। जब आदमी को चारों ओर से बहुत सी मुसीबतें घेर लेती हैं तब आप ही आप उसका धैर्य बंध जाता है। मेरे साथ भी यही हुआ परन्तु जैसे-जैसे समय बीत रहा था लड़कियों के लिए मेरी चिंता बढ़ती जा रही थी।

∴ ∴ ∴

मेरी दुर्बलता और मेरी शक्ति

जिस जेल में हम बन्दी थे उसमें बराबर तीन दिन से ला-लाकर व्यक्ति बन्द किये जा रहे थे। तीसरे दिन उन्हें कुछ गोश्त-रोटी दी गई। वह किसी-किसी ने खाई। कइयों ने तो उसे लेने से इंकार कर दिया। उनके लिये राशन का प्रबन्ध हो रहा था। अनेक स्त्री-पुरुष पास के खेतों में जाकर कमाद (गन्ने) तोड़ लेते थे और उन्हींसे अपना पेट भर लेते थे। वह एक अद्भुत दृश्य था, स्त्रियां रोती भी जाती थीं और खाती भी जाती थीं।

अचानक वहां हलचल मच गई। मेरे पूछने पर साथ की स्त्रियां कहने

लगीं, “देखो, वे पाकिस्तानी आ रहे हैं। ये लोग दिन के समय कमरों में घूम-घूम कर स्त्रियों को पसन्द करते हैं फिर रात को लेजाते हैं। तीन दिन से यहां पर यही हो रहा है। बाप के देखते बेटा को, पति के देखते पत्नी को उठा लिया जाता है। मांओं की कोखों से बच्चे फेंक दिये जाते हैं। तंग आकर कई स्त्रियां ज़हर खाकर मर गईं। कइयों ने खिड़कियों के शीशों का चूर्ण खाकर प्राण देने का प्रयत्न किया और अभी वे पूरी तरह मर भी नहीं पाई थीं कि उनके मां-बाप उन्हें कृष्णगंगा में फेंक आये। कई नारियां स्वयं नदी में कूद पड़ीं पर पाकिस्तानी उनमें से कुछ को निकाल लाये और अब उन्हें तंग करते हैं :”

इतने में कुछ व्यक्ति हमारे कमरे में आये और चारों तरफ घूर-घूर कर देखने लगे। उन्हें देख कर औरतों के होश उड़ गये। वे आपस में कहने लगीं, “न जाने अब किसको ले जायेंगे।” पाकिस्तानियों ने कुछ हिन्दू चुने थे और उन्हें राशन आदि के काम पर लगाया गया। खाने-पीने में लोग इस तरह व्यस्त थे कि जान पड़ता था संसार में पेट की ज्वाला से तीव्र और कोई ज्वाला नहीं।

शिवदयाल और ओम् भी कहीं से गन्ने और भुट्टे ले आये। बच्चों को दो दिन से कुछ नहीं मिला था। वे खाने लगे। मैंने चार दिन से सिवाय भुने हुए काशीफल के एक टुकड़े और कुछ मक्की के दानों के और कुछ नहीं खाया था। दो दिन से पानी तक नहीं पिया था। खाने की कुछ इच्छा भी नहीं थी। मैंने ऊपर से चाहे कितनी ही हिम्मत बांध रखी थी परन्तु भीतर से उनके वियोग में मेरा हृदय टूक-टूक हो गया था। जीवन फीका-सा लग रहा था। मन इसी दुविधा में था कि मैंने उस समय घरसे निकल कर अच्छा किया या बुरा। कहीं मैंने उनके साथ धोखा तो नहीं किया। अगर वे स्वप्न में एक बार भी यह कह दें कि मैं निर्दोष हूं, मैंने जो कुछ किया अच्छा किया, तो मुझे बड़ी शान्ति मिले। फिर सोचती उन्होंने तो अपना कर्तव्य पूरा किया। उनके बलिदान के कारण मेरा मस्तक सदा गौरव से ऊंचा रहेगा। अब

मेरा कर्तव्य है कि चाहे मुझे कितनी ही कठिनाइयां क्यों न झेलनी पड़ें मैं रोकर या कायर बनकर उनके बलिदान को कलंकित न करूं। और कभी बच्चों के सामने भीरुता की बातें न कहूं। यदि मैं इन्हें प्रोत्साहित करती रही तो शायद एक दिन इनका नाम भी उज्ज्वल होगा। मुसीबत इन्हें अच्छे-बुरे का भेद समझा देगी।

मैं जेल में मुश्किल से ३ घंटे बैठी हूंगी कि इतने में एक युवक चमनलाल मेरे पास आया और कहने लगा, “जो, वजीर साहब से हमारे संबंध बहुत अच्छे थे पर अब ईश्वर को जो मंजूर था वह हो गया। मैं आपसे इस समय एक विशेष बात कहने आया हूं। आपकी कोठी में पाकिस्तानियों के दो सरदार ठहरे हैं। उनके पास कुछ फौज भी है। इस समय मुजफ्फराबाद का सब प्रबन्ध इन्हीं के हाथ में है। इन्हीं-में से एक सरदार ने आपको बुलाने के लिए अपना भाई भेजा है। आप चलिये।” यह सुनकर मुझे न जाने क्या हुआ। अच्छे-बुरे का ज्ञान जाता रहा। मैंने अपने बालों से धीरे-धीरे एक लाल रेशम की डोरी, जो शादी के समय सुसरालवालों से मिली थी, खींची। मैंने नज़र बचा कर इसे अपने गले में डाला और इतने जोर से खींचा कि मैं बेहोश होकर गिर पड़ी। अचेत होते ही मेरे दांत बैठ गये, आंखें पथरा गईं पर मैं मरी नहीं। बच्चे और ओम् मेरी यह दशा देखकर बिलख-बिलख कर रोने लगे। कोई मुंह पर पानी छिड़कने लगा, कोई मेरे हाथ पैर मसलने लगा। चमन को कुछ शक हुआ। उसने मेरे सर के दुपट्टे को सरकाया तो देखा कि गले में फांसी है। जल्दी से उसने गांठ खोल दी। कुछ क्षण बाद मुझे होश तो आगया परन्तु कमजोरी बहुत महसूस होने लगी। उस क्षण मैंने सोचा, इस समय मौत भी मुझे अपने पास नहीं बुलाती, वह भी मुझसे नफरत करती है, पर दूसरे ही क्षण एक विचार बिजली की तरह मेरे मन में कौंध गया—हैं! तूने यह क्या किया—तू तो कई बार पति के सामने यह दावा करती थी कि अगर स्त्री में शक्ति है, तो हजारों आदमियों को उसके आगे झुकना पड़ेगा। वे यह सुनकर हंस देते थे।

आज मेरे उसी दावे की परीक्षा हो रही थी पर मैं डर गई। यह विचार मन में आते ही मैं सहसा उठ खड़ी हुई और चमन से बोली, “कहां है सरदार का भाई? उसे जल्दी बुलाओ।” फांसी से दम घुटने के कारण मेरे चेहरे का रंग बदल गया था। ऊपर का हिस्सा कुछ सफेद और नीचे का कुछ नीला-सा धब्बेदार हो गया था। कुछ मिनट बाद चमन दो आदमियों को अन्दर लाया। आते ही उन्होंने सलाम किया और कहा, “आपको हमारे सरदार याद कर रहे हैं।” मैंने कहा, “मैं सबके साथ चलने को तैयार हूं।”

और मैं सबको साथ लेकर पहली बार अपने उजड़े सदन को देखने चल पड़ी। मन में न भय था न सोच। उसी रास्ते पर जहां हम कभी बड़ी शान से चला करते थे आज नंगे पैर और फटे हाल जा रहे थे। मनुष्य-जीवन भी क्या है। कभी अंश पर कभी फर्श पर!!! हम कोठी पहुंचे। वह जलकर राख हो गई थी। केवल रसोईघर और मेहमानों के कुछ कमरे बचे हुए थे। कई कबाइली बन्दूकों लिए इधर-उधर घूम रहे थे। बाहर के मैदान में उनका सरदार भी इधर-उधर घूम रहा था। लगभग पचास वर्ष का वह कबाइली शिलवार-कमीज पहने पिस्तौल और कारतूसों से सुसज्जित था।

हम पहुंचे तो हमारे साथ का आदमी पहले सूचना देने के लिए उसके पास गया। सरदार ने हमें आने की आज्ञा दी। मैंने उसके पास जाकर कहा, “सरदार, फकीर की सलाम।” उसने मेरी तरफ देखते हुए कहा, “यह आप क्या कह रही है। मुझे वजीर साहब के मरने का अफसोस है। वह एक शेरदिल इन्सान था।” वह यह कह ही रहा था कि मैंने किसी अज्ञात प्रेरणावश उसकी बात काटते हुए कहा, “खां, तुम किसके लिए खेद प्रकट कर रहे हो? क्या वे कायर थे? क्या उन्होंने भय के कारण धर्म से मुंह मोड़ा? खेद तो तब होता जब वे झुक जाते या चार दिन की जिंदगी के लिए अपना कर्त्तव्य भूल जाते। मैं एक खुश नसीब स्त्री हूं क्योंकि मेरे देवता ने कर्त्तव्य का पालन किया है। उस

दिन में अपने आपको और भी खुशनसीब मानूंगी जिस दिन मेरे दोनों पुत्र अपने पिता की तरह हंसते हुए वतन की भेंट हो जायेंगे। अगर तुम्हारा इस्लाम तुम्हें आज्ञा देता है तो अपने इन आदमियों से इनपर फायर करने को कहो। तुम देखोगे कि ये भी अपने पिता की तरह अपनी छातियों पर गोलियां खाना जानते हैं।” यह कहकर मैंने दोनों को आगे किया और उनसे कहा, “बेटा! मौत के स्वागत के लिए तैयार हो जाओ। दिखाओ इन्हें कि वीर लोग कैसे अपनी छाती पर गोलियां खाते हैं।” दोनों लड़के सामने आये। आंखें बंद कर वे छाती तान कर खड़े होगये और कहने लगे, “खां, अपने आदमियों को आज्ञा दो कि वे हमपर वार करें।”

बच्चों की हिम्मत देखकर सब दंग रह गये। जो आदमी हमारे सामने खड़ा था वह बंदूक नीचे करके बच्चों के पास आया। उसने मेरे बड़े लड़के को बड़े प्यार से छाती से लगा लिया। यह देखकर सब उपस्थित व्यक्तियों की आंखों से आंसू झरने लगे। खान खुद भी बहुत रोया, और कहने लगा, “बहन ! तुम खुशनसीब हो। खुदा तुम्हारे बच्चों को सलामत रखे। एक दिन मुल्क में इनका नाम रोशन होगा। कितने बेखौफ हैं ये मासूम बच्चे ! तुमने इनके दिलों पर क्या जादू कर दिया है ? इन चार दिनों में हमने ऐसा कोई भी इन्सान नहीं देखा जो हमारे सामने इनकी तरह तनकर खड़ा हुआ हो।” मैंने कहा, “मैं कुछ नहीं जानती कि यह सब क्या है। पर मैंने शुरू से ही बच्चों को फर्ज पूरा करना सिखाया है। हम सब मर मिटेंगे किन्तु फर्ज से मुंह नहीं मोड़ेंगे।” वह बोला, “सुनो बहन, आज भी तुम हमारी वैसी वजीरानी हो जैसे अपने मालिक के जीते जी थीं। हमारे दिल में तुम्हारी इज्जत है। हम यह कमरे तुम्हारे लिए खाली किये देते हैं, तुम यहां आराम से रहो। तुम्हारी बच्चियां कहां हैं, यह हमें मालूम है। हम अभी उन्हें तुम्हारे पास मंगवा देते हैं। यहां से कुछ दूरी पर यहीं का एक मुसलमान खानदान रहता है। वहां हमारा एक आदमी किसी काम से गया था। वहीं वे दोनों लड़कियां उसने देखीं। उसने उनसे पूछा कि तुम किसकी लड़कियां हो। उन्होंने जवाब दिया

कि वजीर साहब की। साथ ही कहा कि हमें दो कबाइली यहां छोड़ गये हैं और घरवालों को हमें अच्छी तरह रखने की हिदायत कर गये हैं। वे अब तक नहीं आये, हम उनकी इंतज़ार में हैं। इसपर मेरे आदमी ने उनसे पूछा, 'क्या तुम्हें उनपर भरोसा है?' लड़कियों ने जवाब दिया, 'हां, उन्होंने अबतक हमारे साथ जैसा वर्ताव किया है उसे देखकर हमें उनपर पूरा भरोसा है। वे सवरे हमें हमारी मां के पास से ले आये थे। पहिले वे हमें एक घर में ले गये। घरवालों से पूछा कि वहां कबाइली तो नहीं आते। 'आते हैं' ऐसा जवाब पाते ही हमें वे दूसरे घर में ले गये, वहां भी ठीक जगह न देखकर वे हमें यहां तीसरी जगह लाकर रख गये हैं। हमारे आदमी ने उनसे पूछा, 'क्या तुम्हें यकीन है कि तुम्हारी मां जेल में है?' उन्होंने कहा, 'हां! उन दोनों ने हमें ऐसा ही बताया था।' फिर मेरे आदमी ने तुम्हारी पहचान के लिए निशानी पूछी। उन्होंने वह बताई। तब उस आदमी ने उन्हें साथ आने को कहा पर वे नहीं मानीं, कहने लगीं 'जबतक हमारी मां हमें हुक्म न देगी तब तक हम तुम्हारे साथ नहीं आ सकेंगी।' यह सब बातें उसने मुझे आकर कहीं। तब मैंने जेल में तुम्हारी तलाश करवाई। अब मैं अपने आदमी को उन्हें यहां लाने के लिए भेज रहा हूं पर साथ में तुम्हारी कोई निशानी चाहिए ताकि उन्हें तुम्हारे हुक्म का यकीन हो।" मैंने वैसा ही किया और वह आदमी मेरी लड़कियों को लेने को चला गया।

: ६ :

वे पवित्र फूल

मेरे धैर्य की एक और परीक्षा हुई। मैं अपने शयनगृह की ओर गई। वहां उनका दाह संस्कार हुआ था। वह कमरा सारा जल गया था और वह सुन्दर शरीर भी, जो चार दिन पहले अच्छी हालत में था, उसीके

साथ जलकर राख होगया था। ऊपर से छत के गिरने के कारण फूल द्वार तक फैले पड़े थे। मैं यह सब देखकर दीवानी-सी हो चली। मैंने द्वार पर जाते ही कहा, “धन्य हो प्रभु ! तुमने मेरी यह प्रतिज्ञा भी पूरी की।” सब लोग देख रहे थे। मैंने उनसे कहा, “मुझे रोकना मत। मैं शव संस्कार की अन्तिम रस्म पूरी करना चाहती हूँ।” इसपर उन्होंने प्रश्न किया “क्या तुम्हें यकीन है कि यह तुम्हारे मालिक की ही लाश है ?” मैंने उसी उन्माद में उत्तर दिया, “हां, मेरा हाथ दूसरों के फूलों को नहीं छू सकता।” एक व्यक्ति ने फिर मेरी परीक्षा लेनी चाही। कहने लगा, “मुनो उनकी लाश को हमने भंगियों से नीचे फिकवा दिया था।” मैंने उसे उत्तर दिया, “नहीं, तुम झूठ बोल रहे हो। मुझे धोखा मत दो। ये मेरे पति के फूल हैं, देखो ! मुझे इनमें से सुगन्धि आरही है।”

इसके बाद उन्होंने कुछ नहीं कहा। मैंने अपनी चुनरिया फाड़ी। उसमें सब फूल बांधे। तब बाहर आई। वहां खान था। लड़कियां भी उतनी देर में आ गई थीं। मैंने उन्हें देखकर यूँही आवेश में आकर कहा, “तुम कायर हो। मैं समझी थी, कि तुम खत्म हो चुकी होगी पर तुम अभी तक जिंदा हो।” लड़कियों ने उत्तर दिया, “मां, अगर हमपर कोई आफत आती तो तुम कभी हमें जिंदा न पाती। यदि कभी समय आया तो तुम देख लेना मां ! कि तुम्हारी लड़कियां हंसते-हंसते प्राण देना जानती हैं।” खान का आदमी बोला, “तुम किस्मतवाली हो, तुम्हारी बेटियां हर तरह से महफूज हैं। इनकी हिम्मत मैंने तभी देख ली थी जब तुम्हारे हुक्म के बिना इन्होंने आने से इन्कार कर दिया था।”

यह बातें समाप्त होते ही दोनों लड़कियां पिता के विषय में पूछने लगीं। मैंने कपड़े में बंधे हुए फूल दिखाकर कहा, “ये हैं तुम्हारे पापा।” वे रोने लगीं। मैंने रोने की मनाही करते हुए कहा, “देखो ऐसे शानदार बलिदान पर रोकर इसकी शान न घटाओ।” और तो सब चुप होगये पर मुदेश बहुत रोई। मैंने उसके पास जाकर धीरे-धीरे कहा, “सुन मुदेश, यह रोने का अवसर नहीं है। और यह एक

दिन का रोना नहीं है। यह तो जन्म भर का रोना है किन्तु जिन लोगोंने उन्हें मारा है, उनके सामने मत रोओ।” यह सुनकर वह भी चुप होगई।

अपनी गोद में गठरी रखे में वहीं मैदान में बैठ गई और हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगी, “हे सर्व शक्तिमान ! तुम्हारी अमानत मैं खुशी से तुम्हें देती हूं। मुझे शक्ति दो कि यह यातना मैं सहन करूं। मुझे प्रसन्नता है कि उन्होंने अपने कर्त्तव्य का पालन किया, भागे नहीं, यही उनकी शोभा थी। इसी प्रकार, हे भगवान् ! परीक्षा चाहे कितनी कठिन लेना लेकिन मुझे धैर्यहीन न करना। नाथ, मुझे बल दो कि मैं भी अपने कर्त्तव्य का पालन करूं।” यह सब मैं उच्च स्वर से कह रही थी और वे सब लोग सुन रहे थे, आंखें फाड़-फाड़ कर देख रहे थे। शायद वे मुझे पगली समझ रहे थे।

सरदार ने हमारे लिये कमरे खाली करने की आज्ञा दी। तीन कमरे खाली हुए। रसोई घर में हमारे जो बर्तन थे, वे हमें दे दिये गये। खाने-पीने की सब सामग्री मिली। बिस्तरे लाकर मेरे सामने रख दिये गये। मैंने उनसे कहा, “कृपाकर मेरे सामने से यह सब सामान हटा लो। आज मैं इन चीजों में से किसी को भी हाथ नहीं लगाऊंगी। उनकी पवित्र देह के अवशेष मेरे हाथ में हैं। जबतक इनको ठिकाने न लगा दूं, इन लूट की वस्तुओं को मैं नहीं छुऊंगी। उन्हें ऐसी वस्तुओं से बड़ी नफरत थी।” उन्होंने सब चीजें उठाकर कमरे में रख दीं।

तभी मुझे याद आया कि यहां के जंगल के डी. एफ. ओ. संतराम मोदी की पत्नी भी जेल में है। मैं उसे बचपन से जानती थी और उसे मौसी कहती थी। वह बड़ी शरीफ और सीधी-सादी स्त्री थी। मैंने सरदार से कहा, “मेरी मौसी जेल में है, कृपाकर उसे भी यहां बुलवा दीजिए।”

थोड़ी देर में कुछ आदमी उसे एक घास की बुनी हुई खाट पर ले आये। उसके साथ उसका एक नौकर और मोदीजी के दफ्तर के एक क्लर्क की लड़की कमला थी। इस लड़की की आयु मेरी बड़ी लड़की जितनी थी।

वे आदमी मौसी को कमरे में ले आये । उसके कपड़े रक्त से लाल थे । उसके पेट में गोली लगी थी, उसीसे रक्त बह रहा था । खांसी उसे जोरों की थी । सांस बड़ी मुश्किल से ले सकती थी । मैंने पास जाकर उससे उसके पति, लड़के और साथव्वली लड़की के पिता आदि के बारे में पूछा । उसने कमला के बारे में कहा, “इसका बाप इसे मेरे हवाले कर गया था । सुना है कि वह मारा गया है । वह एक काश्मीरी पंडित था ।”

अब हम सब मिलकर बारह व्यक्ति होगये। मान बच्चे और पांच बड़े । सबको जोरों की भूख लग रही थी । मैंने ओम् आदि को भोजन बनाने के लिये विवश किया । कहा, “उठो, भोजन बनाओ । जब तक दुनिया में जीना है सब कुछ करना है ।” वे उठे, सबने मिलकर भोजन बनाया । आज बच्चों को चार दिन बाद भग्पेट खाना मिला था परन्तु श्रीमती मोदी और मैंने कुछ नहीं खाया ।

सरदार ने अपना डेरा पास ही डाक्टर की कोठी के बच्चे-खुचे कमरों में लगाया परन्तु उनके आने जानेवाले सिपाहियों और कबाइलियों की रसोई हमारी कोठी में ही होती रही । जब सरदार जाने लगा तो कमरे के बाहर खड़े होकर उसने हमसे पूछा, “बहन ! किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो बताओ ।” मैंने उसको धन्यवाद दिया । वह कहने लगा, “रात को यहां अकेले रहना अच्छा नहीं है । हम बाहर दो सिपाहियों का पहरा लगा रहे हैं ।”

रात हुई तो सब बच्चे बिस्तरे बिछाकर सो गये । बेचारों को कई दिन के बाद आराम की नीद नसीब हुई थी । वे भूल गये कि उनपर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा है । मैं रात भर गोदी में फूल लिए बैठी रही और ईश-वंदना करती रही । कभी-कभी मुझे ऐसा भ्रम होता कि मेरी गोदी में फूल हिल रहे हैं ।

सवेरे सब उठे । मैंने दोनों लड़कों से कहा, “तुम्हें कृष्णगंगा में फूल विसर्जित करने दोमेल जाना होगा । इसी कारण तुम्हारे पापा ने तुम्हारा

यज्ञोपवीत किया था।" मैंने शिवदयाल से भी उनके साथ जाने को कहा। वे बोले, "माताजी, हम जाते तो हैं पर तुम जानती हो कि हिन्दुओं को देखते ही वे मार देते हैं। हां, अगर खान हमारे साथ सिपाही कर दे तो काम बन, सकता है।" मैंने बड़े लड़के को खान के पास भेजा। सरदार ने अपनी मोटर दी। दोनों लड़के और शिवदयाल एक सिपाही को साथ लेकर मोटर पर दोमेल गये। कैसी अजीब सी बात है कि जिन लोगों ने वजीर साहब को मौत के घाट उतारा वे ही उनके फूलों के विसर्जनार्थ मोटर दे गये।

घंटे भर बाद वे उन फूलों को संगम पर विसर्जित करके लौट आये। कुछ देर बाद दोनों सरदार भी आये और बाहर खड़े-खड़े उन्होंने कहा, "तुम बेफिकर होकर रहो। अब कोई डर नहीं है। खुदा तुम्हारा मददगार है। हम अब मोर्चे पर जा रहे हैं, शाम को लौट आवेंगे। हमारे लिए दुआ कीजिए कि हमें कामयाबी मिले।" मैंने कहा, "भगवान् तुम्हें नेक कामों में लगाये, मेरा यही आशीर्वाद है। परन्तु मैं आपसे पूछती हूं कि क्या किसी देश पर विजय प्राप्त करने का यही तरीका है कि वहां की जनता को मार, घरबार जला, स्त्रियों पर अनाचार कर और अन्याय का डंका बजाते हुये आगे बढ़ो ? क्षमा करना, यह गड़ढा जिन्होंने खोदा है, वे खुद उसमें गिरेंगे। आखिर हम सब ईश्वर की संतान हैं। हमें भले-बुरे की पहचान करनी चाहिए।" बातें कड़वी थीं पर वे क्रुद्ध नहीं हुए। उन्होंने बड़ी शांति से जवाब दिया, "अब तक जो हुआ सो हुआ, पर अब सब ठीक होगा।" और वे चले गये।

: १० :

फिर उजड़े सदन में

दस बज गये थे। मैं स्नान करना चाहती थी परन्तु मेरे पास बदलने के लिए दूसरा कपड़ा न था। तन पर के कपड़ों से दुर्गन्ध आ रही

थी। अचानक मुझे याद आया कि कुछ दिन पहले एक स्थानीय धोबी के पास हमारे कपड़े गये थे। शायद वह दे दे इस आशा से मैंने एक सिपाही के साथ शिवदयाल को वहां भेजा। परन्तु धोबी ने यह कहकर कि उसके सब कपड़े लूट लिए गये हैं, इंकार कर दिया। जब उन लोगों ने बहुत कहा तो उसने एक धोती और एक जंपर दिया। मैंने स्नान किया। साबुन तो था नहीं, आटा मला। उसीसे सिर के बाल धोये। स्नान के बाद मुझे कमजोरी कुछ अधिक प्रतीत होने लगी। पांच दिन से भोजन नहीं किया था। ऐसा लगता था कि गश खाकर गिर पड़ूंगी। मेरी यह हालत देखकर श्रीमती मोदी का नौकर जोधा खाना पकाने लगा।

मैं सोचने लगी, जिन्होंने मेरे पति को मारा, क्या अब मुझे उन्हीं के यहां भोजन करना पड़ेगा। मैं कितनी पापिन हूं। मुझे अपने आपसे घृणा होने लगी। बहुत सोच-विचार के बाद मैंने बच्चों को समझाना शुरू किया, “मैं जानती हूं कि मुफ्त का खाना अच्छा नहीं है। इसलिये सरदार से कहकर कोई छोटा-मोटा काम तुम्हें दिला दूंगी जिससे हमारे मनमें भी यह भाव रहे कि हम हक का खा रहे हैं। यद्यपि हमने सब कुछ गंवा दिया है किन्तु आत्मगौरव नहीं गंवाया है। तुम किसी की धौंस न सहना। कोई कुछ पूछे तो सही उत्तर देना। यदि तुम सत्य पर अड़े रहे और योद्धाओं की भांति विपत्तियों का सामना किया तो तुम्हारा देश तुम पर गर्व करेगा।”

इतने में भोजन बन गया। जोधा खाने का अनुरोध करने लगा। हमारी इच्छा तो नहीं थी किन्तु कमजोरी के कारण ऐसा लग रहा था कि खाये बिना रहना मुश्किल है। यह सोचकर हम दोनों ने भोजन किया। किन्तु साथ ही जन्म भर दिन में एक ही बार अन्न खाने का व्रत लिया।

उस दिन बहुत से स्थानीय मुसलमान वहां आकर वजीर साहब के निधन पर शोक प्रकट करने लगे। मुझे यह बुरा लगा। मैंने उन्हें ऐसा करने की मनाही की। इसपर वे लोग उनकी बातें सुनाने लगे। एक बोला, “हम उस दिन उन्हें शहर में इधर-उधर घूमते हुए देखते रहे।

उन्होंने बहुत चाहा कि कहीं इतला दें पर कुछ हो न पाया। कितनी ही बार हमने उनसे छिप जाने को कहा पर वे एक न माने। उनकी बहादुरी की मौत की चर्चा सबकी ज़बान पर है।”

उसके बाद जो भी मेरे पास आता शोक प्रकट न कर उनके बलिदान की सराहना करता था।

कबाइलियों का लंगर अभी हमारी कोठी की रसोईशाला में ही था। वहां टोलियों-की-टोलिया कबाइली आते रहते थे और हमें खिड़कियों में से घूर-घूर कर देखते थे। पहरदारों के मना करने पर भी वे नहीं मानते थे। कभी-कभी तो कोई क्रुद्ध होकर कह देता, “मशरिकी पंजाब में सिक्खों ने हमारी बहनों पर जो जुल्म किये हैं, उसका बदला हम यहां इनसे ले रहे हैं।” मैं उत्तर देती, “क्या वहां का बदला यहां लेना इन्साफ है?” परन्तु उन्होंने मेरी इस बात पर कभी कोई ध्यान नहीं दिया।

उस रात श्रीमती मां दी को जोर की खांसी आई, साथ ही बुखार भी चढ़ा। कई दिन से उसे ऐसा ही हो रहा था। उसका घाव बहुत गहरा था। कमला के पैर में भी गोली लगी थी किन्तु उसका घाव अधिक गहरा नहीं था। प्रातःकाल वे दोनों सरदार आये। कहने लगे “बहन ! अगर आप एवटाबाद जाकर रहें तो ज्यादा अच्छा है। वहां आपको किसी तरह की तकलीफ नहीं होगी। हम आपको वहां एक कोठी देंगे। बच्चों की पढ़ाई का इन्तजाम भी हो जायगा। जब आपका लड़का बड़ा होगा तो उसे पिता की जगह मिलेगी। ये बच्चे एक दिन बड़े लायक बनेंगे और आपके दिन फिरेंगे।” मैंने उत्तर दिया, “मैं अभी कहीं नहीं जाऊंगी। वहीं रहूंगी जहां मेरे पति मुझे छोड़ गये हैं। हां, मेरी एक बात मानिए—उन स्त्रियों पर जो जेल में हैं आप कृपा कीजिए।” वे बोले, “हमने शहर के सब लोग जेल से निकालकर घरों में बसा दिये हैं।” मैंने फिर कहा, “हमें भी कोई काम दीजिये ताकि हम मेहनत की कमाई खायें। क्या मैं दुःखी लोगों की देखभाल कर सकती हूं?” वह कहने लगे, “नहीं, अभी आप आराम कीजिये। यह काम

आपके करने लायक नहीं है।” और वे दोनों चले गये। जाते समय वे रसोई से होकर गये और वहां के लोगों से कह गये, “देखो ! भाई, मुर्गा बगैरह बनाना हो, बनाना पर गाय का गोश्त तब तक न बनाना जब तक ये यहां हैं। अगर तुमने इनका दिल दुखाया तो अच्छा न होगा।”

मैंने उनके आदमी से श्रीमती मोदी के लिए डाक्टर बुलाने को कहा। उस समय वहां कोई डाक्टर नहीं था। केवल दो काश्मीरी कम्पाउण्डर जीते बचे थे। वे उन्हीं को ले आये। उन्होंने श्रीमती मोदी और कमला के घावों पर दवाई लगाई।

इधर जब मेरे मुंहबोले भाई को मेरा हाल मालूम हुआ तो वह और उसका बाप दोनों मुझसे मिलने के लिए आये। भाई ने ईश्वर को बहुत धन्यवाद दिया और कहा, “आपपर खुदा की बड़ी महरवानी है, बहन ! जब उस दिन मैं आपके पास था तो मेरे पीछे मेरे घर में से कबाइलियों ने तलाशी लेते हुए मेरी औरत के सब जेवर-कपड़े छीन लिये। लेकिन आपके जेवर मेरे घर में मौजूद हैं। वह आपकी अमानत है। कल मैं उन्हें साथ लेता आऊंगा।” मैंने उत्तर दिया, “मैंने तो तुम्हें दे दिये हैं।” वह कसम खाकर बोला, “मैं उनमें से एक भी न लूंगा। तुम्हीं उन्हें अपने पाम रखो। किसी समय इन बच्चों के काम आवेंगे।” अब और क्या कहती, बोली, “अच्छा कल ला देना। जब कभी अपने देश जाऊंगी तब तुम्हारे लिए जो कुछ भी भेज सकूंगी, भेजूंगी।” वह चला गया।

सुरेश खान के आदमियों के साथ फिरता रहता था। एक दिन बाहर से आकर पूछने लगा—“मा ! हमारी क्या जाति है ?” मैंने कहा, “तुम्हें तो मालूम है। हम वैश्य-महाजन हैं।” “देखो माताजी,” वह बोला, “ये लोग मुझसे मेरी जाति पूछ रहे थे। मैंने बता दिया कि हम महाजन हैं। इसपर वे आपस में कहने लगे, ‘महाजन कौम बड़ी बहादुर होती है। यह लड़का ज़रा भी नहीं डरता। इसके पापा ने भी बड़ी बहादुरी से गोलियां खाईं।’ पर मां, तुम तो कहती थी राजपूत लोग बहादुर होते हैं।” मैंने उत्तर दिया, “हां, बेटा राजपूत

तो बहादुर होते ही हैं, पर और जातियों में से भी ऐसे लोग निकल आते हैं जो उस कौम की शान बढ़ाते हैं।” फिर वह मेरी आंखों की ओर एकटक देखने लगा। मैंने दूसरी ओर मुंह फेरा तो वह भी उधर देखने लगा। मैंने कहा, “सुरेश बेटा ! तुम यह क्या कर रहे हो ?” वह बोला, “मां ! मुझे अपनी आंखों की ओर देखने दो।” मैंने आश्चर्य से पूछा, “क्यों क्या बात है ?” वह कहने लगा, “जो व्यक्ति हमें जेल में बुलाने आया था वह सरदार का भाई है। वह मुझसे कह रहा था कि तुम्हारी मां कोई साधारण स्त्री नहीं है। हम उसकी आंखों की तरफ नहीं देख सकते। ऐसा लगता है कि उसकी आंखों में आग है। मां, तुम्हारी आंखों में मैं वही आग खोज रहा हूँ। पर मुझे तो कुछ दिखाई नहीं देता।” मुझे बड़ा अजीब-सा लगा, मैंने उसे समझाया, “बेटा, बात यह है कि जब वे मेरे पास आते हैं तो मैं उन्हें उनके अत्याचारों की याद दिलाती हूँ। उन्हें अपने पापों का भान होता है। गायद उन्हें मेरी आंखों में अपनी पापमूर्ति दिखाई देती है। वैसे आग कभी किसी की आंखों में नहीं होती।” मैं अभी उससे बात कर ही रही थी कि हमारे तीन साथी बाहर से घबराये हुए आये और कहने लगे, “माताजी ! बारामूले तक तो ये लोग पहुंच चुके हैं। बड़ी सख्त लड़ाई हो रही है। कहते हैं कि एक-दो दिन में श्रीनगर पहुंच जायेंगे।” मैंने कहा, “चाहे लाख यत्न करें, ये लोग कभी श्रीनगर नहीं पहुंच सकते।” वे तीनों हसने लगे, “आप इन्हें क्या समझ रही हैं ? बस दो दिन और लगेंगे।

उसके बाद जब वे दोनों सरदार आये तो उनके साथ दो पाकिस्तानी अफसर भी थे। उनमें एक हमारे जिले की पुलिस का कप्तान था। वह जाति का पठान था। दूसरा था, रहमदाद खां, जिसे लोग हज़ारा जिले का ‘एक्स्ट्रा कमिश्नर’ कहते थे। दोनों ने आते ही द्वार पर खड़े होकर सलाम किया। फिर रहमदाद खां बोला “मुझे आप लोगों के इस हाल पर और वजीर साहब की मौत पर

अफसोस है।” मैंने सदा की तरह उत्तर दिया, “क्या कभी योद्धाओं की मौत पर शोक प्रकट किया जाता है ? आप भी ऐसा न करें। मुझे अपनी हालत पर ज़रा भी दुःख नहीं है। मुझे तो आपसे एक बात कहनी है। आप निहत्थों पर विशेषकर स्त्रियों पर अत्याचार क्यों करते हैं ? आप तो पठान हैं।” इसपर कप्तान बोला, “अब बहादुरों की तरह लड़ाई होगी और आलमगीर लड़ाई होगी। एक तरफ हवाई जहाज़ होंगे, दूसरी तरफ बंदूकें। हम दुनिया को बता देंगे कि बहादुर कैसे लड़ते हैं।” रहमदादखां कहने लगा, “मैंने इन बच्चों की हिम्मत की बातें सुनीं हैं। खुदा इन्हें बचाये। एक दिन इनका नाम रौशन होगा। पठान बहादुरों की इज्जत करते हैं। बहन, मैं तुम्हारी हिम्मत देखकर बहुत खुश हूँ। पठान तुम्हें बहन कह चुका है। वह इस रिश्ते को आखिर तक निभायेगा। तुम यहां खुशी से रहो। जो होना था सो होगया। अब यहां का वज़ीर तुम्हारी देखभाल करेगा। वह तुम्हारे लिए राशन का और हर चीज़ का इन्तिजाम करेगा।” मैंने कहा, “तुमने मुझे बहन कहा है। अब बहन की एक प्रार्थना भी सुन लो। शहर में जो अत्याचार हो रहे हैं, उन्हें ईश्वर के लिए बंद करवा दो।” “मैं सब ठीक कर दूंगा,” वह बोला, “अब किसी किस्म का जुल्म नहीं होगा।”

कप्तान-पुलिस ने मुझसे पूछा, “यहां के कप्तान का क्या हुआ ?” मैंने कहा, “उसका परिवार यहां नहीं था।” वह बोला, “हां, इस हमले से तीन दिन पहले मैं यहां आया था। सबसे मिलकर गया था। काश्मीर से भी कई अफसर आये थे। उन सबसे भी मिला था।” यह कहकर वह अपनी विजय पर मुस्कराया। मैंने दिल-ही-दिल में कहा, “आप तो यहां का हाल-चाल देखने आये थे पर यहां का शासक विभाग लम्बी करवट सोया था।”

कुछ दिनों के बाद फिर आने की बात कहकर वे दोनों चले गये। जिस कप्तान पुलिस का यह जिक्र कर रहे थे वह मेहता साहब के साथ ही घर से निकला था और किसी दोस्त के यहां छिप

गया था। पाकिस्तानियों ने उसे ढूँढ़ निकाला और दोमेल डाकबंगले के पास जब वह नदी पर पानी पीने जा रहा था, गोली से मार दिया। इसी तरह और अनेक अफसरों को उन्होंने मौत के घाट उतार दिया था। वहाँ का तहसीलदार पंडित ताराचंद कहीं छिप गया था। नये शासकों ने उसे खोज निकाला और मुकामी वजीर बनाया। सुना जाता था कि उन्हें काश्मीरी पंडितों से रिआयत करने की हिदायत है। नये प्रबंध ने कई मुसलमानों को भी छोटी-छोटी नौकरियों पर नियुक्त कर दिया था। रिटायर्ड फौजी मुसलमानों में वे यह अपील करते थे कि रुपये में से चार आने हमें सहायता दो। जब वे इसपर भी राजी नहीं होते थे तो फिर बार-बार 'इस्लाम खतरे में है' का नारा लगाकर उन्हें मजहब के नाम पर उभारते थे।

: ११ :

मुसलमान भी डरने लगे

इस प्रकार दिन व्यतीत हो रहे थे। हर समय खतरा बना रहता था क्योंकि इन लोगों का कोई भरोसा नहीं था। कोई भी आकर कुछ कर सकता था। पर जब वे मेरे पास आते तो शायद रहमदादखां के डर के कारण अदब से पेश आते थे।

एक दिन अनायास ही मेरे मुँह से एक बात निकली, काश कि उनका एक फोटो ही बचा होता। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब आध घंटा बाद हाथ में एक फोटो लिए सुरेश दौड़ा-दौड़ा मेरे पास आया। मैंने देखा वह नेगेटिव सहित उनका फोटो था। पूछा, "यह तुम्हें कहां मिला?" वह बोला, "मैं बाहर मैदान में घूम रहा था। फूलों की उस झाड़ी के नीचे मैंने कुछ चमकती चीज़ देखी। पास गया तो ये मिले।"

हमें राशन की बड़ी तकलीफ थी। जो कुछ वहाँ मिलता था वह काफी नहीं था। ऐसी अवस्था में एक दिन रहमदादखां ने दो मन आटे

की एक बोरी, कुछ घी, दाल और चाय आदि भिजवाई । पति के हत्यारों से मुफ्त की चीजें लेते मुझे अपार वेदना होती थी परन्तु न लेती तो बच्चे क्या खाते ! फिर रहमदाद खां मुझे बहन कह चुका था । मुझे वे चीजें लेनी पड़ें । रहमदाद खां के कारण हर अफसर हमसे कुशल-मंगल पूछ जाता था । एक दिन नया वजीर, भूतपूर्व माल अफसर और नायब तहसीलदार (जो अब तहसीलदार बनाया गया था) ये सब हमारे पास आये । माल अफसर और तहसीलदार दोनों काश्मीरी मुसलमान थे । उन्होंने मुझसे संवेदना प्रकट की और अपनी दशा पर दुःख प्रकट करते हुए वे बोले, “हम तो यहां जोते जी नरक भोग रहे हैं । इससे तो मरना ही भला ।” उनकी बातों से मैंने जाना कि अफसर बनने पर भी उन्हें अवश्य कुछ तकलीफ है । मैंने भी उन्हें सान्त्वना दी, कहा, “कल की चिंता मत करो । जो भगवान् करेगा अच्छा ही करेगा । अपना फर्ज अदा करते जाओ । मुझे ही देखो, सिवाय भगवान् के मेरा और कौन है ? लड़कियों के साथ इन लोगों में रह रही हूं । सिर तलवार की धार के नीचे है पर घबराती नहीं हूं । मुझे कायरता से चिढ़ है ।” वे बोले, “अब तक आपने जो कुछ किया वह सब हम सुन चुके हैं । ये लोग तुम्हारी बड़ी इज्जत करते हैं । रहमदाद खां ने सबको तुम्हारी देखभाल करने को कहा है ।” रहमदाद खां ने एक डाक्टर और कम्पाउण्डर को भी श्रीमती मोदी के इलाज के लिए भेजा । ये दोनों फौजी पठान थे, देखने आये और दवाई देकर चले गये ।

बच्चे वैसे तो ठीक चल रहे थे पर सबसे छोटा बच्चा सवेरे उठकर खाने के लिए कुछ मांगता था । मैं उसके लिए रात की बासी रोटी रख छोड़ती थी । वह बहुत सख्त बन जाती थी । चबाते-चबाते एक दिन उसके गले में दर्द होने लगा । वह कहने लगा, “मां, यह रोटी चबाई नहीं जाती । गले में लगती है ।” यह कहते-कहते उसकी आंखों से आंसू झरने लगे । मुझे भी दुःख हुआ पर मैंने उसे समझाते हुए कहा, “बेटा तू तो हर समय कहा करता है कि मैं वीर बनूंगा । क्या यही तेरी वीरता

है ? तुझे तो सूखी रोटी खाने को मिल जाती है पर तेरे हजारों भाई-बहन इसके एक-एक टुकड़े के लिए तरसते रहते हैं ।” चार दिन बाद वह बोला, “मा, अब मुझे यह रोटी बिस्कुट की जैसी लग रही है ।”

एक दिन विमल को जोर का बुखार आगया । दो दिन तक उतरा ही नहीं । बच्चा भूख और बुखार से छटपटा रहा था । मेरे पास दूध या दवा मंगाने के लिए भी पैसे न थे । बस केवल ईश्वर का भरोसा था । मैं हर समय उसीसे प्रार्थना करती रहती थी । इतनाक से एक दिन मरदार रहमदाद खां वहां आया । बच्चे को तड़पता देखकर वह दस रुपये दूध के लिए देने लगा । जब मैंने रुपये देखे तो मैं सिर से पैर तक कांप उठी, सोचा “क्या अब इनसे रुपये भी लेने होंगे ?” मुझे इस असमजम में देखकर उसने ठंडो आह भरी और बोला, “बहन ! मैं तुम्हारी तकलीफ समझता हूं परन्तु इन्सान वही है जो हालात के मुताबिक अपने को बदल ले । क्या तुम मुझे भाई नहीं समझती ? अगर समझती हो तो लो । अगर तुम्हारे वालिद या भाई तुम्हे कोई चीज देते तो क्या तुम न लेती ?” उसने रुपये विमल के हाथ में थमा दिये और मुझमें कहा, “बहन ! मैं बारामूला जा रहा हूं । वहां भी तुम्हें याद रखूंगा । वहां से आने पर तुम्हारा सब इन्तिजाम ठीक करूंगा ।”

उस समय बारमूले में घोर युद्ध हो रहा था । उसके कुछ दिनों बाद अचानक हमारे यहां से सरदारों का लंगर बंद होगया । कोई पहरा नहीं रहा । अब वे दो सरदार भी दिखाई नहीं देते थे । केवल हम ही हम उस उजड़े मकान में रह गए । कुछ समय में नहीं आता था—क्या बात है ? इधर कवाइली शहर के चंद पुनर्वासित हिन्दुओं को फिर लूटने और तंग करने लगे । शहर में बेचैनी फैल गई । अब स्थानीय मुसलमान भी इनसे तंग आगए थे । वे पाकिस्तानी चाल समझ गए थे । उनमें से कुछ लोग हिन्दुओं से कहने लगे, “जब वे लोग तुम्हारी लड़कियां लगे तो हम उनके मुकाबले में तुम्हारा साथ देंगे ।” वास्तव में उन्हें हिन्दुस्तानी फौज के मुकाबले पर आने का पता लग

चुका था। वे डर रहे थे कि अगर हमने हिन्दुओं का साथ न दिया तो न जाने हिन्दुस्तानी फौज हमारे साथ कैसा सलूक करे! अपने बचाव का उन्हें यही उपाय सूझा।

एक दिन चमनलाल आकर मुझसे कहने लगा, “आप यहां न रहें, यह जगह सड़क के पास है। सुन रहे हैं कि ये लोग पीछे हट रहे हैं। मुजफ्फराबाद में इस समय मुकामी निवासियों और कुछ मामूली अपसरों के अलावा और कोई नहीं है। हारकर पीछे हटते समय ये लोग लूट-मार कर रहे हैं। आप हमारे घर चलिए।”

मैंने कहा, “दो दिन बाद सोचकर जवाब दूंगी।”

: १२ :

ये नेक इन्सान

आखिर हिन्दुस्तानी लड़ाके जहाज आकाश में मंडराने लगे। उनके प्रतिदिन नगर के ऊपर उड़ान करते समय हमें लगता था कि वे हमारी कोठी पर चक्कर लगाते हैं। दोमेल पर बम गिरने की दिल दहला देनेवाली आवाज से सभी चौक उठते थे। लगता था कि हमारी छत अभी गिरी। कबाइलियों ने हवाई जहाज का नाम ‘खुदा का बच्चा’ रखा हुआ था। इससे वे लोग बहुत घबराते थे। हम बहुत चाहते थे कि उन्हें कुछ संकेत करें किन्तु कैसे करें, यह नहीं जानते थे।

एक दिन हम सन्ध्या के समय तेल का दिया जलाये बैठे थे। यह असाधारण-सी बात थी क्योंकि अक्सर हम अंधेरे में ही बैठ करते थे। तभी दस-बीस पाकिस्तानी फौजी हमारे अहाते में आये। हमने उनकी पदचाप सुनते ही दिया बुझा दिया। यह देखकर वे बिगड़ उठे। मैंने बैठे-बैठे ही उनसे कहा, “देखो भाई, हमारा इसमें क्या दोष है? आप ही बताइये, हमारे पास इतना तेल कहां है जो दिया जलाये रखें। अगर आपको जरूरत हो तो जलाये देते हैं। क्या मैं दरवाजा खोलूं?” यह सुनकर वे ठंडे पड़

गये और कहने लगे, “नहीं, हमें कुछ नहीं, चाहिये। सिर्फ यह पूछना है कि यहां जो फौजी लंगर था, वह कहां गया?” मैंने कहा, “कई दिन से उनका कोई पता नहीं है।”

“अच्छा, तो हम जाते हैं।”—यह कहकर वे चले गये। उनके इस तरह जाने से सबको आश्चर्य हुआ।

इन्हीं दिनों नगर में भी एक दिन बड़ा कोलाहल मचा। बात यह थी कि पाकिस्तानी लोग लड़कियों को घरों से निकाल निकाल कर ले जाने लगे थे। उस समय कई शरीफ मुसलमानों ने हिन्दुओं का साथ दिया। अगर वे कहीं शुरू से ही इस प्रकार साथ देते तो क्या मजाल कि किसीका बाल भी बांका होता। फिर भी उनमें से बहुत-से आदमी इस हत्याकाण्ड के विरुद्ध थे, पर उनकी कौन सुनता था। ऐसी अवस्था में श्रीमती मोदी मुझसे कहने लगी, “तुम्हारा बेमतलब का हठ मुझे अच्छा नहीं लगता। कौन जानता है इन लड़कियों पर कब क्या आफत आजाए।” उसकी बातें सुनकर मैं भी घबरा गई और चमनलाल के घर सामान लेजाने की अनुमति देदी। सामान लेकर वे तीनों आदमी चले ही थे कि रास्ते में पुलिस का अधिकारी उन्हें मिल गया। उसने पूछा, “कहां जा रहे हो?” वे बोले, “किसीके घर रहेंगे। माताजी कहती हैं कि इस उजाड़ में रहना अच्छा नहीं।” इसपर पुलिसवाले ने कहा, “नहीं, माताजी से कहो, कि हम उन्हें कहीं नहीं जाने देंगे। उनकी त्रिफाजत की जिम्मेदारी हमपर है। मैं रात को पहरा लगवा दूंगा।” वे विस्तरा लेकर वापिस लौटे और मुझे सारी बात मुनाई। रात भर देखते रहे, कोई पहरेदार नहीं आया। मुबह सुना कि जहां हम जा रहे थे वहां से कवाइलियों ने उसी रात लड़कियां छीन लीं और सामान लूट लिया। उस मकान में कई हिन्दू परिवार रह रहे थे। जब मैंने यह सुना तो मेरे मन में पक्का विश्वास होगया कि दिव्य शक्ति हमारी रक्षा कर रही है। बाद में हमने उस पुलिस अफसर को कभी नहीं देखा। हमने वे तीन-चार दिन बहुत बेचैनी और घबराहट में काटे।

बाद में खबर आई कि हिन्दुस्तानी बहादुरों ने शत्रुओं से बारामूला

छीन लिया है। कबाइलियों के पैर उखड़ गये। पाकिस्तानी सेना के अधिकारी उन्हें पीट-पीट कर, जबर्दस्ती मोर्चे पर जाने को विवश करने लगे पर वे हजारों की संख्या में वापस भागे। लौटते समय रास्ते में जो कुछ मिलता था वही वे लूट कर ले जाते थे। हमने यहां तक सुना कि उनकी जेबों में बहुत से कटे हाथ और कान देखे गये। बात यह थी कि भागते हुए उनके पास इतना समय नहीं था कि वे तसल्ली से गहने उतारते इसलिये वे तलवार से गहनों समेत कान और हाथ काट लेते थे। इस बीभत्स दृश्य से मुजफ्फराबाद वासी बहुत आतंकित हुए।

हमें अब अपनी कोठी में आये सतरह दिन होचुके थे। एक रोज हमें दिन के चार बजे हृदय-द्रावक चीख-पुकार सुनाई दी। उसे सुनकर श्रीमती मोदी कहने लगी, “मालूम होता है, लुटेरे भारी संख्या में लड़कियां ले जा रहे हैं। न जाने अब हमारी इन मासूम बच्चियों का क्या होगा?” मैंने भी घबराहट में कहा, “अब क्या करूं? नदी पास होती तो हम सब उसमें डूब मरतीं। अब ये रोज-रोज की कठिनाइयां नहीं सही जातीं।” मैं यह कह ही रही थी कि कोठी के सामने से आवाज आई, “बहन जी, लड़कियों को साथ लेकर जल्दी आइये। देखो, ये जालिम लुटेरे स्त्रियों और मासूम लड़कियों को लिये जा रहे हैं।” मैं हैरान थी कि यह कौन बुला रहा है। सिर उठाकर देखा तो पास की मसजिद का मौलवी आवाज दे रहा था। मैं उसे विशेष रूप से नहीं जानती थी। श्रीमती मोदी पहिले तो अनजान मुसलमान पर विश्वास न करने को कहने लगीं, पर जब मैंने उसे यकीन दिलाया कि हम वहां पर सुरक्षित रहेंगे तो वह मान गई और हम सब शीघ्रता से मौलवी के घर पहुंचे। मौलवी ने बताया, “मैं घर में बैठा हुआ था। जब चीख-पुकार सुनी तो मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मुझे आपके घर की तरफ धकेल रहा है। इसीलिये मैंने आपको पुकारा। यहां आप अच्छी तरह रह सकती हैं क्योंकि यहां कोई नहीं आयेगा।”

दूसरे दिन सुना कि उस रात कुछ लुटेरे हमारी कोठी में घुसे थे। शुक्र है कि हम बच गये।

हमने देखा कि मौलवी के घर हमारी कोठी का कुछ फरनीचर था। बच्चे देखकर कहने लगे, “मां ! देखो ये हमारी चीजें हैं।” मैंने उन्हें ऐसा कहने की मनाही करते हुए कहा, “अगर ये चीजें जल गईं होतीं तो क्या होता? अच्छा हुआ जो वे किसी के काम आगई। मैं खुश हूं और तुम्हें भी इसपर प्रसन्न होना चाहिये।” यह सुन कर वे चुप हो गये।

उन दिनों वहां के मुसलमान भी डर कर पाकिस्तान भागे जा रहे थे। यह अफवाह थी कि हिन्दुस्तानी सिख सेना मुसलमानों को बिना भेद-भाव के मारती-काटती आ रही है। एक रात तो सचमुच सारे मुसलमान भागने को तैयार हो गये। मौलवी भी बहुत घबराया। उसकी स्त्री विलाप करने लगी। मौलवी की दो जवान लड़कियां थीं। उन पति-पत्नी को उन्हीं की विशेष चिन्ता थी। रात को वे लोग बहुत परेशान रहे। चीख सुनकर मैं उठी और देखा बाहर एक बहुत बड़ा हजूम इसी तरह घबरा रहा है। मैं उनके बीच में जाकर खड़ी हो गई और कहने लगी, “भाइयो ! कही मत जाओ। तुम्हें कोई नहीं मारेगा। यह सब पाकिस्तान का झूठा प्रचार है।” वे बोले, “देखो जम्मू में क्या हुआ है। जब वे यहां के हिन्दुओं की बुरी हालत देखेंगे और देखेंगे कि शहर लाशों से भरा हुआ है तो क्या वे हमें जिन्दा छोड़ेंगे ?” मैंने कहा, “मैं वायदा करती हूं कि मैं तुम्हें बचाऊंगी। मेरे पास कुछ नहीं है। ये बच्चे और अपनी जान है। तुम सब एक जगह इकट्ठे रहना। मैं तुम सब के आगे रहूंगी। पहली गोली मेरे सीने में लगेगी। बाद में तुम्हारी बारी आयेंगी। जब हमारी फौज दोमेल पहुंचेगी तब हम सब मिलकर वहां चलेंगे। मैं सबसे आगे लाल झंडा लेकर चलूंगी। मैं सौगन्ध खाकर कहती हूं कि अपना बलिदान देकर भी मैं तुम्हें बचाऊंगी।”

मेरी इन बातों का उनपर पूरा प्रभाव हुआ और वे सबके सब मेरे दाये-बाये फिरने लगे। कुछ लोग मुझसे बोले, “तुम्हें तो अच्छी तरह मालूम है कि किस किस ने पाकिस्तानियों का साथ दिया है। इन्हें हमने नहीं बुलाया था। हम सब हिन्दू-मुसलमान एक थे। इन्होंने बाहर से आकर यहां यह कहर बरपा किया है।

मुझे इनकी इस घबराहट पर बड़ी दया आ रही थी। मैं सोच रही थी कि जैसे भी हो इन्हें बचाना चाहिये। मुझे स्वप्न में भी कभी यह विचार नहीं आया कि चूंकि इन लोगों ने मुझे इतना नुकसान पहुंचाया है इसलिये मुझे इनका साथ नहीं देना चाहिये।

मेरे पास से वे लोग अब्दुल अजीज नाम के एक व्यक्ति के पास गये और उनसे मेरी सारी बात कह सुनाई। उसने उन्हें कहा, “वह जो कुछ कहती है वह सच है। तुम उसकी अच्छी तरह से हिफाजत करो। वह समय पर तुम लोगों को बचायेगी। मेरी ओर से भी उनसे प्रार्थना करना कि अगर वह चाहे तो मेरे घर आकर खुशी से रह सकती है।”

संसार में ऐसे भी लोग हैं, जो दूसरों के लिये अपना सर्वस्व अर्पण करने हैं। उनमें जाति, मजहब, रंग वा नस्ल का भेद-भाव नहीं रहता। अब्दुल अजीज इसी मनोवृत्ति का एक अमर मानव था। जन्म से मुसलमान, पेशे का दर्जी, वह शुरू से ही काश्मीर नेशनल कांफ्रेंस का सदस्य और स्थानीय आन्दोलनों का अगुआ था। आक्रमण से कुछ दिन पहले ही जेल से छूट कर आया था। उसने जब देखा कि हिन्दू महिलाओं पर अत्यधिक बर्बरतापूर्ण अत्याचार हो रहे हैं, वे गलियों में दर-दर भटक रही हैं, उन्हें रहने के लिये कोई ठिकाना नहीं है, तो उस सच्चे और नेक मानव ने शेर की तरह दिलेर बन कर चार सौ हिन्दू देवियों और बच्चों को अपने घर पर रखा। अपना सामान बाहर रखा, खाना बाहर पकवाया, पर पीड़ित बहनों को आदर का स्थान दिया। पाकिस्तानियों ने उसे बहुत तंग किया, परन्तु वह सदा यही कहता रहा, “चाहे तुम मुझे जान से मार दो, पर मैं एक बहन को भी घर से नहीं निकलूंगा।” इसी बात पर कबाइलियों ने पहले तो उसका सब सामान लूट लिया पर जब वह फिर भी अपने प्रण से नहीं टला, तो एक दिन उन जालिमों ने उसे पकड़ कर कैद कर लिया। बाद में सुना कि उन्होंने उसे जान से मार डाला।

अब्दुल अजीज के समर्थन के बाद सबने मेरा कहना मान लिया। दो दिन बाद जब हालत कुछ सुधर गई तो वे लोग मुझसे कहने लगे, “बहन,

तूने उस दिन हमारे पांच सौ आदमियों को बेघर होने से बचाया, तेरे एहसान हम कभी नहीं भूलेंगे।”

: १३ :

मौलवी के घर में

अब मुसलमानों में भी कबाइलियों का डर बढ़ने लगा था क्योंकि वे लोग भागते हुए उन्हें भी लूट लेते थे। हमने तो यहां तक सुना कि वे लोग उनकी स्त्रियों और लड़कियों को भी उठाकर ले जाते थे। मौलवी को भी भय लगा। उसने अपने संदूक आदि दीवार में रखकर ऊपर लकड़ी के तख्ते लगा दिये। फिर उन्हें मिट्टी से पोत दिया।

इसी डर के कारण मुसलमान अब दिन-रात कुरान शरीफ पढ़ते रहते थे। उनका खयाल था कि जब कबाइली आयेंगे तो उन्हें कुरान पढ़ते देखकर तंग न करेंगे। लेकिन उनका यह खयाल ठीक न निकला। एक दिन कबाइलियों की एक टोली एक काश्मीरी मालदार मुसलमान का घर लूटने लगी। वह कुरान पढ़ रहा था। उसने कहा, “भाई, मैं भी मुसलमान हूं और तुम भी मुसलमान हो। देखो, मैं इस समय कुरान शरीफ पढ़ रहा हूं। तुम्हें इसकी तो इज्जत करनी चाहिये।” उन्होंने उत्तर दिया, “हमारा मज़हब ज़र है। तुम क्या पढ़ रहे हो? इसकी हमें बिल्कुल परवा नहीं है।”

और उन्होंने उसका सब कुछ लूट लिया। सुना गया कि उन्होंने कुरान शरीफ तक के बर्के फाड़कर इधर-उधर फेंक दिये जिसके कारण स्थानीय मुसलमानों में बड़ी हलचल मची और बाद में पाकिस्तानियों को एक ऐसी टोली वहां भेजनी पड़ी जो रोजाना मसजिद में जाकर नमाज़ पढ़ती थी। यह सब इसलिये किया गया था जिससे कि स्थानीय मुसलमानों को उनके सच्चे मुसलमान होने का विश्वास हो।

वर्तमान वजीर पं० ताराचन्द कभी-कभी मेरे पास आकर मेरी ज़रूरत के बारे में पूछ-ताछ कर जाता था। मैं उसे अक्सर उदास पाती थी। न जाने

ये लोग उसे कितना कष्ट देते थे। वह मुंह से कुछ नहीं कहता था। परन्तु उसकी निराशा भरी आंखें सब हाल साफ-साफ बतला देती थीं। उसकी दो नवजवान लड़कियां और एक लड़का था। वे लड़कियों के कारण वहां फंसा हुआ था। कुछ दिनों बाद पता चला कि उसकी वजारत छीन ली गई। बेचारे को सिर छिपाने का ठिकाना न रहा। किसी तरह एक मुसलमान दर्जी के पास जगह मिली। आखिर इसी गम में वह एक दिन चिरनिद्रा में सो गया। सुना गया कि उसकी लाश कब्र में दफना दी गई। बाद में उसके तीनों बच्चे शरणार्थियों के साथ रेडक्रास की सहायता से वहां से निकल आये।

जब वह पहली बार मेरे पास आया था तो उसके साथ एक काश्मीरी मुसलमान था। वह भूतपूर्व माल अफसर था। उसका परिवार श्रीनगर में था। मुझसे मिलने के कुछ दिन बाद न जाने वह कैसे श्रीनगर पहुंच गया। पिछले दिन वह मुझे श्रीनगर में मिला। कहने लगा, “अगर तुम उस दिन मेरी हिम्मत न बंधाती तो मैं अपने परिवार को फिर न पा सकता।”

इस तरह हमें मौलवी के घर रहते दस दिन बीत गये। आटा समाप्त होने को था। मेरे और श्रीमती मोदी के एक वक्त खाने के कारण कुछ बचत नरूर होती थी, फिर भी खर्च बहुत था। अक्सर मौलवी मुझसे कहता, “बहनजी, अनाज के बिना आपका क्या होगा।” मैं उससे कहती, “जिसने आज तक बचाया है, वही आगे भी बचायेगा।”

पहनने के कपड़े भी फट गये थे। नये बनाने का कोई प्रश्न नहीं था। इसलिए उन फटे हुए कपड़ों में ही टाकियां लगा लेती थीं? साबुन नहीं था। इसलिये गर्म पानी में राख डालकर कपड़ों को उबाल लेती थी। एक दिन बाहर के कुछ बालकों को मेरे बच्चों ने अपने कपड़े पहने देखा और मेरे पास आकर अश्रुपूर्ण नेत्रों से बारी-वारी से कहने लगे, “माताजी, देखो उसने मेरा फ्राक पहना है। देखो मां, उसने मेरा कोट पहना है। तुम हमें इनसे ये मांग दो न। देखो, हमें कितनी सर्दी लगती है। हमारे कपड़े हमें वापस दिलादो मां !” मैंने जवाब दिया, “तुम्हें क्या हो गया है? तुम कपड़ों को ही सब कुछ समझते हो। क्या मैं इन कपड़ों के लिये झगड़ा मोल

लूँ। मांगना तो दूर रहा, मैं तो इन्हें यह जताना तक नहीं चाहती कि ये हमारी चीजें हैं। जहां तुम्हारे पापा चले गये, वहीं पर घर का सब आराम भी गया। जाओ जिन बच्चों ने तुम्हारे कपड़े पहने हैं, उनके साथ प्रेम से खेलो और उन्हें इस बात का ज्ञान न होने दो कि तुमने कपड़े पहचान लिए हैं।” यह सुनकर वे सब चुप हो गये। उसके बाद भूखे पेट, फटे हाल रहकर भी उन्होंने किसी वस्तु की लालसा प्रकट नहीं की।

एक दिन सायंकाल के समय हम सब बैठे हुए थे। द्वार बंद था। मौलवी मसजिद में गया हुआ था। अचानक द्वार खटखटाने की आवाज़ हुई; खोलकर देखा तो एक पाकिस्तानी अफसर और तीन सिपाही कुछ आदमियों के सिर पर बोझ लादे बाहर खड़े हैं। अफसर ने पूछा, “बजीरानी साहिबा यहां हैं क्या?” हम सब पहले तो एक दूसरे का मुंह ताकने लगे। पर फिर तुरन्त ही मैंने आगे बढ़कर कहा, “क्या बात है? मैं हूँ।” उसने बड़े अदब से सलाम किया और कहा, “बहनजी! मैं सुबह से आपको ढूँढ रहा हूँ। कहीं पता नहीं लग रहा था। न जाने हमने कितने घर छान डाले। रहमदाद खां ने आपके लिए यह राशन भेजा है और हिदायत की है कि बहन से कहना, फिकर न करें, मैं कुछ दिन बाद आ रहा हूँ। सब इंतजाम कर दूंगा।” यह कहकर वे राशन की गठरियां रखकर चले गये। उनमें गुड़, नमक, और आटा था।

उनके जाने की खड़खड़ाहट सुनकर मौलवी भी दौड़ा आया और पूछने लगा, “बहनजी, कौन था?” मैंने उसे सारा हाल कह सुनाया। उसने इत्मीनान की सांस लेते हुए कहा, “हमने आपके यहां रहने का भेद छिपा रखा था। उन्हें कैसे मालूम हुआ?” मैंने उससे कहा, “सुनो, मैं छिपकर कहीं नहीं रह सकती। मैंने उस प्रभु की शरण ली है, जैसे वह रखेगा, रहूंगी।” मौलवी मेरी बातों से बड़ा प्रभावित होता था। देर-देर तक मैं और वह ईश्वर-संबंधी बातचीत करते रहते थे। मेरे पास से उठकर वह अपनी बीबी से कहा करता था, “देखो, जो खुदा पर भरोसा रखते हैं उनकी मुराद कैसे पूरी होती है।” उसकी स्त्री राशन देखकर चिढ़ गई। बैठे-बैठे हमें घर पर

ही सब कुछ मिल जाना उसे पसंद नहीं था। धीरे-धीरे उसका बर्ताव बिगड़ने लगा। मैंने उसे राशन देकर सन्तुष्ट करना चाहा परन्तु उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वह तो हमें तड़पते ही देखना चाहती थी। मौलवी ने भी उसे समझाया, “तुम इनसे कुछ न कहो। सब अफसैर इन्हें जानते हैं। ऐसा न हो कि हमें मुसीबत उठानी पड़े।”

उन दिनों एक पाकिस्तानी अधिकारी स्थानीय अवस्था पर नियंत्रण रखने के लिये यहां आगया था। वह एक सिविलियन पठान था। एक दिन वह मेरे पास आया। उसके साथ तीन सशस्त्र सैनिक थे। वह मुझसे और बच्चों से बड़ी शिष्टता से मिला। उसने हठ करके मेरी आपबीती सुनी और जब मैंने अपने कान का जेवर देने की बात बताई तो उसने पूछा, “क्या आप बता सकती हैं कि वह जेवर आपने किस को दिया था?” मैंने स्पष्ट इन्कार कर दिया। यह तो अपने रक्षक के प्रति विश्वासघात करने जैसी बात थी। वह चुप हो गया। जाते समय कहने लगा, “जब कभी कोई मुश्किल पेश आए तो मुझसे कहना। मैं जब तक यहां हूं आपकी हर तरह से मदद करूंगा।”

: १४ :

मेरे भाई

कुछ समय पश्चात् एक दिन सायंकाल के छः बजे पता लगा कि रहमदाद खां आ गया है। मैंने उससे मिलने की इच्छा प्रकट की। बाहर जाना खतरे से खाली नहीं था, पर मैं किसी बात की चिन्ता किये बिना वजीर के पास पहुंच गई, वहीं खां ठहरा हुआ था। तब कुछ-कुछ अंधेरा हो चला था। वहां पहुंचकर मैंने देखा कि कई अफसर इधर-उधर घूम रहे हैं। मैंने संतरी द्वारा रहमदादखां के पास अपने आने की सूचना भेजी। वह तुरन्त बाहर आया। बड़े आदर से भीतर ले जाकर कहने लगा, “आपने यहां आने की तकलीफ क्यों उठाई? कल मैं आपके पास खुद ही आनेवाला था।” मैंने कहा,

“एक तो मैं आपको धन्यवाद देने आई हूँ। दूसरे मुझे आपसे कुछ कहना भी है।” वह बोला, “सवेरे मैं वहीं आऊंगा। तब बातें होंगी।”

अपने कथनानुसार खां सुबह आया। उसके साथ एक और व्यक्ति था। उसका परिचय कराते हुए खां कहने लगा, “यह एक बड़े नामी डाक्टर हैं। मेरी गैरहाजिरी में यह आपका खयाल रखेंगे।” साथ ही पूछा, “बहन! क्या तुम यहां से बाहर जाना पसन्द करोगी?” मैंने इन्कार किया। उसने भी अनुरोध नहीं किया। फिर मैंने कहा, “भाई, यहां स्त्रियों पर बड़े अत्याचार हो रहे हैं। तुम जैसे शरीफ आदमी के होते यह सब ठीक नहीं है। इससे सफलता नहीं मिल सकती। तुम लोग भगवान् को क्यों भूल रहे हो? मैं तुम्हारी कैद में हूँ। मुझे कुछ कहने का अधिकार नहीं है परन्तु मैं यह कहे बिना नहीं रह सकती कि हिन्दुस्तान लड़े या पाकिस्तान, जो अत्याचार करेगा वह गिर जायगा।” जवाब दिया, “अब मैंने औरतों की हिफाजत का पूरा-पूरा इतिजाम कर दिया है।” मैं बोली, “ठीक है, मैं सारा दिन बैठी रहती हूँ। अगर तुम मुझे इन दुखी स्त्रियों की देखभाल का काम मौप दो तो बहुत अच्छा हो।” इसपर उसने ‘न’ करने हुए कहा, “यह काम अभी तुमसे नहीं हो सकता।”

उन दो के अतिरिक्त, एक तीसरा व्यक्ति भी वहां था। वह तब तो चुपचाप हमारी बातें सुनता रहा पर दूसरे दिन अकेला ही मुझसे मिलने आया। उसने बाहर से मेरे नौकर द्वारा मुझसे मिलने की इजाजत मांगी। मेरे आज्ञा देने पर वह अन्दर आया। वह लगभग पचास वर्ष का था। उसने साधारण-से कपड़े पहने हुए थे, और वह ‘खां’ नाम से प्रसिद्ध था। वह आकर मेरे पास बैठ गया और कहने लगा, “मैं डाक्टर का साथी हूँ। हम सब तुम्हारी कोठी में ठहरे हैं। बहन, वहां मैंने एक कमरे में हड्डियों का कुछ चूरा टीन के तख्ते के नीचे देखा है। मुझे बताया गया है कि वह तुम्हारे मालिक का है। क्या तुम उसे नदी में डलवाना चाहती हो?” मैंने कहा, “डलवाना तो चाहती हूँ पर नदी पर कैसे जाऊँ?” असमर्थ हूँ।” वह बोला, “अपना नौकर मेरे साथ दो, मैं उस चूरे को कृष्ण-

गंगा में डलवा आऊंगा।” यह कहकर वह मेहता साहब का गुणगान करने लगा। फिर मेरी आवश्यकता की पूछताछ की। इतने में मौलवी भी वहां आ गया। उससे वह बोला, “सुनो मौलवी साहब ! यह मेरी बहन है। इसकी हर तरह हिफाजत करना। जो इसे कुछ तकलीफ पहुंची तो तुम्हारी खैर नहीं।” मुझसे पूछने लगा, “क्या तुम रामायण पढ़ती हो ?” मैंने कहा, “कभी पढ़ती थी पर अब गीता और रामायण मेरे पास कहां हैं।” इस पर मौलवी ने कहा, “मेरे पास गीता उर्दू में है, मैं वह आपको पढ़ने को दे दूंगा।” खां ने कहा, “हां, जरूर देना।” उसके बाद मुझसे पूछने लगा, “कुरान शरीफ पढ़ोगी क्या ?” मैंने उत्तर दिया, “अगर हिन्दी में होगी तो जरूर पढ़ूंगी। परन्तु डर से नहीं पढ़ूंगी। एक हिन्दू की हैसियत से मेरे लिए सब मजहबी किताबें एक हैं। मैं इसकी उतनी ही इज्जत करूंगी जितनी अपनी धार्मिक पुस्तक की करती हूं।” मौलवी ने हिन्दी में छपा हुआ एक ‘सिपारा’ और उर्दू गीता लेकर दी। खां के कहने पर कुछ और भी किताबें उसने मुझे पढ़ने को दी जिनमें मुगलकाल की शहजादियों की कुछ दर्दनाक कहानियां भी थी। खां कुछ देर बाद ओम् को दूसरे दिन कोठी पर आने की बात कह कर चला गया।

मैं मौलवी की पत्नी से सदा अत्यन्त नम्रता से पेश आती थी। परन्तु वह मेरे साथ के तीन पुरुषों से तंग थी। मुझसे कहती थी, “हमारे यहां पर्दा होता है। मैं किसीके सामने नहीं आती। लेकिन ये तुम्हारे आदमी यहां रह रहे हैं। मुझे यह अच्छा नहीं लगता। मैं तुम्हारी वजह से चुप हूं। तुम इन्हें रखसत क्यों नहीं कर देती ?” मैं उसे समझाती, “बहन! यह मेरे नीकर नहीं, बच्चे हैं। मैं इन्हें अपने से दूर करके मौत के मुंह में नहीं भेज सकती। जायेंगे तो हम सब इकट्ठे जायेंगे। हम एक दूसरे का साथ नहीं छोड़ सकते।” वह यह सुन नाक-भौं सिकोड़ कर रह जाती। परन्तु जब कभी लड़ाका जहाज बम फेंकने आता था, तो मौलवी की स्त्री को मेरी आवश्यकता का अनुभव होने लगता था। उस समय भय से उसका हृदय

कांप उठता था। वह मेरे पास आकर बैठ जाती थी और मुझे पकड़ लेती थी। उसका रंग पीला पड़ जाता था।

एक दिन मौलवी की लड़कियां मुझे कहने लगीं, “क्या तुम्हें हमारे हाथ का खाने में परहेज है? तुम हमारा पका हुआ खाना क्यों नहीं खाती?” मैंने कहा, “तुम जानती हो, मैंने एक ही वक्त सफाई से खाना खाने का व्रत रखा है। तुम लोग गोश्त वगैरा खाते हो, इसलिए मैं तुम्हारे यहां नहीं खाती। यदि तुम मिट्टी से हाथ धोकर सफाई से खाना पकाओ, तो मैं जरूर खाऊंगी। मुझे तुमसे छूत नहीं है। लड़कियों ने मेरे कहने के अनुसार एक बार मेरी बच्चियों के साथ मिलकर खाना पकाया। तब हम सबने निःसंकोच वह खाना खाया।

दूसरे दिन सवेरे खां स्वयं आकर ओम् को साथ ले गया और मेहता साहब के शेष फूल कृष्णगंगा में डलवा आया। नदी तट पर उसने ओम् से कहा, “देखो, इनको किनारे पर नहीं बल्कि बीच धारा में डालना, ताकि ये बह जायं। ऐसा करने से माताजी के दिल को तसल्ली होगी। हमें उन्हें खुश रखना है।” ओम् और शिवदयाल मुझे माताजी कहते थे। इसीसे खां मुझे कभी बहन जी, कभी माताजी कहा करता था। वह रोज आकर घंटों बैठकर बातचीत करता। इसपर कइयों ने उसपर पाकिस्तानी होने का शक किया। उसकी बातों और उसके पहिरावे से लगता था कि वह कोई बड़ा आदमी है। हम उसकी बातों से तंग भी आ जाते थे, कभी-कभी उसपर शक भी होता था कि कहीं यह धोखा तो नहीं दे रहा है। मनुष्य के भीतर ही तो सब पाप होते हैं। पर संदेह होने पर भी मैंने अपने साथ वालों से यही कहा, “चाहे कुछ हो, इसने मुझे बहन कहा है। मुझे इससे कुछ भी भय नहीं।” वैसे शहर में उसकी बड़ी धाक थी।

डाक्टर भी हमारे यहां कभी-कभी आता था। श्रीमती मोदी का स्वास्थ्य वैसे तो अच्छा था, परन्तु गोली का घाव अभी नहीं भरता था। डाक्टर ने मलहम-पट्टी करने के लिये एक दूसरे डाक्टर की, जो पहले काश्मीरी पंडित था, ड्यूटी लगा दी थी। यह रियासती फौज का डाक्टर था और अब

मुसलमान बन गया था। वह प्रतिदिन आता और पट्टी करके चला जाता। मैंने उसे कभी मुस्कराते नहीं देखा। हमेशा आहें भरता रहता था, पर हमसे उसने कभी कोई विशेष बात नहीं कही। उसकी टोली में लगभग १० आदमी थे और वे सब हमारी कोठी में ठहरे हुए थे। वे मेरे पास आते रहते थे। इससे मौलवी की भी उनसे जान-पहचान हो गई थी और वे लोग मस्जिद में नमाज पढ़ने आने लगे थे। जुमे के रोज वहां सभायें भी होने लगी थी। पाकिस्तानी लीडरों के भाषण प्रायः वहीं हुआ करते थे।

कभी-कभी डाक्टर और खां महाज् पर ऊड़ी जाते थे। उनकी कोठी के बाहर सदा पेड़ों के पत्तों और घास से ढकी एक लारी तैयार रहती थी। हवाई हमले से बचने का यह अनूठा उपाय सोचा गया था।

एक दिन मैं कमरे में बैठी हुई थी कि डाक्टर और उसके पांच साथी आये। उनमें एक प्रोफेसर मकबूल कुरैशी भी था, जो कुछ ही दिन पहले श्रीनगर से छुट्टी पर आया था। वह मेहता साहब का 'क्लासफेलो' रहा था और हमारे यहा भी कई बार आया था। उस दिन मेरी तबियत ठीक नहीं थी। उन्होंने मुझसे मिलने की इच्छा प्रकट की। मैं बाहर निकलना नहीं चाहती थी; परन्तु वे आगन में बैठ गये और कहने लगे, "हम तो मिलकर ही जायेंगे।" मैं बड़ी मुश्किल में पड़ी। क्योंकि मौलवी की स्त्री और लड़कियां बाहर नहीं जा सकती थीं। मैं उन्हें अन्दर नहीं बुला सकती थी। इसलिये मैं उनके इस प्रकार आग्रह पर क्रोध से भर उठी, शीघ्रता से बाहर आई और गर्ज कर बोली, "बताओ, तुम्हें मुझसे क्या काम है? क्यों मुझे तंग करते हो? जब मेरी तबियत ठीक नहीं, तो मैं तुमसे बातचीत कैसे कर सकती हूं।" मेरी क्रोधपूर्ण बात सुनकर वे बोले, "माफ करना, बहन जी! हमतो आपकी बातें सुन कर आपसे मिलने आये हैं। यदि आपको कुछ तकलीफ होती हो तो हम चले जाते हैं।" पर वे गये नहीं। मेरी तालीम और मेरे खानदान की बाबत पूछने लगे। एक व्यक्ति मेरे लड़के सुरेश की ओर देखकर कहने लगा, "मुझे इन बच्चों पर तरस आता है। बेचारों की पढ़ाई बरबाद हो गई। अगर आप

इसे मेरे पास पढ़ने भेजें तो मैं इसे पढ़ाऊंगा।” मैंने कहा, “आपकी इस हमदर्दी का शुक्रिया ! लेकिन मेरी एक प्रार्थना है कि आप मुझपर, मेरी हालत पर और इन बच्चों पर तरस न खायें। मुझपर दया करने का अधिकार केवल भगवान् को है। मनुष्य तो बरबाद करना जानता है, आबाद करना नहीं। आज तक उसने लाखों जानवरों की जान ली है, पर जिन्दा एक को भी नहीं कर सका। खैर ! मैं बहुत कुछ कह गई हूँ। बुरा न मानिये।” वे उठे, कहने लगे, “माफ़ करना। जब आपकी तबियत ठीक होगी तब फिर आयेंगे।”

बाद में सुना गया कि यह टोली घर-घर में घूमकर लड़कियाँ देख रही थी।

: १५ :

शैतान हमदर्द के रूप में

मुझे खाने-पीने की दिक्कत से पेचिश हो गई थी। शिवदयाल जाकर पठान डाक्टर को बुला लाया। उसने आते ही मुझे अच्छी तरह देखा और शिवदयाल को साथ लेकर खुद बाजार गया और एक मुसलमान की दूकान से औषधि लेकर भेजी। वह प्रायः मेरे पास आता था। बड़ा तअस्मुबी था। जबसे वह मुजफ्फराबाद आया था, मुसलमानों में यहीं प्रचार करता था, कि उसने हिंदुस्तान में मुसलमानों पर बहुत जुल्म होते देखे हैं। और तो और वह मेरे से भी अक्सर ऐसी बातें करता था। पर मैं उसे झाड़ देती थी।

एक दिन आंगन में मैं उससे बातचीत कर रही थी कि ऊपर से लड़ाका जहाज आगया। वह भाग कर वृक्ष की आड़ में हो गया। मैंने हंसकर कहा, “डाक्टर साहब, आप भीतर छिप जाइये। कहीं आपपर ही वार न हो। जनता को आपकी बड़ी जरूरत है।” वह झंपते हुए वृक्ष की ओट से निकल कर मेरे पास आया और कहने लगा, “नहीं, हम नहीं डरते। मैं तो ऐसे ही पेड़ के नीचे हो गया था।” बाद में पता लगा कि मस्जिद में तकरीर करते हुए

उसने कहा था, “मेहता साहब की स्त्री ने मुझसे छिपने के लिए कहा था पर उन्हें क्या मालूम कि पठान छिपनेवाले नहीं।”

इन दिनों काश्मीर राज्य के दो अधिकारी यहां भागकर आये थे। आशिक हुसैन और मियां नासिर। दोनों काश्मीरी मुसलमान थे। यहां आते ही पहले, को वजीर और दूसरे को कप्तान पुलिस का पद मिला। दोनों मेरे पास आये और अच्छी तरह बातचीत करने के बाद कहने लगे, “कोई तकलीफ हो तो हमें कहना। हम आपकी हर तरह से मदद करेंगे।” यह भी कहा, “हम आपके लिये स्पेशल राशन का इन्तिजाम कर देंगे।” मैंने कहा, “अभी मेरे पास राशन है। जब समाप्त हो जायगा तब आपसे लेना ही पड़ेगा।”

इस अर्से में रहमदाद खां तबदील होकर कहीं और चला गया था। इधर मौलवी को भी नौकरी मिल गई। उसे कंट्रोलर का पद मिला। मुझे मिलने के लिये काफी लोग आने लगे थे। मैं बहुत तंग आ जाती थी, पर कुछ कर नहीं सकती थी। एक दिन एक सत्तर वर्षीय पठान आया। देखने में भला आदमी लगता था। कहने लगा, “मैं आपसे अकेले में कुछ बातें करना चाहता हूं फिर कभी आऊंगा।” फिर बोला, “हमसे कोई पूछता है, कैसे आये हो? तो हम कहते हैं, ऐसे ही देखने-सुनने के लिये। अपने पास से खाते हैं। किसी की चीज को छूने नहीं।” खुद ही यह भी सुनाने लगा, “मैं बहुत साल हिंदुस्तान में रहा हूं। आनन्द भवन भी जाता था। वहां अक्सर हमें हिंदू-मुसलमानों को इकट्ठे मिठाई मिलती थी। देखो, आज यह क्या हां रहा है?” मैंने कहा “यह सब हमारी मूर्खता है। बदले की आग से जले हुए हम शांति खो बैठे। मनुष्य पशु बन गया है।” वह फिर मुझे कहने लगा, “तुम सबके सामने क्यों आ जाती हो। यह अच्छा नहीं। अपने बच्चों का ध्यान तुम्हें रखना चाहिये।” मैंने सदा की भांति जवाब दिया, “मुझे भगवान् के सिवा किसीका डर नहीं है। मौत का तो हम खुशी-खुशी स्वागत करते हैं।” यह सुनकर वह शांत हो गया और फिर आने को कह कर चला गया।

एक बार आजाद काश्मीर सरकार का शासक सरदार इब्राहीम वहां आया। मस्जिद में उसका भाषण हुआ। वह मेरे पास भी आया। उसके साथ खां और एक जम्मू का वकील, दुरानी था। यह वकील मुझे अच्छी तरह जानता था। उसकी बहू मेरी घनिष्ठ सहेली थी। सरदार भी मेहता साहब को जानता था। जिस समय वे पुंछ में गवर्नर थे तो सरदार वहां वकालत करता था। मुझे वह बड़ी शिष्टता से पेश आया। उसे देखकर यह अंदाजा लगाना कठिन था कि इसी के इशारे पर इतने अत्याचार हुए हैं। कहने लगा, “जो कुछ आपपर आज तक गुजरी है उसके लिये मैं आपसे माफी मांगता हूं। मेहता साहब की मौत का मुझे अफसोस है।” मैंने कहा, “सरदार साहब, मुझे किस बात की माफी मांगते हैं? माफी भगवान् से मागिये और सरदार साहिब! क्या स्त्रियों, और बच्चों पर जुल्म करके कोई सफल हुआ है? आप तो पढ़े-लिखे हैं। क्या कही इतिहास में आपने पढ़ा है कि अत्याचार करनेवाली जातियां सदा विजयी रहीं हैं? याद रखिये, ईश्वर के हाथ में न्याय की तुला है। जिस ओर अत्याचार अधिक होगा, वह पक्ष अवश्य ही गिर जायेगा। वह चाहे हिंदुस्तान हो या पाकिस्तान।” वह बोला, “नहीं, हम ऐसा नहीं करते। अगर हम ऐसा करें तो हम-में और सिखों में फरक ही क्या रहा?” मैंने पूछा, “फिर यह सब किसने किया? क्या आप प्रधान नहीं हैं?” खां बीच में बात काटकर बोला, “हम काश्मीर को कभी नहीं छोड़ेंगे।” उन दोनों की आपस में कुछ बातों पर बहस-सी हुई, जिसे मैं न समझ सकी। उसके बाद सरदार ने कहा, “मैं चाहता हूं कि अगर ये स्त्रियां हिंदुस्तान जाना चाहें, तो इन्हें जल्दी भेज दूं।” मैंने जट उत्तर दिया, “सब जाना चाहेंगी। आप कहें तो मैं सबकी दरखास्त लेकर भेजूं।” वह बोला, “ऐसे थोड़े ही होता है। मैं लाहौर जाकर रेडियो पर कह दूंगा। बाद में आपको भेजा जायेगा। अभी अगर आपको किसी चीज की जरूरत हो तो बताइये?” श्रीमती मोदी से भी पूछा। मैंने कहा, “मुझे इज्जत की मौत चाहिये और कोई आवश्यकता नहीं। मुझे अब जीना दूभर हो गया है।” वह कहने लगा, “मैंने तो आप की हिम्मत की बहुत

तारीफ सुनी है। यह आप क्या कह रही हैं? अब डरने की जरूरत नहीं है”। मैंने जवाब दिया, “कठोर-से-कठोर इन्कलाब से भी मैं नहीं डरती पर यह ऐसे कब तक चलेगा। मुफ्त का खाना-पीना हमें अच्छा नहीं लगता।” इसपर सरदार मुझसे कुछ न कहकर मौलवी से कहने लगा, “आपन इन्हें रखकर बड़ी अच्छी बात की है।” फिर मुझसे बोला, “आपको किस-किस चीज की जरूरत है, बोलिये?” मेरे उत्तर देने से पूर्व खान बोला, “इनके पास है ही क्या? बच्चों को देखिये, फटे कपड़े पहने हैं। खाने को आटे के सिवाय कुछ नहीं। कपड़े धोने को साबुन नहीं। फिर भी यह आपसे कुछ नहीं मांगेगी।” सरदार कहने लगा, “मैं सब ठीक करा दूंगा। आपको किसी बात की फिकर नहीं करनी चाहिये।” यह कहकर वे सब चले गये।

कुछ दिन बाद सरदार ने चार जोड़े कपड़े भिजवाये, जिनमें कुछ पुराने भी थे। बाद में सुना कि लानेवाले ने वे रास्ते में बदल दिये थे। कुछ साबुन भी भेजा था और वजीर को राशनादि की भी हिदायत दे गया था। मैंने कपड़े रख लिये।

एक दिन जंगलात का एक भूतपूर्व रेंजर मेरे पास आया। वह पहले काश्मीर राज्य का मुलाजिम था। आजकल स्वतन्त्र रूप से काम करता था। शायद स्यालकोट का रहनेवाला था। मुझसे कहने लगा, “आपके पति जब काश्मीर में थे तब मैं आपके घर आता-जाता था। चूंकि आपके पति मेरे दोस्त के दोस्त थे उस नाते मैं आपकी कुछ मदद करना चाहता हूं। मेरा खयाल है कि आप अब यहां न रहें। मैं आपको रावलपिंडी पहुंचा दूंगा और वहां से जम्मू जाने का इन्तिजाम हो सकता है। और लोग भी चलना चाहें तो कोई हर्ज नहीं। यहां गल्ला लेकर दस लारियां आई हैं और अब खाली जा रही हैं।” मैंने कहा, “मैं सोच कर उत्तर दूंगी।” उसने कहा, “अच्छा। मैं हस्पताल के क्वार्टर में ठहरा हुआ हूं। वहीं पता भेजना।” वह चला गया। हम लोगों ने इस बारे में सलाह की और न जाने का निश्चय किया।

यह अच्छा ही हुआ, नहीं तो जैसा कि बाद में पता लगा उन्होंने हमें खत्म करने का विचार कर लिया था।

मौलवी के घर रहते हुए अब मुझे दो महीने बीत चुके थे। वे लोग तंग आ गये थे पर खान और अफसरों के डर के मारे कुछ कह नहीं सकते थे। चमनलाल से, जो हमारे यहां आया करता था, मौलवी को बड़ी चिढ़ थी। कहता था, “यह कांग्रेसी है और बड़ा चालाक है।” चमन हमें फीज के आगे बढ़ने के समाचार सुनाया करता था।

एक दिन डाक्टर अपने साथ एक पठान को ले आया। वह लगभग पैंतालीस साल का था। उसका कद लम्बा और वस्त्र साधारण थे। डाक्टर ने कहा, “यह जौहरी हैं। वस्वई में इनकी दूकान है। यह पंडित नेहरू के भी मित्र हैं। आपकी बड़ी सहायता कर सकते हैं।” मेरे पास उस समय श्रीमती मोदी, तीन साथी और बड़ा लड़का सुरेश था। वह सुरेश की ओर संकेत करके कहने लगा, “यह आपका लड़का है? क्या आप इसे मुझे देंगी? मैंने शादी नहीं की है। मेरा कोई बच्चा नहीं है।” मैं बोली, “मेरी दुनिया अब इतनी ही है। क्या अब इसे भी तुम मांग रहे हो?” डाक्टर ने रोककर कहा, “नहीं, योंही कह रहे हैं।” उसने फिर मुझसे मेरा नाम पूछा और मेरे बताने पर कहा, “मैं तुम्हारी किस्मत देखना चाहता हूँ।” मैं बोली, “क्या देखेंगे आप? मुझे तो सब कुछ नज़र आ रहा है।” डाक्टर कहने लगा, “बड़े ज्योतिषी है।” ज्योतिषी साहब ने कुछ सोचने का नाट्य करते हुए कहा, “तुम्हारे सुख के दिन खत्म हो चुके हैं।” मैंने कहा, “यह तो सबको नज़र आ रहा है।” वह बोला, “पर तुम चाहो तो अब भी अपनी जिन्दगी को सुखी बना सकती हो। तुममें एक बुरी आदत है, उसे छोड़ दो। तुम किसीका यक़ीन नहीं करती। अगर तुम्हें कोई अच्छा दोस्त मिले तो उसकी बात मान लो। तभी तुम्हारे दिन फिरेंगे नहीं तो तुमपर बहुत मुसीबतें आयेंगी। तुम्हारे बच्चे धूल में मिल जायेंगे। तुम अन्धी हो जाओगी।” मैंने उत्तर दिया, “अगर सत्य पर दृढ़ रहते हुए उस भगवान् की याद में मेरी आंखें जाती रहती हैं तो खुशी से मैं उसे सहन करूंगी।” इसपर उसने कहा,

“एक बात मैं आपसे और कहना चाहता हूँ पर सबके सामने नहीं।” मैं बोली, “आप अकेले में कह सकते हैं।” उसी आंगन में थोड़ी दूर पर एक तख्त था। मैंने वहीं चलने को कहा। भगवान् का नाम लेकर और अपने स्वर्गस्थ पति का स्मरण कर मैं उठ खड़ी हुई। श्रीमती मोदी ने मुझे रोका, “कृष्णा, क्या कर रही हो? मत जाओ।” मेरे तीनों साथियों का भी रंग उड़ गया। मैंने उन्हें दिलासा देकर कहा, “भय की कोई बात नहीं है। मुझे इसकी बात सुननी होगी।”

वहाँ उसने मुझसे कहा, “मेरा भांजा हिन्दुस्तान में फंसा हुआ है। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे साथ चलो ताकि मैं तुम्हारे बदले में उसे प्राप्त कर सकूँ।” और भी एक ब्लाध निस्सार बात उसने कही। मैं उसकी नब्ज तो पहले ही पहचान गई थी फिर भी विनय से बोली, “सुनो, तुम मुझे अपना पता दे जाओ। मैं वायदा करती हूँ कि जब मैं हिन्दुस्तान जाऊंगी तो तुम्हारे बच्चे को खोजकर अवश्य भिजवा दूंगी।” वह अपनी ही हाकता गया, “देखिए, मैं आपको पंडितजी के पास लेजाऊंगा।” मैंने कहा, “मैं हिन्दुस्तान जाऊंगी तो खुद पंडितजी से मिलूंगी। आपके लड़के के लिये जरूर यत्न करूंगी। पर अब तुम्हारे साथ नहीं जाऊंगी। मैं यहाँ इसी हाल में खुश हूँ।” यह सुनकर उसके होश ठिकाने आये, और जल्दी से अपना पता देकर चलने को उठा। जाते-जाते पहले तो उसने नरमी से कहा, “कोई तकलीफ हो, तो मुझे खत लिखना।” फिर एकदम भाव बदलकर धमकी भरे स्वर में कहने लगा, “तुमने मेरे मन को दुखाया है। आज पठान का राज है। कल देखी जायगी।” मैंने कहा, “जिसका मुझे भरोसा है, हर हाल में वही मुझे बचायेगा। वह तुमसे कहीं बड़ा है।” यह सुन उसकी आंखें लाल हो गईं। वह चाहता तो बांझ पकड़ कर बलात् मुझे ले जा सकता था। बातें बनाने की उसे क्या जरूरत थी। परन्तु क्या मेरे सर्वशक्तिमान ने कष्ट के समय द्रोपदी के चीर नहीं बढ़ाये थे?

बात खत्म हुई। साथ का डाक्टर जिसे मैं आज तक शरीफ समझती रही थी, बोला, “हमें अब इजाजत दीजिए।” नकली ज्योतिषी भी बोला,

“हम शीरा, में जाता हूं।” जाते हुए उसने मेरा हाथ अपने हाथ में ले कर अपने माथे से लगाया। मेरी समझ में यह पहली न आ सकी दूसरे दिन खान आया। कहने लगा, “बहन, मैं तुम्हें हुक्म देता हूं कि तुम अब किसी गैर के सामने न आना। बायदा करो कि नहीं आओगी।” मैंने कहा, “मुझे स्वीकार है। आगे ऐसा ही होगा।” खान चला गया। घंटे भर बाद ही तीन कबाइली आये। मैं अन्दर थी। शिवदयाल और ओम् से जो, बाहर थे, पूछने लगे, “वह कहां है?” ओम् ने कहा, “अन्दर हैं।” उन्होंने मुझसे मिलने की इच्छा प्रकट की। मैंने ओम् से उन्हें इनकार कहला भेजा। वे कहने लगे, “तो फिर हम अन्दर आयेंगे।” मैंने कहला भेजा, “घर मेरा नहीं है। जिनका है उनसे आज्ञा ले लो।” वे बोले, “चाहे कुछ हो तुम्हें आना ही पड़ेगा।” एक घंटे तक यही बहस चली। आखिर वे निराश होकर लौट गये।

: १६ :

नरक या स्वर्ग

अब फौज प्रतिदिन हमारी कोठी में आती, पर्वत के दामन में ठहरती और रात को महाज पर चली जाती। एक बार रात के दस बजे हम अपनी दुःख-बीती पर मिल-जुल कर बातें कर रहे थे कि मौलवी की दोनों लड़कियां मेरी लड़कियों से कहने लगीं, “आओ, बाहर गाना सुनें।” वे चली गईं। मेरी बुद्धि इस समय जैसे घास चरने गई हुई थी, मैंने पूछा तक नहीं कि गाना कहां है? बात यह थी कि कोठी में तीन सौ के लगभग सिपाही उतरे हुए थे। वे ऊड़ी महाज पर जा रहे थे। रात को खा-पी कर वे ही लोग गा रहे थे।

कुछ देर तो सब लड़कियां दीवार की आड़ में खड़ी होकर गाना सुनती रहीं, फिर पास के खेत में लघु-शंका को चली गईं। अभी बैठी ही थीं कि जिस ओर वीणा थी, उसी ओर से पठान आ निकले। वे इन्हें घेरे में लेना ही चाहते थे कि वीणा ने कहा, “वह देखो ! पठान आ गये।” वे सभी आंख झपकी में घर आ गईं। मौलवी की छोटी लड़कियां भी आ

गई, पर बड़ी को एक पठान ने बाजू से पकड़ लिया। यह लड़की सबसे पहले भाग सकती थी क्योंकि वह घर के सबसे अधिक समीप थी, पर न जाने क्यों वह सहम-सी गई थी। वह चिल्लाई। उनसे कहने लगी, “मैं मुसलमान की लड़की हूँ, छोड़ो।” फिर कलमा भी पढ़ा। पर वे न माने। कहने लगे, “तुम काफिर की लड़की हो।” इतने में उसका भाई आया, पास ही चचा रहता था वह भी आ पहुँचा। उनके कहने पर भी वे न माने। तब उसका भाई मस्जिद में से बाप को बुला लाया। मौलवी ने कहा, “यह मेरी लड़की है।” तब कहीं उस बेचारी को छुट्टी मिली। वह लड़की अन्दर आई तो उसकी माँ सिर पीटने और रोने लगी। रोते-रोते वह पति को गालियाँ सुना रही थी और कह रही थी, “तूने हिन्दुओं को अपने घर में रखा है तभी मेरी लड़की पर मुसीबत आई है।” मैं भी सोच रही थी। हमारे ही कारण इसे यह कष्ट सहन करना पड़ा है। अगर कहीं यह अपहृत हो जाती, तो क्या होता? मुझे तो वह भी अपनी लड़की के समान लगती थी। मैंने उससे कहा, “सच है बहन! हमारी वजह से ही तुम्हें यह सब कष्ट उठाने पड़ रहे हैं। कोई और जगह मिलने पर हम एक-दो दिन में यहां से चले जायेंगे। भगवान् को धन्यवाद दो जिसने इस समय तुम्हारी लड़की को बचाया।”

दूसरे दिन सवेरे ही मैंने खान को बुला कर कहा, “मैं और कोई मकान लेना चाहती हूँ।” वजीर से भी कहा, परन्तु कोई भी दिल से मेरा यहां से कहीं और जाना नहीं चाहता था। पर मैं थी कि एक मिनट भी वहां रहना नहीं चाहती थी। उधर मौलवी भी अब डाक्टर के पास घंटों बैठा रहता था। मुझे शक होने लगा कि कहीं हमारे साथ यहां कोई धोखा न किया जाय। इसी बीच में एक दिन प्रो० मकबूल वहां आया। वह अब वहां का कोई अफसर बन गया था। मुझसे कहने लगा, “श्रीमती मेहता! तुम कितनी खुश-किस्मत हो कि तुम्हारे पास हमारा प्रेजीडेंट (इब्राहीम) चलकर आया।” मैंने पूछा, “इसमें खुश-किस्मती की कौनसी बात है?” वह बोला, “अपना मुकाबला तुम उन मुसलमान बहनों से करो,

जिनके नंगे जलूस हिन्दुस्तान में निकाले गये थे। क्या किसी ने यहां तुम्हारा जलूस निकाला ?” मैंने कहा, “प्रोफेसर साहब! मुझे उन बहनों के हाल पर दुःख है। अगर मेरे जलूस निकालने से उन बहनों का कष्ट दूर हो सकता है, तो मैं तैयार हूं। मैंने अपने आपको मिट्टी समझ लिया है। इन बातों का मुझे डर नहीं है।” वह एकदम बोला, “आपने बुरा माना। मैंने योंही बात की थी। क्या हम आपकी उस दिन की नेकी भूल सकते हैं, जब आप अपनी लड़कियों के साथ हमें बचाने को तैयार होगई थीं। वह रात कितनी खौफनाक थी। मैं भी यहां से चला गया था और अपनी मां को तुम्हारे हवाले कर गया था।” मैंने कहा, “वह तो मेरा कर्तव्य था। जो कुछ मैं कर सकती, वह मुझे करना ही था। मैं बदला नहीं मांगती। आप लेना चाहें तो मैं तैयार हूं।” “मुझे माफ करें। मैंने तो मामूली-सी बात कही थी।” वह नम्रता से बोला।

एक दिन मौलवी ने आकर कहा, “मैं आपके रहने का इन्तिजाम रावलपिंडी में कर रहा हूं। जब तक हालात ठीक नहीं होंगे, आप वहां आराम से रह सकेंगी। मैंने कहा, “मैं और कहीं नहीं जाऊंगी। हां, मैंने इस मकान से दूसरी जगह जाने का प्रबन्ध कर लिया है। मैं चमनलाल के घर जाकर रहूंगी।” यह सुनकर उसका मुंह फूल गया।

खान ने कह रखा था कि जब मकान बदलो, तो मुझे साथ ले लेना। बदमाश फिरते हैं, कहीं तंग न करें। पर मैंने उसे भी नहीं बुलाया। सायंकाल के समय कुछ-कुछ अंधेरा होने पर सबसे पहले मैंने लड़कियों को चमन के घर भेज दिया। उसके पश्चात् हम सब वहां गये। उसने एक अच्छा साफ-सुथरा कमरा हमें दिया। उसका मकान दंगे में जलाया नहीं गया था। केवल लूटा गया था। इन्होंने इस मकान में कई लड़कियां छिपा रखी थीं। उसमें कई तहखाने थे। दिन में वे लड़कियां वहीं घास में दुबकी पड़ी रहती थीं। उस छोटे-से मकान में लगभग सात डेरे लगे हुए थे। हालत सबकी शोचनीय थी। टूटे बर्तन, एक आध रजाई और कुछ बोरियां, जिन्हें जोड़-सी कर उन्होंने बिछौना-सा बना लिया था, उस डेरे की बची-खुची सम्पत्ति थी। चमनलाल का परिवार सात व्यक्तियों का था। मां-बाप, एक विवाहित बहन,

उसका पति और एक बच्चा और एक १७ वर्षीय कुमारी बहन। इसके अलावा मित्रों के स्त्री-बच्चे भी थे।

यहां आकर मैंने किसी को धन के लिये और किसी को जन के लिये रोते पाया। मकान शहर के बीच में था इसलिये कबाइलियों का डर भी बराबर बना रहता था। वे निर्दयी अनियमित रूप से आते, जो मिलता उसे लूट कर ले जाते। चमनलाल का बाप नानकचन्द अर्जिनवीस कभी अच्छा धनी था, पर अब मुसीबत का मारा बेचारा दाने-दाने को तरसता था। हां, रसूख अच्छा होने के कारण स्थानीय मुसलमान कभी-कभी थोड़ी बहुत सहायता कर देते थे। वास्तव में वह जीवन नहीं, मरण की प्रतीक्षा भर थी। कई डेरे एक साथ होने के कारण एक दूसरे को ढाढ़स रहता था। टट्टी भीतर नहीं बनी थी, इसलिये सबको बाहर जाना पड़ता था। कबाइलियों के डर से बहुत सवेरे जाते थे। उस समय जले मकानों के खंडहरों से भी डर लगता था।

ये दिसम्बर के दिन थे। ठिठराने वाली सर्दी पड़ रही थी पर हमारे पास न पहनने को कपड़े थे न तापने को आग। जले हुए घरों से तख्ते ला-लाकर किमी तरह चाय आदि पकाते थे। मौलवी के घर पर अपनी कोठी के जंगले के तख्ते ला-लाकर हम जलाते थे, बल्कि उसी की राख से मैं कपड़े भी धो लेती थी किंतु यहां न तो लकड़ी ही थी और न राख। परिणाम-स्वरूप लोगों के कपड़ों में जुएं पड़ गयी थीं। कई मनुष्यों के शरीर पर जुएं इस तरह रेंगती थीं गोया चींटियां अपने भटों से निकल कर मार्च कर रही हों। मेरे दोनों लड़कों के सारे बदन पर भी फुत्सियां निकल आयीं। अमीर घरानों के बच्चे छाबड़ी-फरोश बनकर दो तीन आने रोज कमा लेते थे। मुसलमान तो कोई उनमे खरीदता नहीं था। हां, एक आध आता-जाता हिंदू खरीदे तो खरीदे। बस। आसपास के बचे हुए मकानों में सब शरणार्थी ही थे। वे बोरियों और चीथड़ों से अपने तन को ढके रखते थे। कुछ समय पश्चात् पाकिस्तानियों ने राशन की कुछ व्यवस्था की। कई मुसलमानों की ज़बानी

यह भी सुनने में आया कि अब हिन्दू हमारे शरीक हैं, उन्हें सताया न जाय । पर ये सब कहने की बातें थीं ।

हमारे मकान के पास एक गुरुद्वारा था । वहां अनेक विधवाएं रहती थीं जिनमें से कवाइली और सिपाही चुन-चुन कर अच्छी स्त्रियों को ले जाते थे । वजीर ने इनकी हिफाजत के लिये यद्यपि कई पहरदार नियुक्त कर रखे थे किंतु इस अन्धेर नगरी में उनकी कौन परवाह करता था? हैरानी यह थी कि नियमित शासन-व्यवस्था कायम होने पर भी यह गुंडा-गर्दी बराबर चलती रही ।

हमें यहां आये दो दिन बीते थे कि खान आया । बोला, “मैंने तुम्हें बहन समझा था, परन्तु तुम्हें मुझपर भी शक है, जो तुम यहां चोरी-चोरी चली आई । इतना भेद ? फिर भी मैं तुम्हें बहन कह चुका हूं इसीलिये इज्जत करता हूं । जब तक मैं यहां हूं जान देकर भी तुम्हें बचाऊंगा ।” मैंने अपराधी के रूप में कहा, “भाई, तुम ठीक कहते हो । मैं अपनी गलती मानती हूं ।” इतना कह कर मैंने चाकू की नोक से अपनी अंगुली में से खून निकाला और उसके माथे पर तिलक लगाया । फिर सूत लेकर उसके हाथ में राखी बांधी और तब उसने मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, “सुनो बहन, मेरे कबीले में दो सौ आदमी हैं । कोई तुम्हें बहन कहेगा, कोई फूफी और कोई मासी । जहां तक होगा, तुम्हें बचायेंगे । तुम्हारी हिफाजत हमारी हिफाजत होगी । तुम्हें अब अपना बोझ मुझपर छोड़ देना चाहिए । क्या तुम बता सकती हो कि तुम्हारा माल किसने लूटा है ? मैं वह सब ला दूंगा ।”

“मुझे मालूम है कि मेरा सामान किस किस ने लूटा है । पर मैंने अपनी चीजें वापिस न लेने की प्रतिज्ञा की है । मैं फटे हाल तुज रा करूंगी परन्तु चीजें नहीं लूंगी । जब मैं अपने हीरे (पति) को वापिस न पा सकी, तब इन कांच के टुकड़ों को वापिस लेकर क्या करूंगी ।” यह कहते-कहते मैंने उसे शुरू से आपबीती सुनानी आरम्भ कर दी । जब मैं किसी को कान के जेवर देने की बात सुना रही थी तब वह बोला, “बताओ,

वह किसे दिया था ?” मैंने कहा, “मैं नहीं बता सकती ।” उसने हाथ की छड़ी से छुरा खींचकर कहा, “देखो, मेरे पास यह है । पठान किसी को मारना गुनाह नहीं समझता । तुम्हें बताना होगा ।” मैंने गरदन सामने झुका दी । उसने छुरा फिर गुप्ती में डाल दिया और कहा, “मत बताओ । मैं समझ लूंगा ।” नीचे जाकर उसने नानकचन्द से कहा, “तुमने मेरी बहन को यहां पनाह दी है और तुम्हारे लड़कों ने जेल में उसकी जान बचाई है । मैं वायदा करता हूं कि तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचेगा । यहां पर अभी बहुत कुछ होगा । हां, तुम बताओ तुम्हारे पास सुना है पिस्तौल हैं । वह निकाल कर मुझे दे दो और कुछ गहने भी हैं वे भी दे दो ।” उसने उत्तर दिया, “खान, हमारे पास कुछ नहीं है । सब कुछ लूट लिया गया है । हम तो दर-दर भटक कर दस दिन बाद इस खाली मकान में आये हैं । तुम चाहो तो तलाशी ले सकते हो ।” उसने कहा, “मौलवी तुम्हारे लड़के की कांग्रेसी होने की शिकायत करता है । परन्तु मैं अब समझ गया हूं ।” यह कहकर वह चला गया और जबतक वह वहां रहा बराबर हर प्रकार से हमारी सहायता करता रहा ।

: १७ :

कुछ और घटनाएं

तीनों लड़कियों के लिए तो कपड़े मिल गये थे पर बाकी बच्चों के पास कुछ नहीं था । उनको नंगा देख कर मैंने जीन के उस टुकड़े के कपड़े मिलाने का निश्चय किया जो मेरे पति ने बुशशर्ट सिलवाने के लिये दर्जी को दिया था । और जिसे मैंने उससे लेकर दान देने को रखा हुआ था । खान ने एक दरजी को बुला भेजा । वह दोनों लड़कों की सिलवारें काटने लगा । उन दिनों पठानों के भय से हर कोई वहां सिलवार पहनता था । मैंने दरजी को रोक कर कहा, “मैं नकली मुसलमान नहीं बनूंगी और न बच्चों को बनने दूंगी । तुम हिन्दू ढंग के पाजामे बनाओ ।” उसने ऐसा ही किया । उन कपड़ों की सिलाई खान ने अपने पास से दी ।

एक दिन खान ने मुझे उदास देख कर पूछा, “क्या तुम्हें अपने मालिक की याद आती है, बड़ी सरकार ?” वह कभी-कभी मुझे बड़ी सरकार कहकर पुकारता था और जब बाहर से आता तो कहता “बड़ी सरकार ! आदाब अर्ज ।” मैंने कहा, “हां, कभी-कभी यह ध्यान आता है कि निशानी के तौर पर उनका एक कपड़ा तक मेरे पास नहीं रहा ।” यह सुनकर वह चला गया और थोड़ी देर के बाद धोबी से मेरे पति की एक पुरानी कमीज ले आया । मैंने गद्गद् होकर उसको धन्यवाद दिया और कहा, “अब मैं इसे संभाल कर रखूंगी । जब ये लड़के अपने बाप के बराबर होंगे तब इसे इन्हें पहनाकर कहूंगी कि अपने पिता के बलिदान को याद रखते हुए, तुम सदा सच्चाई के रास्ते पर चलने की कोशिश करते रहना ।”

एक दिन खान मेरे कान का जेवर ले आया । न जाने उसने कैसे उसका पता लगा लिया था । आते ही उसने चमन की मां को मेरे कमरे में बुलाकर कहा, “तुम मेरी बहन को समझाओ कि वह इसे वापिस ले ले । मैंने उसे बहन कहा है । मैं उसकी चीज दूसरे के पास नहीं देख सकता ।” मुझे उसकी भावना अच्छी तो लगी पर मैं उसकी बात कैसे मान सकती थी । मैंने दृढ़ स्वर में जवाब दिया, “हम इस समय दाने-दाने को मोहताज हैं पर मैं धन के लालच में अपने वचन को झूठा नहीं कर सकती । अगर तुम मुझे बहन समझते हो तो यह उसीको वापिस दे दो जिससे लाये हो और वायदा करो कि उसे कुछ कष्ट नहीं पहुंचाओगे ।” मैंने देखा कि खान को क्रोध आ रहा था पर उसने नम्र होकर यही कहा, “वायदा करता हूं, बहन कि इसे मैं अभी उसे वापिस कर दूंगा ।”

इन्हीं दिनों किसीने एक दिन श्रीमती मोदी से कहा कि तुम्हारे पति की लाश एक नाले में पड़ी है । हमारे तीनों साथी और चमन उसकी तलाश में निकले । बहुत ढूँढने पर वह सचमुच एक नाले में पाई गई । तब मैंने श्रीमती मोदी से कहा, “हमें उसके दाह-संस्कार का प्रबंध करना चाहिये । मैं वजीर को लकड़ी के लिये लिखती हूं । देखूं तो वह कितने पानी में है और उसकी क्या नियत है ।” सब लोगों ने मुझसे कहा, “ऐसा मत करो । कहीं कोई विपत्ति

न आ जाय ? भला पाकिस्तान में दाह-संस्कार कौन करने देगा ?” मैंने जवाब दिया, “चाहे हम दाह-संस्कार करें या न करें परंतु मैं वजीर की नियत जानना चाहती हूं।” मैंने वजीर को लिखा और उसने पांच मन लकड़ी के लिए मन्जूरी दे दी। परन्तु मन्जूरी लेने के बाद भी किसी में दाह-संस्कार करने की हिम्मत न थी। मैं, श्रीमती मोदी, चमन की माता, तीनों साथी तथा चमनलाल उस जगह गये जहां पर लाश पड़ी थी। पास ही गंगा बह रही थी। चारों पुरुष लाश को उठाकर हमारे पास ले आये। उसे एक टीन के तख्ते पर रखते देखकर श्रीमती मोदी बिलख-बिलख कर विलाप करने लगी। यद्यपि हत्या को हुए दो माह बीत चुके थे पर लाश बिलकुल ताजा मालूम पड़ रही थी। उसमें से न तो किसी प्रकार की दुर्गन्ध आ रही थी न तन पर का गोشت कहीं से सड़ा-गला था। पेट उसी तरह लगी हुई थी, कमीज और कोट उसी तरह पहना हुआ था। कहीं कोई अन्तर नहीं था। केवल एक ओर एक घाव था। चेहरे पर अपूर्व शांति थी।

अब सवाल था कफन का। श्रीमती मोदी ने एक धोती निकाली जो उन्होंने धोबी के यहां से मंगाकर अपने पति की निशानी के तौर पर रखी थी। उन्होंने उसके दो टुकड़े किये। एक टुकड़े को लाश के ऊपर डाल दिया, दूसरा अपने पास रखा। फिर हमने लाश को जल में प्रवाहित कर दिया। बाद में श्री मोदी की मृत्यु का वृत्तान्त इस तरह सुना गया कि जब हमला करने वाले उनकी कोठी के पास पहुंचे तो वह, उनकी स्त्री, दो नौकर और कमला घर से शहर की ओर चल दिये किन्तु उनका लड़का घर में ही रह गया। उसकी आयु इक्कीस वर्ष की थी। वह कहीं छत पर चढ़ कर दुश्मनों पर बन्दूक से वार कर रहा था। इनकी कोठी शहर से नीची थी। उसमें कुछ दूर जीना चढ़ कर शहर में जाना पड़ता था। जीना चढ़ते समय केवल एक नौकर को छोड़ बाकी सबको गोली लगी। जैसे-तैसे वह लोग शहर के एक नामी आदमी के घर पहुंचे। वह हिन्दू था। उसका मकान काफी बड़ा था और वहां पर सैंकड़ों परिवार खतरे से बचने के लिये आये हुए थे। वहां पहुंचकर श्री मोदी ने सबको बिठाया और स्वयं हाथ में बन्दूक लेकर चल पड़े। मुज-

फराबाद में माकड़ी नामक एक जगह है जहां पर उनका एक मुसलमान दुश्मन रहता था। उसका सड़क बनाने का कोई बिल उन्होंने पास नहीं किया था। मौत उन्हें धकेल कर वहीं ले गई। जब उन लोगों ने इन्हें देखा तो कल्ल कर दिया और लाश को दफना दिया। फिर कुछ दिनों बाद लाश को निकाल कर नाले में फेंक दिया।

श्रीमती मोदी तथा उनके साथी उस मकान में दो-तीन दिन रहे। सुना गया कि उस मकान में से कुछ लोगों ने हमला करनेवालों का मुकाबला भी किया था परन्तु अन्त में सब पकड़े गये। कहते हैं कि वहां पर किसीको पानी तक न मिला, विवश होकर स्त्रियों ने बच्चों को मूत्र पिलाया।

इन दिनों पाकिस्तानी एक और चाल चल रहे थे। उन्होंने सब सरकारी दफ्तरों और जमीनों तथा हिन्दुओं की सब जमीनों और बागों को नीलाम करना शुरू कर दिया। जो कुछ हिन्दू किसी तरह बचे हुए थे, वे अपने सामने ही अपनी जमीनों और बागों को नीलाम होते देख रहे थे। पर बोल नहीं सकते थे। मैंने कई मुसलमान भाइयों से कहा, “तुम अभी इन्हें मत खरीदो।” परन्तु उन्होंने मेरी बात न मानी। इस चाल से पाकिस्तान को काफी रुपया मिला।

इन सब विपदाओं के बीच मुझे विमल की एक बात कभी नहीं भूल सकती। वह हर समय फौजी बातें पूछता रहता था। उसने अपनी उम्रवाले लड़कों की एक बाल-सेना भी बना ली थी। एक तीर-कमान अपने गले में डाल कर वह दिन भर उन्हें कुछ सिखाता रहता था। जब कभी वह सुनता कि कबाइलियों का झुंड गली से निकल रहा है तो झट खिड़की से झांकने लगता। उसने कभी छिपने का नाम नहीं लिया। अपने साथियों से अक्सर कहता, “छिपना मत, नहीं तो तुम्हारा नाम कायरो में लिख दूंगा।” एक दिन हमारे तीनों साथियों ने उससे यह शर्त लगाई कि अगर तुम इतने गिलास पानी पियो और इतनी रोटियां खाओ तो तुम पठानों को जीत सकते हो। उस लड़के ने कई गिलास पानी पिया और कई मोटी-मोटी रोटियां खाईं जो एक सात साल का बच्चा चार बार में भी नहीं खा सकता।

सारा दिन उसे इस प्रकार दौड़-धूप करते देखकर मुझे उसपर बड़ा तरस आता था। परन्तु न जाने उसके इस फौजी खेल में कितनी भावी आशाएं छिपी हुई थीं।

एक दिन रेंजर साहब बंदूक उठाये और गले में कारतूसों की माला पहने फिर आ पहुंचे। आते ही मुझसे कहने लगे, “मुझे तुम्हारी यह हालत देखकर तरस आता है। तुम कितनी तकलीफ उठा रही हो? मैं तुम्हारे साथ कुछ नेकी करना चाहता हूं क्योंकि मेरा एक दोस्त तुम्हारे पति का दोस्त था। क्या तुम मेरे साथ चलने को तैयार हो? तुम चलो, अपने बच्चों को तथा कोई और जवान लड़कियां हों तो उन्हें भी ले चलो ताकि वह सब इस मुसीबत से छूट जायं। तुम्हें किसी से डरने की जरूरत नहीं है। देखो मेरे पास २०० कारतूस हैं और १५० रु० भी हैं।” वह नहीं जानता था कि उसकी बातों से मैंने क्या कुछ समझ लिया है। मैंने उसके चेहरे पर एक गहरी नज़र डाली। उसने सिर नीचा कर लिया। मैंने कहा, “मैं मजबूर हूं। मैं आज आपके साथ नहीं जा सकती। क्योंकि आज रात ही मैंने एक स्वप्न देखा है। कहीं से आकर किसी फकीर मर्द ने मुझसे कहा कि तीन दिन तक यहां से बाहर मत जाना। मैं तो इन बातों पर विश्वास करती हूं। इसलिए मैं तीन दिन तक तो कहीं नहीं जा सकती। हां, शायद उसके बाद आपके साथ चल सकूं।” यह कहकर मैंने उसके शैतानी चेहरे पर फिर एक नज़र डाली। इस बार भी वह मेरी नज़र से नज़र नहीं मिला सका। गर्दन नीची किए हुए ही उसने कहा, “शायद आप मुझपर भरोसा नहीं करतीं। मैं जो कहता हूं वह आपके भले के लिए कह रहा हूं। चाहे कुछ भी हो मैं रात को लारी लाऊंगा और आपको चलना होगा।” मैंने कहा “मैं आपकी हमदर्दी के लिये आपको धन्यवाद देती हूं परन्तु मैं जा नहीं सकती।” वह कहने लगा, “आप वहम की इन बातों पर क्यों भरोसा करती हैं? मैं रात को लारी लाऊंगा।” मैंने कुछ उत्तर नहीं दिया। देती भी क्या? वहां तो इनका राज्य था। वह चाहता तो बलात् मुझे पकड़ कर ले जा सकता था। जाते-जाते वह यह भी कहगया, “मेरी लारियां दोमेल में हैं

और मैं डाक बंगले में ठहरा हुआ हूँ।” उसके जाने के बाद हमारे जहाजों ने कुछ बम दोमेल पर फेंके। न जाने उसका और उसकी लारियों का क्या हुआ। वह फिर नहीं आया।”

एक दिन बातों-बातों में खान मुझसे कहने लगा, “बहन ! तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को बिलखते देख कर मेरा मन चाहता है कि उस आदमी की तलाश करूं जिसने मेहता साहब को मारा है। उसे मैं मारूं ताकि उसकी औरत और बच्चे ऐसे ही तड़पें जैसे तुम और तुम्हारे बच्चे तड़प रहे हैं।” मैंने उससे कहा, “क्या मैं उसका घर तबाह करके सुखी हो सकूंगी और क्या मेरा दुःख कम हो जावेगा। नहीं, मैं तुम्हें ऐसा करने को कभी नहीं कहूंगी। मैं भगवान् पर भरोसा करती हूँ वही अच्छे-बुरे काम देखता है। और वही सज़ा देता है। या तो हम भगवान् को छोड़ दें और स्वतंत्र बन जायें और या फिर उसे मानें और उसके सिद्धान्तों पर चलें।”

वह चुप हो गया। उसके पास इसका कोई उत्तर न था।

: १८ :

वह हत्याकांड

एक दिन कबाइली अच्छे-अच्छे नवयुवकों को राशन के बहाने बुला कर लेगये और हस्पताल में बंद कर दिया। जब लोग देर तक वापिस नहीं लौटे तो उनके रिश्तेदार उनकी तलाश में निकले। उन लोगों ने इनको भी बन्द कर दिया। नानकचंद को भी बुलाया गया लेकिन जब वह जा रहा था तो उसे रास्ते में खान मिला। उसने नानकचन्द को घर वापिस लौटा दिया।

दूसरे दिन शहर में बड़ी हलचल मची। सब भय से कांप रहे थे। सबके मुंह सूखे हुए थे। पूछने पर पता चला कि जो साठ हिन्दू कल हस्पताल में बंद किये गये थे, रात को उन सबको बड़ी बेदर्दी से कत्ल कर दिया। सुना गया कि उन्हें रात को दस बजे हस्पताल से बाहर निकाला गया और हमारी कोठी में लाकर एक लाइन में खड़ा किया गया। उसके बाद उन्होंने

एक-एक आदमी को बुलाया, उसके कपड़े उतारे और कलमा पढ़ने पर मजबूर किया। जब वह कलमा पढ़ चुका तो एक पठान औरत ने, जो उन दिनों यहां आई हुई थी, छुरा हाथ में लिया और उस जिन्दा आदमी का कलेजा बाहर निकाल कर उसे पहाड़ी से धकेल दिया। इसी तरह उन्होंने उन सबको तड़पा-तड़पा कर मार डाला। बाद में यह दर्दनाक और वीभत्स समाचार हमें कई शरीफ मुसलमानों ने सुनाया। सबको खतरा था। क्या मालूम किसको कब कुत्ते की मौत मरना पड़े। उन अभागे व्यक्तियों में एक चमन के घर रहता था। उसकी स्त्री पति की लाश भी देख आई थी।

दोपहर को जब खान मेरे पास आया तब मैंने उससे इस घटना का जिक्र किया। वह कहने लगा, “यह तो बिल्कुल झूठ है। भला कभी ऐसा हो सकता है कि हम पनाह में आये हुए लोगों को मारें।” इसपर मैंने उसे वह स्त्री दिखाई जो अपने पति की लाश देख आई थी। वह फिर भी बोला, “गलत है, तुम अपने नौकर को मेरे साथ भेजो। मैं देखूँ तो लाश कहाँ है। यह लोग झूठी अफवाहें उड़ाते हैं।” मैंने कहा “तुम्हारे साथ मेरा नौकर जा सकता है। मैं तो तुम्हारा यकीन करती हूँ परन्तु और लोग कैसे करें? वह तो लाश देख कर आये हैं।” वह उठा और कहने लगा कि मैं शाम को आऊंगा, तब तुम्हारे नौकर को ले जाऊंगा। शाम को वह आया और मेरे दोनों साथियों ओम् और जोधा को ले गया। बाजार में उन्हें एक दुकान पर बैठाया और यह कह गया कि तुम बैठो, मैं नमाज़ पढ़ कर आता हूँ। नमाज़ के बाद वह आया और उन दोनों को हमारी कोठी के नीचे वाली पहाड़ी पर ले गया। उनसे कहने लगा, “बताओ कहाँ है वह लाश?” एक जगह खून के धब्बे देखे तो कहने लगा, “हां, यह खून है जरूर परन्तु क्या मालूम कि आदमी का है या जानवर का। तुम लोग ऐसे ही माताजी को कहते रहते हो कि आज यह हुआ, कल वह होगा। अब जाकर उनसे यही कहना कि हमने वहां कुछ नहीं देखा है।” वे दोनों चुप रहे। भय के कारण उन्हें कुछ और पूछने की हिम्मत नहीं हुई।

उन दोनों को खान मेरे पास लाया और कहने लगा, “पूछिये, क्या इन्होंने वहां पर कहीं कोई लाश देखी है?” दोनों ने बताया, “हमें वहां कोई लाश नज़र नहीं आई।” वह फिर बोला, “वहां तो खून के धब्बों के सिवाय और कुछ नहीं है। वह खून किसका है, किसी जानवर का या आदमी का, यह किसी को पता नहीं। मैं सवेरे जाकर देखूंगा। तब आपको बतलाऊंगा। मैं अन्धेरे में खून की पहचान नहीं कर सका।”

उसके चले जाने के बाद मैंने दोनों साथियों से पूछा, “क्या तुमने वह कुछ भी नहीं देखा।” वह कहने लगे कि लाश तो वहां पर कोई नहीं थी, परन्तु जमीन ताजी खोदी हुई नज़र आ रही थी और ऐसा मालूम होता था कि लाश मिट्टी में दबा दी गई है। यह भी मालूम देता था कि कोई चीज वहां से नीचे फेंकी गई है। इधर-उधर बहुत से कपड़े बिखरे पड़े थे। एक जगह पर गोشت के कुछ टुकड़े पड़े हुए थे। मैंने कहा, “तो तुम उसके सामने क्यों नहीं कहा कि हमने यह सब देखा था। मैंने तुम्हें किस लिये भेजा था?”

वे कहने लगे, “हम क्या कहते, हमें उससे कुछ भी पूछते भय लग रहा था और फिर उसने हमें सब कुछ इस तरीके से दिखाया कि हमें सवाल पूछने का अवसर ही नहीं मिला। कहने लगा, माताजी के सामने कुछ मत कहना। हम नहीं चाहते कि उनका दिल दुखे या उन्हें कोई कष्ट पहुंचे। बाद में मुझे यह पता लगा कि सचमुच वहां लाश दबाई गई थी। मेरे समझ में यह बात नहीं आई कि खान ने यह भेद गुप्त क्यों रखा। लाश दफनाई क्यों और फिर मेरे साथियों को वह दिखाने क्यों ले गया।

दूसरे दिन सवेरे खान फिर आया और बोला, “मैं खून देखने गया था, अभी वहीं से आ रहा हूं। वह एक आदमी का खून है, जिसको यहां वजीर ने मरवाया है। सुना है कि काश्मीर के प्रधान मंत्री शेख मुहम्मद अब्दुल्ला ने उसके सारे परिवार को कैद कर रखा है और उन्हें बड़ी तकली दे रहा है। इसी कारण यह वजीर यहां पर हिन्दुओं से उसका बदला ले रहा है और उन्हें मरवा रहा है।” मैंने कहा, “मैं यह नहीं मानती कि उसका

परिवार श्रीनगर में कैद हो, तो यहां के हिन्दुओं से उसका बदला लिया जाय। यह तो बेसिर-पैर की बात है।” वह फिर भी यही बोला, “चूंकि महाराजा काश्मीर के कहने पर शेख मुहम्मद अब्दुल्ला यह सब कर रहा है, तभी यहां पर हिन्दू सताये जा रहे हैं।”

इस दुर्घटना का यहां बड़ा असर पड़ा और कई दिन तक लोगों में इस बात की चर्चा रही। अन्त में इसका रहस्य खुला कि यह सब डाक्टर और उसकी पार्टी की कार्रवाही थी और कुछ स्थानीय मुसलमान भी इस हरकत में शामिल थे।

इसके कुछ दिन बाद एक दिन फिर हिन्दुओं में सख्त बेचैनी फैली। वे लोग हिन्दुओं को मस्जिदों में ले जाने लगे और उन्हें मुसलमान बनने पर मजबूर करने लगे। वे स्त्री-बच्चों सबको कलमा पढ़ाने और सिखाने लगे। आसपास के गांवों से भी मुसलमानों के पंच आए हुए थे। वे हिन्दुओं को, जो उनके गांवों से भागे हुए थे, ले जा रहे थे। वे शहर के लोगों को भी हमदर्दी दिखाकर गांव में ले जाते थे और वहां पर उन्हें मुसलमान बना कर रखते थे। नानकचन्द को भी उसका एक मित्र गांव चलने के लिए मजबूर करने लगा। वे सब तैयार भी हो गए, पर इतने में खान आया और उसने उन सबको रोका। कहने लगा, “तुम मत जाना, तुम यहीं रहो, यहां पर तुम्हें कोई तकलीफ नहीं होगी।” वे रुक गए परन्तु उनकी बेचैनी कम नहीं हुई। सारे शहर में यह चर्चा थी कि जो कोई खुशी से इस्लाम कबूल करेगा, वही पाकिस्तान में रह सकेगा। उसे उसकी छीनी हुई जमीन भी वापस मिल जायगी। हमारे डेरे पर भी कुछ लोग आये और सबको डरा-धमका कर लेजाने लगे। मेरी बड़ी लड़की वीणा और बड़ा लड़का सुरेश मेरे पास आए और कहने लगे, “माताजी! पापा ने झूठ कहना पसन्द नहीं किया था कि वे मुसलमान हैं, किन्तु क्या अब हमें मुसलमान बनना पड़ेगा?” मैंने बच्चों को अपने पास बैठाया और पूछा, “क्या तुम मौत से डरते हो?” वे कहने लगे, “नहीं।”

“तो फिर तुम्हें डर किस बात का है। जो मौत से नहीं डरते,

उन्हें घबराने की क्या जरूरत । हम नहीं जायेंगे, ” मैं बोली ।

उस घर के सब लोग जाने को राजी हुए । मैंने ओम् से कहा, “भाई, अगर तुम मौत से डरते हो तो जाओ, मैं तुम्हें जान-बूझकर मौत के मुंह में नहीं धकेलना चाहती; परन्तु मैं और मेरे बच्चे नहीं जायेंगे । मैं नकली मुसलमान नहीं बनूंगी ।” ओम् ने भी जाने से इंकार कर दिया । कितना निडर था वह, एक तरफ मौत थी—दूसरी तरफ मैं । परन्तु उसे मेरा साथ छोड़ना पसन्द नहीं था । मरना पसन्द था । हम इस इन्तजार में थे कि देखें, अब हमारे साथ क्या सलूक होता है ।

वे लोग बाकी लोगों को मस्जिद में ले गए, कलमा पढ़ाया और वजू करना सिखाया । उनमें कई स्त्रियां भी थीं । मेरे बारे में भी मस्जिद में पूछा गया कि उसे क्यों नहीं लाये । लोगों ने बताया कि वह आने से इन्कार करती है । जब वे मस्जिद से बाहर निकले, तो उन्हें खान मिला और कहने लगा, “तुम यहां पर क्यों आये हो ? जल्दी यहां से जाओ । तुम्हें यहां नहीं आना चाहिए था ।” जब वे घर आए तो उनके चेहरों पर भय के स्थान पर शान्ति थी । उन्हें विश्वास था कि अब उन्होंने इस्लाम कबूल कर लिया है । अब उन्हें कोई नहीं सतायेगा ।

दूसरे दिन पुलिस का एक अफसर मेरे पास आया और कहने लगा, “आप कल मस्जिद में क्यों नहीं आई थीं ? कल तो तकरीबन सभी मर्द और औरतें मुसलमान बन चुके हैं ।” मैंने कहा, “मैं नहीं जाऊंगी । मैं सारी चाल समझ रही हूं । अगर पाकिस्तान की हकूमत मुझे लिखकर भी दे कि तू हिन्दू है, तेरे लिए यहां अनाज नहीं है, तो भी मैं अपना मजहब छोड़ने के लिए तैयार नहीं हूं । मैं आपके मजहब की उतनी ही इज्जत करती हूं, जितनी अपने मजहब की । परन्तु चार दिन की जिन्दगी के लिए मैं नकली मुसलमान नहीं बनूंगी । जब मैं अपने मजहब की, जिसमें मैंने जन्म लिया है, रक्षा नहीं कर सकती तो मैं आपके मजहब की, जिसे मैं भय के कारण ग्रहण करूंगी, कैसे रक्षा कर सकूंगी । मैं हिन्दू रहकर आपके मजहब की इज्जत करना चाहती हूं । आप मुझे और मेरे बच्चों को मार ही तो डालेंगे,

सो हम, उसके लिए तैयार हैं। मुझे मेरी कोठी में जहां पर मेरे पति को गोलियों से मारा था, ले चलिए। पहले मेरे छः बच्चों को खत्म कर दीजिए, फिर मुझे।” इसपर वह कहने लगा, “बहन ! तुम बेफिक्र रहो, तुम्हें कोई मजबूर नहीं करेगा।”

: १६ :

खान का परिचय

एक दिन खान मेरे पास बैठा हुआ था, कि एक पुलिस अफसर वहां आया। खान को देखते ही उसका रंग बदल गया। वह कभी-कभी मेरे पास आया करता था और पूछा करता था कि कोई तकलीफ तो नहीं है। खान को देखकर वह चला गया। और जब खान मेरे पास से चला गया, तो वह अफसर मेरे पास आकर बोला, “क्या आप जानती हैं कि यह कौन है और कितना खतरनाक है। आपको हर एक के सामने नहीं आना चाहिए और हर किसी पर भरोसा नहीं करना चाहिए। कुछ दिन पहले जो आपकी कोठी में हिन्दुओं को मारा गया था, वह सब इसी की कार्रवाई थी।”

मैं उसकी बातों का मतलब समझ गई। मैंने उससे कहा, “तुम कहते हो कि मुझे हर एक के सामने नहीं आना चाहिये। पर तुमने हमारी हिफाजत का कौन-सा प्रबन्ध किया है ? दिन में कितनी मरतबा हमें और लड़कियों को तहखाने में छिपना पड़ता है। वहां हमने घास इसलिये रखी है कि समय पड़ने पर लड़कियों को आग की शरण मिल सके। देखिये, हमारे घर के सामने की धर्मशाला वाले कैम्प में औरतें हैं। कबाइली जिसको चाहते हैं जबरदस्ती घसीट कर ले जाते हैं। मैं खान का एहसान कभी नहीं भूलूंगी। इसने सच्चे दिल से मेरी सहायता की है। आपका भी धन्यवाद करती हूं। आपने भी मुझे नसीहत दी है।”

असल में वह खान को देखकर डर गया था। उन दिनों इनमें कुछ फूट पड़ गई थी। जिन लोगों को मस्जिद में मुसलमान बनाया गया था,,

जब उनसे रिश्ते मांगे जाने लगे तब उन्हें अपनी गलतियों का पता चला। कुछ थोड़ी-सी शादियां हुई भी। जहां तक मैंने सुना और देखा, अन्य स्थानों की तरह मुजफ्फराबाद के मुसलमानों ने भी हिन्दू लड़कियों और स्त्रियों की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखा। हां, पाकिस्तान से आये हुए कबाइलियों और फौजियों ने बड़े अत्याचार किये।

एक दिन खान आया और कहने लगा, “बहन, अब मैं जा रहा हूं, हमारी सब पार्टिंजारही है। मुझे कुछ निशानी दो। उसे मैं अपने बच्चों को दिखाऊंगा” भला मेरे पास क्या था जो मैं उसे देती। मैंने कहा, “मेरे पास क्या है?” उसने वह खेस मांगा जो मैं घर से लाई थी। इसे मैंने संभाल कर रखा हुआ था। यह मेरे पति की पसन्द की वस्तु थी। यह सुनकर मेरे मन को भारी धक्का लगा। मैं उसे देना नहीं चाहती थी, परन्तु इन्कार भी नहीं कर सकती थी। मैंने मन में सोचा कि यह भी तेरी परीक्षा है, दे दे। दुःख काहे का। उठाया, और अश्रुपूरित नेत्रों से छू कर उसे दे दिया। कई मरतबा पहले बातों-बातों में मैं उससे कह चुकी थी कि यह खेस मेरे पति को बहुत प्रिय था। मैं इसे संभाल कर रखूंगी। आज वही यह मुझसे मांग रहा था।

सचमुच मेरे लालची मन को यह खेस देते हुए बड़ी ठेस पहुंची। उसने मेरी एक तस्वीर भी ली और कहने लगा, “बता बहन ! तेरा काश्मीर में कौन है? अगर हम वहां पहुंचे, तो उसे मैं जरूर बचाऊंगा।” मैंने कहा, “सारा काश्मीर मेरा है।” वह चुप रहा। मैंने फिर कहा, “जब तक आप यहां पर रहे, आपने मेरी सहायता की। अब ईश्वर मददगार है।”

वह बोला, “मैं तुम्हें कई बार कह चुका हूं कि मेरे साथ काबुल चलो। वहां से फिर मैं तुम्हें हिन्दुस्तान पहुंचा दूंगा, परन्तु तुम मानती नहीं हो।” मैंने कहा, “मैं एक कैदी हूं। मैं भाग कर कहीं नहीं जाऊंगी।” इस पर उसने कहा, “कल मैं अपने हाथ से कुछ लिख कर लाऊंगा और बाहर दरवाजे पर चिपका दूंगा। उसे देखकर किसी को अन्दर आने की हिम्मत न होगी।” जब वह चला गया तब इस घर के सब लोग हंसने लगे और मजाक करने लगे कि खान अपने आपको न जाने क्या समझता

है ? अक्सर जब वह यहां से जाता, तो इसकी बातों का खूब मजाक उड़ाया जाता था । दूसरे दिन वह एक कागज लाया, जिसपर लाल स्याही से लिखा था, “कोई हिन्दू या मुसलमान बिना पूछे इस मकान के अन्दर दाखिल न हो । अगर बिना पूछे दाखिल हुआ तो कुल कबाइली इलाका उसका दुश्मन हो जायेगा ।”

“आगा जान खां”

लीडर, कबाइली इलाका ।

खान मुझे कागज दिखा कर कहने लगा, “देखो लाल स्याही से लिखा है । इसका मतलब है कि पठान के खून से लिखा गया है । जो इसका हुक्म तोड़ेगा उसे पूरी सजा मिलेगी । मेरे पीछे यह कागज तुम्हारी हिफाजत करेगा । यह कहकर वह बाहर चला गया और कागज को दरवाजे के ऊपर—ऊंची जगह पर चिपका गया । इस कागज पर उसका पता देख कर हमें मालूम हुआ कि यह खान कोई मामूली आदमी नहीं है ।

वह चला गया और उसके जाने के बाद हमें पता चला कि डाक्टर और उसकी पार्टी को उन साठ आदमियों के कत्ल के सम्बन्ध में जवाब देने के लिये वापस बुलाया गया है । खान के जाने के एक महीने पश्चात् उसका एक पत्र मुझे मिला, जो पुलिस ने खोल कर मेरे पास भेजा । उसमें लिखा था—

हमशीरा कृष्णा,

आदाब अर्ज । मैं घर पहुंच गया हूं, लेकिन मेरा ध्यान तुम और तुम्हारे बच्चों की तरफ लगा है । मैं तुम्हारे लिये खुदा से दुआ मांगता हूं कि वह हर तरह तुम्हारी मदद करे ।

तुम्हारा भाई,

आगा जान खान

बन्तू, कोहाट ।

मैंने उसके पत्र का उत्तर दिया, परन्तु उसका कोई जवाब मेरे पास नहीं आया । शायद हुकूमत की तरफ से उसके पास पत्र लिखना मना था । जो

इश्तहार उसने हमारे दरवाजे पर चिपकाया था, उससे हमें काफी सहायता मिली। आम आदमी को अन्दर आने की हिम्मत नहीं होती थी।

मेरे मुजफ्फराबाद छोड़ने के बाद भी वह इश्तहार वहीं चिपका रहा। कई लड़कियों को इन जालिमों के हाथ से बचा कर वहां छिपाया गया। वे सब श्री नानकचन्द के साथ बचकर हिन्दुस्तान पहुंचीं।

: २० :

पाकिस्तान के आंसू

कभी-कभी वहां पाकिस्तान की ओर से हिंदुओं के लिये बड़ी हमदर्दी का दिखावा होता था। इन दिनों रावलपिंडी से शरणार्थियों की सहायता करने के लिये कालिजों के काफी लड़के आये हुए थे। पुराने कम्बल और कपड़े बांट रहे थे। एक दिन पाकिस्तान के लोगों ने गुड़ की रोटियों की कई पेटियां भेजीं और लड़कों ने इन्हें हर गली में तकसीम किया। किसीको आधी और किसीको पूरी मिली। बच्चे, बूढ़े, स्त्रियां तथा बड़े-बड़े इज्जतदार आदमी किस बेताबी से भूखे भिखारियों की तरह उनपर टूट रहे थे, यह देखते ही बनता था। भूख की ज्वाला ने उन सबको बेहाल कर दिया था। रोटियां बंटती देखकर मेरा नौकर ओम् भी वहां चला गया। उसे लालच ने आ घेरा और कुछ लड़कों ने उसे पहचान कर पांच रोटियां दे दीं। वह प्रसन्नतापूर्वक लेकर मेरे पास आया, हंसकर कहने लगा, “माताजी, मैं बच्चों के लिये मीठी रोटियां लाया हूं।” रोटियां देखकर मेरा खून खौलने लगा। मैंने कहा, “ओम्! यह तुमने क्या किया? बिना मेरे पूछे रोटियां ले आये। क्या तुम्हें बहुत भूख लग रही थी। क्या तुम मेरी बात भूल गये? जाओ, यह रोटियां वापस लौटा आओ। मैं जानती हूं कि खुराक की कमी है। पर खुराक की कमी से क्या कोई मरता है। देखो मैं केवल एक समय खाती हूं और वह भी भरपेट नहीं, पर इससे क्या मेरा जीवन समाप्त हो चला है? जितने लोग यहां हैं, मुझे उन सबसे अपने बच्चों और तुम लोगों की सेहत

अच्छी जान पड़ती है। इसलिये जो भी काम करो मेरी और अपनी इज्जत का ध्यान रख कर करो।” वह कहने लगा, “अब हमारी क्या इज्जत है, माता जी? हम दूसरों के टुकड़ों पर पल रहे हैं।” मैंने कहा, “नहीं ऐसा नहीं है। हमारी इज्जत आज भी उतनी ही है, जितनी कि पहले थी और अन्त तक उतनी ही रहेगी। हम उनके कैदी हैं और कैदी की हैसियत से उनका अन्न खाते हैं। उससे ज्यादा हम कुछ नहीं लेते और न ही हम कोई ऐसा काम करते हैं, जिससे हमें नीचा देखना पड़े।” मेरी बात सुनकर उन लोगों ने अपनी गलती मान ली। मुझे इससे बड़ी प्रसन्नता हुई। मुझे अक्सर यह ध्यान रहता था कि यह लोग क्या कार्रवाई करते हैं। एक दिन मैंने जोधा और ओम् से कहा, “हमारी कोठी से थोड़ी-सी सब्जी तो ले आओ। शायद अभी वहां कुछ साग वगैरह मिल जाये और देख आना कि वहां आजकल कौन उतरा है और वे लोग क्या कर रहे हैं?” वे दोनों वहां जाकर साग चुनने लगे। जब वह चुन रहे थे, तो एक सिपाही उनके पास आया। वह बलोची रेजीमेंट का था। उसने उनसे पूछा, “तुम यहां क्यों आये हो और तुम्हें किसने भेजा है?” उन्होंने कहा, “यह कोठी यहां के वजीर वजारत की थी। उनकी पत्नी ने हमें यहां भेजा है। यह सब्जी वजीर साहब के हाथ की लगाई हुई है।” वह पूछने लगा, “उसका कितना परिवार है, कितनी लड़कियां हैं और उनकी कितनी आयु है।” जवाब में इन्होंने कहा, “लड़कियां तो छोटी हैं।” इसपर उसने कहा, “खबरदार अब आगे से यहां आने की कोशिश मत करना। नहीं तो गोली से उड़ा दिये जाओगे।” यह कहकर वह अंदर चला गया। इसी बीच में ओम् भी इस कोठी के चौकीदार से, जो हमारे समय में भी वहां पर चौकीदार था, बातें करने के लिये चला गया। इतने में वह सिपाही वापस लौट आया और जोधा से कहने लगा, “तुम्हें हमारा अफसर बुलाता है, जल्दी चलो।” जोधा घबड़ा कर उसके साथ चल पड़ा। अफसर ने भी वही बातें पूछीं कि तुम्हारी मालिकन की क्या आयु है? उसकी कितनी लड़कियां हैं? क्या उम्र है उनकी? और तुम यहां पर बिना हमारे हुक्म के क्यों आये? तुम्हारा दूसरा साथी कहां गया? क्या तुमने यहां पर कुछ

घन गाड़ा है? जिसे लेने के लिये आये हो।” जोधा कांप रहा था। ओम् को यहां-वहां बहुत ढूँढा, पर वह न मिला। अब वे जोधा से कहने लगे, “तुम अपने साथी को पेश करो, नहीं तो हम तुम्हें गोली से उड़ा देंगे।” उसने कहा, “मैं उसे घर जाकर ले आता हूँ।” पर वह उसे अकेला आने नहीं देते थे। आखिर उन्होंने उसके साथ एक सिपाही भेजा। वे दोनों हमारे डेरे पर आये। सिपाही नीचे आंगन में धूनी के पास, जो यहां पर हर समय जलती रहती थी, बैठ गया। वहां चमन की मां और बहन भी बैठी हुई थीं। एक अनजान सिपाही को अन्दर आते देखकर वे बहुत घबराईं परन्तु धीरज रख कर उससे पूछा, “तुम यहां क्यों आये हो?” वह जोधा की ओर देख कर कहने लगा, “इस आदमी ने हमें धोखा दिया है। अपने साथी को इसने यहां पर छिपा रखा है, हम उसे लेने आये हैं। जब तक वह नहीं मिलेगा मैं यहीं बैठा रहूंगा।” ओम् घर पर नहीं था। जोधा भी वहीं पर सिपाही के साथ बैठा रहा। जब ओम् घंटे भर तक नहीं आया, तो चमन की मां ने कहा, “तुम यहां से चले जाओ। जब वह आयेगा, तो हम उसे वहीं भेज देंगे।” परन्तु वह उठने का नाम नहीं लेता था। वह सब घबराये, न जाने यह यहां क्या देखने आया है। न जाने अब क्या गुल खिलता है। जब वह वहां से नहीं उठा, तब जोधा मेरे पास ऊपर आया। सारी बात मुझे बताई। वहां पर चमनलाल, उसका पिता और तीन-चार आदमी और भी बैठे थे। सब लोग यह सुनकर चिंतित हो गये। चमन ज़रा तेज़ होकर बोला, “तुमने दो आने की सब्जी के लिये यह क्या नया बखेड़ा मोल ले लिया है।” गलती स्पष्ट मेरी थी। पर साग का तो बहाना था। वास्तव में मैं चुप नहीं रह सकती थी। जब चार दिन शांति से गुजर जाते थे, तो नई बात देखने को मन करता था। मैं उठी और नीचे गई। सिपाही से पूछा, “तुम कैसे आये हो?” उसने कहा, “दो आदमी हमारे यहां सब्जी लेने आये थे। हमारे रोकने पर एक को इसने भगा दिया। जब तक वह आदमी हमें नहीं मिलेगा, तब तक हम यहां से नहीं जायेंगे।” मैंने कहा, “भाई, इसमें गलती मेरी है। मैंने ही इन्हें सब्जी लेने बगीचे में

भेजा था। यह बगीचा कभी हमारा था। दूसरा आदमी कहीं भागा नहीं है, यहीं कहीं पर है, आ जायेगा। तुम फिजूल यहां बैठ कर क्यों वक्त बरबाद करते हो। जाओ, अपने अफसर को कह दो कि जब वह आदमी आ जायेगा, मैं भेज दूंगी। यह घर मेरा नहीं है। ये लोग यहां किसी गैर का आना पसंद नहीं करते।” वह उठा और चला गया। बाहर निकलते ही ओम् उसे दरवाजे पर मिल गया। इसपर वह दोनों को अपने अफसर के पास ले गया। उसने दोनों को खूब धमकाया और कहा, “फिर कभी इस तरफ आने की कोशिश मत करना। इस बार मैं माफ करता हूं। अगर दूसरी बार यहां आये, तो गोली से उड़ा दिये जाओगे।” यह कह उन्हें वापस भेज दिया। प्रभु ने उन्हें मौत के मुंह से बचा दिया।

हमारे साथ ही गुरुद्वारे में हिंदुओं का एक बड़ा भारी कैंप था। वहां पर प्रति दिन गांव या शहर के मुसलमान आकर नवजवान स्त्रियों को विवाह करने पर मजबूर करते थे। तब सब लोगों ने मिलकर मशविरा किया और कुछ लड़कियों की शादी वहीं कैंप के कुछ लड़कों के साथ कर दी। हालांकि वह लड़के शादी के काबिल नहीं थे, पर जालिमों को यह बताने के लिये कि ये सब विवाहित हैं, ऐसा करना पड़ा। शिवदयाल ने भी एक विधवा से शादी कर ली। उसकी यह हरकत मुझे पसंद नहीं आई। क्योंकि इसकी पहली स्त्री श्रीनगर में थी। वह कहने लगा, “अगर मैं इस लड़की को बचा सकता हूं, तो मैं शादी कर लूंगा। नहीं तो इसे कोई बदमाश ले जायेगा।” उसने शादी की और हमारी पार्टी से अलग होकर रहने लगा। उसी गुरुद्वारे में ग्रंथ साहब के पन्ने इधर-उधर बिखरे हुए थे। चमन की मां ने उन्हें इकट्ठा किया और बाद में बड़ी कठिनता से कृष्णगंगा के अर्पण कर आई।

हमारे साथ ही कैम्प में एक स्त्री, जिसके पति का कुछ पता नहीं था, कहीं दूसरे सज्जन के यहां एक विवाह में सम्मिलित होने को आई थी। उसके साथ एक बच्चा था और वह अपने एक रिश्तेदार के साथ रह रही थी। वे उसे मजबूर कर रहे थे कि वह किसी मुसलमान से शादी कर ले। वे उसे खाना नही दे सकेंगे? वह कई दिन से भूखी थी। वह हमारे पास आई

और अपनी दर्द भरी कहानी सुना कर कहने लगी, “मैं भूखी रह कर जान दे दूंगी, परन्तु मुसलमान से शादी नहीं करूंगी। मेरे रिश्तेदार मुझे एक मुसलमान से शादी करने पर मजबूर करते हैं। न जाने इसके बदले मैं वे उससे रुपया या अनाज, क्या ले रहे हैं।” मैंने उससे कहा, “तुम मजबूत बनी रहो, तुम्हारे साथ कोई जबर्दस्ती नहीं कर सकता। रही खाने की बात, सो सुबह का खाना थोड़ा-सा हमारे यहां से ले जाया करो। हम ज्यादा नहीं दे सकते हैं।”

जब तक हम मुजफ्फराबाद में रहे एक समय का खाना, जो कुछ भी दे सकते, उसे देते रहे। उन दिनों हमें अनाज की कुछ खास दिक्कत नहीं थी। वजीर ने हमारे लिये स्पेशल राशन मंजूर कर दिया था। घी और थोड़ा-सा साबुन भी मिल रहा था।

एक दिन चार बजे के करीब दरवाजा खटखटाने की आवाज़ आई और गली में बड़ी हलचल मची। दरवाजा खोला तो देखते क्या हैं कि बीस-तीस वर्दीपोश सिपाही, कुछ फौज के अफसर-ब्रिगेडियर वगैरह, उनके साथ वहां के वजीर वजारत और पुलिस सुपरिन्टेंडेंट सब हैं। वे लोग अन्दर दाखिल हुए और घरवालों से मेरे बारे में पूछने लगे। “वह कहाँ है?” चमन उन अफसरों को मेरे कमरे में ले आया। उस समय वहां एक मिट्टी के दिये की धुंधली-सी रोशनी हो रही थी। कई दिन के बाद आज हमने यह दिया जलाया था। मेरे दोनों बच्चे मेरे पास थे। मैंने उनसे कहा, “अब शायद तुम्हें भी अपनी बहनों के लिये मरना पड़े।” इसपर मेरा बड़ा लड़का सुरेश कहने लगा, “माताजी, एक को तो पापा के खान्दान के नाम के लिये जिंदा रहने दो।” मैंने उसे डांटा, “तुम कायर क्यों बन रहे हो? कायर बनकर तुम खान्दान का नाम डुबो सकते हो, रोशन नहीं कर सकते।” वह कहने लगा, “मैं अपने लिये नहीं कह रहा हूं, माताजी। दो में से एक रहे।”

सबने आकर मुझे सलाम किया। मैंने उनसे कहा, “भाई, मैं रोज की दिक्कतों से तंग आ गई हूं, आप एक भरतबा ही हम सबको क्यों नहीं

खत्म कर देते ?” इसपर वे सब कहने लगे, “आप घबरा क्यों रही हैं ? हम आपकी मदद करने आये हैं। हम चाहते हैं कि आप रावलपिंडी जाकर रहें। वहीं पर आपका सब इंतजाम हो जायेगा।” मैंने कहा, “मैं तो आपकी कैदी हूँ, एक कैदी की हैसियत से आप जहाँ-कहीं भी रखें, रह सकती हूँ।” उनमें से एक अफसर बोला, “क्या तुम हिंदुस्तान जाना चाहती हो ?” मैंने कहा, “मैं अभी कहीं नहीं जाऊंगी। यहीं रहूंगी।” वह कहने लगे, “हमने तुम्हारे लिये लारियों का इंतजाम किया था, परन्तु तुम लोग तो किसी पर विश्वास नहीं करते हो, हम क्या करें ?” और वे चले गये।

: २१ :

मुजफ्फराबाद ! अलविदा

एक दिन का जिक्र है। शहर में किसीके स्वागत की तैयारियां हो रही थी। सुनते थे कि कोई नेता आनेवाला है। था भी ऐसा ही। जम्मू का रहने वाला चौधरी अब्दुल हमीद आनेवाला था। वह अब पाकिस्तान में रहने लगा था। गांव-गांव से लोगों को इकट्ठा किया जा रहा था। चौधरी साहब आये। बड़ा समारोह हुआ और उन्होंने बड़े भाषण दिये। उस दिन प्रातःकाल जब मैं नींद से जागी, तो मेरा मन बहुत ही उदास होरहा था। मैं नानकचंद के पास गई और धूनी के पास बैठकर उससे बातें करने लगी। मैंने कहा, “ऐसा जान पड़ता है कि मुझे अब यहां से जाना पड़ेगा। न जाने अभी किन-किन कठिनाइयों का सामना करना बाकी है।” यह कहते-कहते मेरी आंखों से आंसू बहने लगे। वह हैरान होकर कहने लगा, “कहां जा रही हैं आप ?” मैंने कहा, “मैं नहीं जानती, परन्तु मेरे अन्दर की आवाज मुझे बता रही है कि मैं शीघ्र ही मुजफ्फराबाद छोड़ूंगी।”

परन्तु तब भी यह कोई नहीं जानता था कि हमें आज ही मुजफ्फराबाद छोड़ना पड़ेगा। हम लोग खाना खाकर बैठे ही थे कि बहुत-से लोगों के साथ चौधरी अब्दुलहमीद साहब मुझसे मिलने के लिये आये। उनके साथ बहुत

से अफसर थे और कुछ स्थानीय आदमी भी थे। लद्दाख घाटी के रहनेवाले एक काचर अहम्मद शाह भी उनके साथ थे। पहले वहां पर वह रियासत की ओर से माल अफसर थे। गड़बड़ होने के बाद इन्होंने अपने जिम्मे कुछ काम नहीं लिया था। आज-कल यह फिर काश्मीर में माल का काम कर रहे थे और दुर्रानी भी इनके साथ था, जिसका जिक्र मैं पहले भी कर चुकी हूं। आते ही चौधरी साहब ने मेहता साहब के लिये बड़ा अफसोस जाहिर किया। मैंने कहा, “चौधरी साहब! आप अफसोस किस बात का कर रहे हैं? वह तो अमर हैं। आप मुझे मेरे पति के इस शानदार बलिदान पर मुबारकबाद दीजिये।”

उसने कहा, “आपको मुबारिक हो।” मैंने उनको धन्यवाद दिया। वह कहने लगा, “अगर मेहता साहब ने मुझे पिछले दिनों रियासत में दाखिल होने से न रोका होता, तो मेरे बच्चे जम्मू में कत्ल होने से बच जाते। लेकिन मेरे दोस्त होते हुए भी उन्होंने मुझे रियासत में दाखिल नहीं होने दिया।” मैंने कहा, “चौधरी साहब, मुझे आपके बच्चों के कत्ल होने का बहुत ही खेद है। न जाने लोग क्यों पागल हो गये हैं। रहे मेहता साहब, वे तो राज्य के सेवक थे। उन्होंने जो किया, राज्य की हिदायत के अनुसार किया। आपके स्थान पर उनका अपना लड़का होता, तो भी वे ऐसा ही करते।” “आपकी सब बातें हमने सुनी हैं।” वह बोला, “और वही बातें हमें यहां तक खींच लाई हैं। बताइये, मैं आपकी क्या मदद कर सकता हूं?” काचर अहमद शाह बोला, “यह एक अच्छे खानदान से ताल्लुक रखती हैं। आप तो शायद इनके पिता को भी जानते होंगे?” उसने फिर मेरे पिता का नाम लिया। चौधरी कहने लगा, “मैं आज ही यहां से जा रहा हूं, अगर आप मेरा यकीन करें, तो मैं आप और आपके बच्चों को जम्मू की सीमा तक पहुंचा आऊंगा। वहां से हम आपके बदले में अपने कुछ आदमी लेंगे, जो वहां पर फंसे हुये हैं।”

मैं चुप रही। फिर वह कहने लगा, “आपको किसीका तो यकीन करना ही चाहिये।” इतने में दुर्रानी कहने लगा, “बहन जी, मैं भी तो साथ हूं।

चलिये आप । आपमें और मेरी बहन में क्या कोई फर्क है । जैसी मेरी बहन वैसी आप ।” उसकी बहन मेरी सहेली थी, यह बात सही थी । मैंने कहा, “मैं चलती हूं । मुझे सबपर विश्वास है । इन्सान से बढ़कर भगवान् पर । जैसे वह चलायेगा, चलूंगी । यहां भी वही साथ है, वहां भी वही साथ रहेगा । मेरे साथ दो नौकर और श्रीमती मोदी भी हैं । इन्हें भी साथ ले जाना होगा । इसपर चौधरी साहब बोले, “सब तो नहीं जा सकते और न ही मैं इन्हें ले जा सकता हूं ।” मैंने कहा, “अबतक हम एक दूसरे के साथ रही हैं और एक दूसरे की सहायता से हमने दिन व्यतीत किये हैं । अब मैं इन्हें छोड़कर नहीं जा सकती । या तो सब को ले चलिये और या फिर सब को रहने दीजिये ।” बहुत कहने-सुनने पर वह सबको ले जाने को राजी हो गया । कहने लगा, ‘आप जल्दी सामान बांधिये । हम एक घंटे तक आयेंगे ।” हमने जल्दी-जल्दी अपने चीथड़े इकट्ठे किये और जो कुछ हमारे पास टूटे-फूटे बरतन थे, उन्हें भी बांध लिया और तैयार हो गये, दूसरी दुःखभरी मंजिल का सफर तय करने के लिये ।

हम सब गिनती में ग्यारह थे । दो नौकर, मैं, मेरे पांच बच्चे, सुदेश, कमला तथा श्रीमती मोदी । जितने परिवार उस घर में रहते थे, सब-के-सब हमारे पास आकर बैठ गये । सबकी आंखों में आंसू थे । मुझे भी मुजफ्फराबाद छोड़ते हुए बहुत दुःख हो रहा था । कैसे यहां पर आई थी । अब अपना सब कुछ इसी भूमि के अर्पण कर जा रही थी । रह-रह कर गला भर आता था । भविष्य का कुछ पता नहीं था; क्या होगा कहां जायेंगे ?

घंटे भर बाद दुर्रानी आया और चलने को कहा । हम सब उठे । रुंधे हुये कंठों से सबसे मिले । सबकी आंखों से आंसू वह रहे थे । दुर्रानी आगे-आगे चल रहा था । मैं उसके पीछे-पीछे जा रही थी । वह कहने लगा, “बहनजी, आपको नंगे पांव चलते देखकर मुझे शर्म आ रही है ।” मैंने कहा, “भाई, इसमें शर्म की क्या बात है । यह तो दिनों का फेर है । मुझे आज मुजफ्फराबाद छोड़ते हुए बड़ा दुःख हो रहा है । आज मैं पति का

वियोग महसूस कर रही हूँ। मन को शांत करने की बड़ी कोशिश कर रही हूँ, परन्तु व्याकुलता बढ़ती जा रही है।”

यही बातें करते-करते हम सड़क पर पहुँच गये। सामान लारी पर रखा। वहाँ मौलवी भी मिला। कहने लगा, “अगर गलती से मैंने आपको कोई तकलीफ दी हो, तो माफ करना।”

लारी में तेल डाला जा रहा था। मैं और श्रीमती मोदी सड़क से ज़रा कुछ आगे गये, जहाँ श्रीमती मोदी की कोठी थी। सब कुछ जलकर राख हो गया था। बेचारी आंसू भरी आँखों से देख रही थी और कह रही थी, “यहीं पर मैंने अपने बच्चे को छोड़ा था।” उस समय हमारे टूटे हुए दिलों पर क्या गुजर रही थी, वह कहते नहीं बनता। भिखारी बन कर हम यहाँ से जा रहे थे।

लारी आई और हम उसपर सवार हुये। मैंने देखा, वही ड्राइवर और वही लारी, जिसपर कभी मैं श्रीनगर से यहाँ आई थी। सब कुछ वही था, जमीन वही, आकाश वही, पर मेरे जीवन में जमीन-आसमान का अन्तर था। मैंने ड्राइवर से कहा, “तुम्हें याद है, कुछ मास पहले तुम मुझे इसी लारी पर श्रीनगर से लाये थे?” पर मैंने देखा उस दिन के ड्राइवर में और इसमें भी जमीन-आसमान का अन्तर था। वह कहने लगा, “तुम हिंदुस्तान चली हो ना, सुनो! तुम्हारी सारी फौज को चेचक निकली है। दो दिन में तुम्हें पता चलेगा कि तुम्हारी हिन्दुस्तानी फौज का क्या हुआ?”

पुल पर जगह-जगह पहरे वाले लारी को रोककर पूछते थे कि कहां जा रही है। इसमें कौन है? जवाब दिया जाता था, “आजाद काश्मीर बस।” यह सुनते ही वे इन्हें झट रास्ता दे देते थे। हमारी लारी में बहुत-से मुसलमान भी बैठे हुये थे। सबने मेरे बच्चों को बहुत प्यार से बैठाया। और इन्हें देखकर लोगों के दिल बहुत दुःख रहे थे।

जब हमारी लारी गढ़ी हबीब-उल्ला पहुँची, (यह स्थान पाकिस्तान में है) तो वहाँ पर भी बहुत से आदमी इकट्ठे हो रहे थे। यहाँ चौधरी साहब का भाषण होना था। हमें वहीं बैठा कर वह भाषण देने लगे। दुरानी हमारे

पास रहा। अब दुर्रानी कहने लगा, “बहन जी, यहां बड़ी-बड़ी दिक्कतें हैं। अगर आपसे कोई पूछे, कौन हो? कहां जा रही हो? तो आप कुछ मत बताना, उनसे कहना, कि वे मुझसे पूछें। जब कोई बहुत मजबूर करे तो कहना कि, यह मेरा भाई है। इसके घर जा रही हूं।” चौधरी साहब भाषण देकर आये और ड्राइवर से चलने को कहा, ताकि समय पर एबटाबाद पहुंचें। रास्ते में कबाइली ही कबाइली थे। लारी को धूर-धूर कर देख रहे थे। जब हम एबटाबाद के नजदीक पहुंचे, तो पुलिस के एक सिपाही ने आकर हमारी लारी रोक ली। पूछा, “इन औरतों को आप कहां ले जा रहे हैं।” और हमसे पूछा, “आप अपनी मर्जी से जा रही हैं।” मैंने कहा, “हां।” वह फिर चुप हो गया।

लारी एबटाबाद के डाक बंगले के सामने रुकी, परन्तु वहां पर कमरा न मिला। वहां पर पठान-ही-पठान थे। तब ये लोग हमें एक होटल में ले गये। इस समय रात के दस बज गये थे। दुर्रानी कहने लगा, “बहनजी, आज रात यहीं पर रहेंगे। कल शाम को आपको रावलपिंडी ले जायेंगे। आप फिर्कन कीजियेगा। सब ठीक होगा।” एक कमरा हमें दिया गया। खाना दुर्रानी ने मंगवाया। सब बच्चों तथा नौकरों ने खाया।

रात को हम सब लोग आराम से सोये। दूसरे दिन वहां पर चौधरी साहब का भाषण था। वह सारा दिन बाहर रहे और शाम को आये। उसी समय सबसे चलने को कहा। मैंने और श्रीमती मोदी ने आज भी खाना नहीं खाया था। कुछ फल मंगाये, वे ही खाकर पानी पी लिया।

हम सब फिर उसी लारी पर बैठे और रावलपिंडी को रवाना हुए। जब हम पिंडी पहुंचे तो रास्ते में दुर्रानी के एक रिश्तेदार का मकान पड़ता था। वह वहां कुछ सामान उतारना चाहता था। उस स्थान पर इसने लारी रुकवाई और कहने लगा, “चलिये, आप उन लोगों से मिल आइये यहां। पर कर्नल साहब रहते हैं, जो पहले काश्मीर में भी कर्नल थे। पिछले दिनों जम्मूं में इनपर भी बहुत कठिनाइयां आईं। यह सब वहां से भाग कर आये हैं।”

में और सब बच्चे नीचे उतरे और अन्दर गये। यह एक आलीशान साफ-सुथरी कोठी थी। एक कमरे में धीमी आंच जल रही थी। एक बूढ़ा आदमी कौच पर बैठा हुआ हुक्का पी रहा था और पास ही दो बूढ़ी स्त्रियां भी बैठी हुई थीं। एक तरफ एक नवयुवती बैठी हुई थी और फौजी वर्दी पहने हुए एक युवक इधर-उधर टहल रहा था। हम अन्दर गये और सामने वाले गलीचे पर बैठ गये। हमें देखकर वे लोग मुस्कराये। दुरानी ने हमारा परिचय कराया। तब वह दोनों बूढ़ी स्त्रियां कहने लगीं, “तू कहां जा रही है। तेरे दोनों लड़कों को रास्ते में पठान मार देंगे।” वह बूढ़ा आदमी भी यही बोला जो कर्नल कहलाता था। वह कहने लगा, “पचास हजार मुसलमान जम्मूं में दाखिल हो गये हैं, अब तुम्हारा जम्मूं नहीं बचेगा। जो अत्याचार हमारे ऊपर हिन्दुओं ने किये हैं, अब उनका बदला उनको मिलेगा।”

“मेरा एक लड़का अभी तक गुम है, उसका पता नहीं लग रहा है।” यह कहते-कहते उसकी आंखें डबडबा आईं।

सब स्त्रियां हमारी ओर देख कर कठोर हंसी हंस रही थीं। वह सच्ची थीं। उसके लिये मैं उनको दोष नहीं दे सकती। उनपर बहुत-कुछ बीती थी। उनकी बातें सुनकर बच्चे बिल्कुल सहम गये थे। कुछ देर बाद हम उठे और लारी पर सवार हुए। उनके ये शब्द कि ये बच्चे जिन्दा नहीं पहुंचेंगे बराबर मेरे कानों में गूंज रहे थे।

यहां से ये लोग हमें शहर ले गये। एक स्थान पर लारी रुकी। वे कहने लगे, “यहां पर काश्मीर के मुसलमानों का कैम्प है। ये हिन्दुस्तान से भागकर यहां आये हैं। आपको एक-दो दिन यहां रहना होगा। उसके बाद हम आपको जम्मूं की सीमा तक पहुंचा देंगे और आपके बदले में कुछ औरतों को वहां से ले लेंगे।”

हम अन्दर गये, तो देखते क्या हैं कि कुछ थोड़े से काश्मीरी, हाथों में बन्दूक लिये इधर-उधर घूम रहे हैं। यह डी० ए० वी० कालेज का भवन

था। हमें उन्होंने एक कमरे में ले जा कर छोड़ दिया। दुरानी और चौधरी कल आने को कह कर चले गये।

उस समय हम कुछ घबराये हुए थे। इतने में सब काश्मीरी इकट्ठे हो गये। लड़कों को बाहर बुलाया और उन्हें प्यार से कहने लगे, “तुम सब हमारे बतनी हो। हम भी काश्मीरी हैं।” मेरे पास एक आदमी जिसे मैं उस समय पहचानती थी, अन्दर आया और कहने लगा, “यहां पर आपको घबराना नहीं चाहिये। मैं हिन्दू हूं। मेहता साहब मेरे मित्र थे। मैं यहां पर आपकी हर तरह सहायता कर सकता हूं। इस कैम्प की देख-रेख मैं और मेरे एक मुसलमान मित्र कर रहे हैं। हम आपके लिये राशन वगैरह ला देंगे। आप यहीं पर भोजन पकाइये।” मैंने कहा, “इस समय मैं और श्रीमती मोदी भोजन नहीं करेंगी। बच्चों के लिये भले ही कुछ मंगा दीजिये।” उसने बच्चों के लिये भोजन और हमारे लिये फल वगैरह भिजवा दिये। हम दोनों ने दो दिनों से भोजन नहीं किया था, अब हमने दूध पिया। बाहर से उन लोगों ने कहला भेजा, “आप चिन्ता न करें। हम भी आज यहीं सोयेंगे। आप आराम से सो जाइये।”

हम सबने विचारा, “क्या बात है, आखिर ये लोग हम सबके साथ इतनी सहानुभूति क्यों दिखा रहे हैं? क्या यह मेहता साहब का सचमुच ही मित्र है।” मुझे विश्वास नहीं आ रहा था। उन्होंने कभी इससे मेरा परिचय नहीं कराया था। यह अपने को हिन्दू बता रहा है और यह कैम्प भी अपने ही आधीन बता रहा है। कुछ देर में इसी सोच-विचार में पड़ी रही। मेरे दोनों साथी बहुत डरे हुए थे। वे समझते थे कि अब ये लोग हमें खत्म कर देंगे। वहां हर व्यक्ति हाथ में पिस्तौल लिये घूम रहा था। आखिर मींद ने अपना दबाव डाला और सब भय जाता रहा।

: २२ :

रावलपिंडी कैप में

प्रातःकाल सब उठे। हमारे कमरे के दरवाजे के सामने एक आदमी

बन्दूक लिये पहरा दे रहा था। उसने नल आदि का पता बता दिया। इतने में उन लोगों ने दूध, घी और खाने की बहुत-सी सामग्री भेजी। बाहर कई काश्मीरी मुसलमान जो उस कैम्प में रहते थे, इकट्ठे हो गये। बच्चों को देखकर कहने लगे, “हमपर भी बड़ी मुसीबतें आई थीं। अब हम सब यहां हैं। आप हमारे हमवतनी हैं। आपको देखकर हमें खुशी होती है। हमें भी अपने हमवतनियों की खिदमत करने का मौका मिला। बताइये! हम आपकी क्या खिदमत करें?” कोई एक बच्चे को उठाता, तो कोई दूसरे को। ये सब बेचारे समय के फेर पर अफसोस कर रहे थे। मैं इन्हें देखकर बड़ी हैरान थी कि इन्हें किसने इतने प्रेम की शिक्षा दी है। इनमें हिन्दू-मुसलमान का बिल्कुल भेद-भाव नहीं था।

वहीं पर मैंने अपने शहर के दो लड़के देखे। इनका मकान मेरे पिता के मकान के पास था। उन्होंने मुझे पहचाना और झट मेरे पास आये। ये दोनों मुसलमान थे। मैंने पूछा, “तुम यहां पर कैसे आये? तुम तो जम्मू में कालिज में पढ़ रहे थे?” दोनों की आंखों में आंसू भर आए। उन्होंने बताया कि जम्मू के मजहबी झगड़ों ने उन्हें उनके वतन से निकाल दिया है। रह-रह कर उन्हें उनका वतन याद आता है। न जाने उनके मां-बाप का क्या हाल होगा? इन दोनों की आयु करीब २५-२६ साल की थी। मैंने उनसे कहा, “चाहे जो कुछ भी हो, हमारे शहर में उस साम्प्रदायिकता का असर कभी नहीं हो सकता, मेरा ऐसा विश्वास है। जैसे आज तक कोई भी दंगा हमारे यहां नहीं हुआ, वैसे उम्मीद है कि आगे भी नहीं होगा।”

वे कहने लगे, “हम भी यही कहते हैं कि चाहे जो कुछ भी हो, लेकिन किश्तवाड़ के हिन्दू-मुस्लिम एक-दूसरे की बरबादी नहीं देख सकते।”

मैंने उनसे पूछा, “बताओ, तुम यहां पर कहां रहते हो और तुम्हारी कौन देखरेख करता है?” उन्होंने बताया, कि यह कैम्प ‘आजाद काश्मीर’ की ओर से खुला हुआ है। काश्मीर के मुस्लिम पनाहगुजिनों के लिए यहां इन्तिजाम है। यहां पर इस वक्त ३०० पनाहगुजीन हैं। इनमें जम्मू के केवल वे ही दो हैं। इनकी देख-रेख मिस्टर जी. के. रेड्डी और एक

मुस्लिम भाई करते हैं। यहां पर रोज सबों को बन्दूक चलाने की ट्रेनिंग दी जाती है। मैंने पूछा कि इन्हें कौन ट्रेनिंग देता है? तो वे बोले “पाकिस्तान की फौज में बहुत-से काश्मीरी भी हैं। पाकिस्तान ने उनमें से कुछ को यहां पर भेज दिया है।” मैंने उनसे फिर पूछा, “तुम्हारी पढ़ाई का क्या प्रबंध है?” उन्होंने जवाब दिया, “हमें इन्होंने कालिज में दाखिल करा दिया है।” मैंने कहा, “मैं देख रही हूं कि यहां पर हमारे साथ बहुत ही अच्छा सलूक किया जा रहा है। यहां पर हिन्दू-मुस्लिम का सवाल ही नहीं है।” वे बोले, “इस कैम्प का चलानेवाला बड़ा ही नेक आदमी है। वह सबको समझाता है कि तुम्हें मजहबी तअस्सुब से दूर रहना चाहिये। और उसीके कहने पर सब काश्मीरी चलते हैं।” मेरा कौतूहल बढ़ा। मैंने पूछा, “यह जी० के० रेड्डी कौन हैं?” इसपर उन्होंने बताया कि वह काश्मीर में एक अखबार का एडीटर था। कुछ महीने हुए हुकूमत काश्मीर ने इसका अखबार जब्त कर लिया और उसे वहां से निकाल दिया। यह सुनकर मैं समझ गई कि जो आदमी रात को मुझसे कह रहा था कि वह मेहता साहब का मित्र है, शायद यह वही हो। मुझे यह भी याद आया कि कुछ महीने पहिले जबकि यह रावलपिंडी को जा रहे थे, इन्हें मुजफ्फराबाद में गिरफ्तार भी किया गया था। मुजफ्फराबाद का कर्नल उन्हें वही खत्म करना चाहता था, परन्तु मेहता साहब ने उसे ऐसा करने से रोका था। यह सचमुच उनका मित्र था। अब सब बातें मेरी समझ में आने लगीं। यह भी भरोसा हुआ कि समय पर यह जरूर हमारी मदद करेगा।

इतने में एक सिपाही अन्दर आया। यह बिल्कुल जापानी-सा मालूम पड़ता था। वह मेरे पास आकर बैठ गया। कहने लगा, “माताजी, मैं भी काश्मीरी हूं। मैं कई साल से जापान में था। आजकल पाकिस्तान की फौज में हूं। अभी मैंने सुना कि हमारे हमवतनी आये हैं, तो मैं सलाम करने चला आया।” इस तरह कई लोग आने-जाने लगे। इन सबकी जबान पर वतन ही वतन का शब्द था। बीच में कैम्प का एक और अफसर भी आया। वह

बताने लगा, “मैं भी मेहता साहब का दोस्त हूँ।” इन सब लोगों में वतन की एक अजीब-ओ-गरीब कशिश मैंने देखी। फिर इस कैम्प का इंचार्ज आया और दोनों लड़कों को अपने संग ले गया। श्री रेड्डी भी इनके साथ थे। बाजार जाकर उन्होंने दोनों बच्चों को जूते लेकर दिये। बच्चे पहनने से इन्कार कर रहे थे। परन्तु वे नहीं माने। जूतों के बगैर इन दोनों के पैरों में बिवाइयां फट गई थी। बड़े लड़के सुरेश को स्वेटर भी ले दिया। उसने केवल एक ही कमीज पहनी थी। फिर उस इंचार्ज ने इन्हें अपनी कोठी पर ले जाकर चाय पिलाई। काफी देर बाद फिर वे उन्हें मेरे पास ले आए। बड़े लड़के ने आते ही मुझे जूते दिखाये। परन्तु उसकी आंखें लज्जा के कारण उठती नहीं थी और उनमें आंसू भी भर आये थे। मैंने कैम्प-इंचार्ज से कहा, “आपने यह तकलीफ क्यों उठाई?” वह बोला, “बच्चे तो लेते ही नहीं थे। मैंने जोर दिया, तब इन्होंने लिये। इन्हें देखिये, इनके पैरों की क्या हालत है? आपको हमने संकोच नहीं करना चाहिये। मेहता साहब हमारे दोस्त थे।” यह कहकर वे चले गये।

समय पर वहां के सब शरणार्थी ट्रेनिंग लेने गये। मेरे दोनों लड़के भी उनके साथ गये। छोटा तो बहुत खुश था। उसके तो यह मन की बात थी, कभी एक की बंदूक लेता तो कभी दूसरे की। “बंदूक कैसे चलाते हैं?” यही वह पूछ रहा था।

दिन के १२ बजे वे लोग, कैम्प का इंचार्ज और श्री रेड्डी आकर मुझसे कहने लगे कि अगर हम उनकी कोठी पर चलकर रहें, तो बहुत अच्छा हो। वहां पर हमारी देख-रेख अच्छी तरह हो सकेगी। और अभी यह भी मालूम नहीं कि लोगों को जम्मू भेजने का इन्तिजाम कब तक होगा। उन्होंने यह भी कहा कि वे हमें वहां अकेले नहीं रख सकते। क्योंकि हालत अच्छी नहीं है। यह कहकर वे चले गये। मैंने श्रीमती मोदी से सलाह ली। एक अन-जान व्यक्ति के यहां रहने को वे तैयार नहीं थीं। वैसे तो यह बात ठीक ही थी, परन्तु यह कैम्प भी तो उन्हीं के आधीन था। चारों ओर आदमी-ही-आदमी नज़र आते थे। मैंने कहा, “आपको चलना होगा। वहां रहकर हम अपने

वतन का बहुत काम कर सकेंगी। मैं यहां पर बहुत से काश्मीरियों से मिली। मैंने जहां तक इन सबको देखा या समझा, यही जान पड़ता है कि इन्हें साम्प्रदायिकता से नफरत है। मैं कुछ दिन यहां पर ठहरना चाहती हूं ताकि इन लोगों से मिलूं और देखूं कि इनकी अपने वतन के लिये क्या राय है।” इसपर वह चलने को राजी हो गई। यहां आकर मुझे काश्मीर की बहुत-सी बातों का ज्ञान हुआ। जैसे हमला करनेवाले कहां तक पहुंचे थे? हिन्दुस्तान की फौज समय पर कैसे पहुंची और उसने कैसे काश्मीर की रक्षा की। जम्मू की भी बहुत-सी बातें मालूम हुई। यहां आकर हमें लगा कि हम परम मुख में हैं, हालांकि हमारा यहां रहना भी खतरे से खाली नहीं था। प्रतिक्षण यही भय लगा रहता था कि न जाने आगे क्या होनेवाला है। वैसे भी जम्मू तक पहुंचना टेढ़ी खीर थी। सारा रास्ता कबाइलियों से भरा हुआ था। यहां पर अपने कई मित्र दिखाई दे रहे थे। मुज़फ़राबाद से हम अपने आपको यहां पर ज्यादा महफूज़ समझने लगे थे। तभी कैप के कुछ आदमी मेरे पास आकर बैठ गये और कहने लगे, “हमारे मां, बाप और खान्दान का न जाने क्या हाल है। क्या हम कभी उनसे मिल सकेंगे।” मैंने कहा, “यह तो तुम जानते ही हो कि हमलावर जहां पहुंचते हैं, वहां आग लगाकर सब-कुछ बरबाद कर देते हैं और फिर गोलियों से बेगुनाह रिआया को मारते हैं। ऐसी हालत में क्या तुम यकीन करते हो कि तुम्हारे मां-बाप जीते बचे होंगे। यह तो इन लोगों का बहाना है कि काश्मीरी मुसलमानों को हम हिफाजत से रखेंगे और उन्हें खास रिआयत देंगे। मुज़फ़राबाद में कई काश्मीरियों को इन्होंने नेशनल होने के जुर्म में मौत के घाट उतार दिया है और कई लोगों के मकान लूट लिये हैं। यह सब देखकर मैं कल से हैरान हूं कि तुम किसका साथ दे रहे हो? तुम अपने वतन को बरबाद करनेवालों के साथ रहकर कितना बड़ा पाप कर रहे हो। तुम्हें शेख साहब को देखना चाहिये कि वह अपना खून देकर अपने प्यारे वतन को बचा रहा है। उसकी हुकूमत में साम्प्रदायिकता का नाम नहीं है। इधर इस लड़ाई को इस्लामी लड़ाई कह-कहकर उभारा जा रहा है। मैं यह सब किसीके पक्षपात के

कारण नहीं कह रही हूं। किन्तु जो सच बात है वही कह रही हूं। जो गड़्ढा अत्याचारियों ने खोदा है, वे खुद ही उसमें गिरेंगे।”

“हां, जम्मूं में जो कुछ गुण्डों ने किया है, उसका मुझे दुःख है। उन्होंने यह अच्छा नहीं किया। इसी कारण वह आगे बढ़ने से रुक गये।”

मेरी बातें सुनकर उनमें से कई कहने लगे, “हम अपने वतन को हर आफत से बचाना चाहते हैं, लेकिन क्या करें। यहां फंस गये हैं।” यह शब्द उन्होंने धीरे-से कहे, मैं उनका मर्म समझ गई।

उत्तर जी० के० रेड्डी लारी लेकर आये, जिसपर ‘आजाद काश्मीर’ लिखा हुआ था। हम सब उसपर सवार हुये। उस बस पर एक अमरीकन फौजी भी था। उसने फौजी बरदी पहनी थी और सिर पर पगड़ी बांधी थी। वह हमारे साथ चला और इसके अतिरिक्त तीन चार काश्मीरी, जो बन्दूकों और कारतूसों से सज्जित थे, साथ बैठे। ये लोग हमें पुंछ हाउस ले गये। यह पुंछ प्रांत के राजा की बहुत बड़ी कोठी है। यहां कई मोटर साइकिलें तथा लारियां थीं। सब पर ‘आजाद काश्मीर’ लिखा हुआ था। बाग के अहाते में दफतर था जहां प्रत्येक वस्तु पर ‘आजाद काश्मीर’ लिखा था। आफिस में कई आदमी काम कर रहे थे। हमें अन्दर ले जाया गया और एक सजे हुए कमरे में ठहराया गया। वहां पर सब आवश्यक सामान था।

आज तीन मास के बाद हमें यह चीजें देखने का अवसर मिला था। जब मैं अन्दर दाखिल हुई, तो मैंने सामने ही एक बड़ा कदावर आईना रखा हुआ देखा। जब मैं इसके सामने आई, तो मुझे अपनी शकल दिखाई दी। तीन मास के बाद मैं अपनी सूरत देखकर कांप उठी। उस समय मुझे ऐसा मालूम हुआ, मानो मैं किसी भिखारिन को देख रही हूं। मैं वहां खड़ी नहीं रह सकी। मेरे पांव कांपने लगे। सिर में चक्कर आ गया और दोनों हाथों से उसे पकड़कर मैं वहीं बैठ गई। न जाने कितना पानी मेरी आंखों से निकला होगा। जन्म से लेकर आज तक का सारा जीवन मेरी आंखों के सामने घूम गया। बहुत देर तक मैं विमूढ़-सी सोचती रही। पर सोचने की भी एक सीमा है। आखिर मैंने अपने आपको संभाला।

हमारे खाने के बारे में उन्होंने कहा, “आपके नौकर आपका खाना बनायेंगे।” उनके खानसामा और बैरे वगैरह सब काश्मीरी मुसलमान थे। सब हमें देखकर खुश हो रहे थे।

इसी कोठी में श्री जी० के० रेड्डी, ब्रिगेडियर रसल के० हेजर (अमरीकन) और एक मुस्लिम भाई रहते थे। यह सब कैम्प उन्हींके आधीन था; सब-के-सब हमारी देख-रेख में लग गए। हमारे नहाने के लिये पानी गरम कराया गया। मैंने सब बच्चों को नहलाया। नहलाने से टब का पानी एक-दम मैला पड़ जाता था। तीन महीने की मेल बदन पर लगी हुई थी। हालांकि वहां पर भी मैं इन्हें कभी-कभी नहला देती थी परन्तु इतना पानी कहां मिलता था कि अच्छी तरह साबुन का प्रयोग किया जा सकता। स्नानादि के बाद हमारे कमरे में एक बैरे ने आग जला दी। सब बड़े आराम से बैठ गए। रात का खाना आया और सबने खाया। बहुत दिन के बाद हमें यह सब आराम मिले थे, इसलिए सबको नींद ने आ घेरा। बच्चों को सुलाकर मैं बाहर निकली। देखा, दो काश्मीरी राइफिलें लेकर हमारे दरवाजे पर पहरा दे रहे हैं। उन्हें देखकर मैं भी निश्चित होकर सो गई।

प्रातःकाल ब्रिगेडियर वगैरह हमारे कमरे में आये और कहने लगे, “आप लोगों को फिक्र नहीं करनी चाहिये। जल्दी ही हम आपको जम्मू पहुंचाने का इन्तिजाम करेंगे।” ब्रिगेडियर ने यह भी कहा कि वह खुद हमारे साथ चलेगा, ताकि हमें रास्ते में कोई तकलीफ न हो।

बाहर से अनेक काश्मीरी, जिनमें दूकानदार, फैक्टरी के मुलाजिम, आदि थे हमारे बारे में सुनकर वहां इकट्ठे होने लगे। जिस काश्मीरी ने भी सुना, वह हमसे मिलने आया। कई तो बच्चों के लिये फल तक लेकर आये थे। इनमें से बहुत-से मेहता साहब के मित्र भी थे। एक ने सबके पांव नाप लिये और सबके लिये जूते खरीदने गया। मैंने बहुत मना किया, परन्तु वह नहीं माना। बोला, “हम आप लोगों को ऐसे हाल में नहीं देख सकते। आप हमारे मेहमान हैं।” श्रीमती मोदी और मैंने जूते नहीं पहने। बाकी सबको उन्होंने पहना दिये। मैं इन लोगों का प्रेम देखकर कुछ नहीं कह सकी।

कितना भी क्यों न हो, मैंने काश्मीरी मुसलमानों के अन्दर साम्प्रदायिकता का ज़हर बहुत कम पाया है। किसीके बहकावे में आकर कुछ क्षण के लिए भले ही वे रास्ते से हट गये हों, पर उनमें यह ज़हर ज्यादा समय तक नहीं टिक सकता। जिस मिट्टी से वे बने हैं उसका असर उनमें कूट-कूट कर भरा हुआ था। जब मैंने देखा कि वहां पर कोई गैर नहीं है तो मैंने उनसे कहा, “क्या तुम अपने वतन का नाश होते देख सकोगे? तुम किस भूल में हो? जब ये लोग वहां पहुंचेंगे तो क्या तुम्हारे रिश्तेदारों को छोड़ देंगे। इन्होंने जो कुछ किया, इन्सानियत को छोड़कर किया है। अगर जंग ही करना था तो बहादुरों की तरह करते, न कि चोरों की तरह धन और औरतों की अस्मत लूटते फिरते। इन्होंने इन्साफ के नाम को धब्बा लगाया है।” ये बातें सुनकर उनमें से एक आदमी कहने लगा, “हमने पाकिस्तानवालों से कहा था कि पठानों को ऐसे बेलगाम न छोड़ो। लेकिन उन्होंने नहीं माना।” मैंने कहा, “तुम्हें सच्चाई का साथ देना चाहिये और इन्साफ पर चलना चाहिये। इस-पर एक आदमी ने बहुत धीरे से कहा, “यहां पर ज्यादातर शेख साहब के हामी हैं। बस, इससे ज्यादा मैं आपको कुछ नहीं बता सकता।” थोड़ी देर बातें करने के बाद वे चले गये।

दिन में दुर्रानी आया और कहने लगा, “चौधरी साहब को किसी काम से कहीं बाहर जाना पड़ा है। अब मैं आपको एक-दो दिन में जम्मू की सरहद तक पहुंचा आऊंगा।”

उसके जाने के बाद आजाद काश्मीर का डिफेन्स मिनिस्टर अली अहमद शाह मेरे पास आया और देर तक मेहता साहब के बारे में बातें करता रहा। यह पुंछ का रहनेवाला था। कहने लगा, “हम सब पुंछ में कितनी अच्छी तरह मिलकर रहते थे। न कहीं कुछ था और न ही ऐसा होने की कोई उम्मीद थी।” मैंने उन्हें मेहता साहब के फोटो दिखलाये जो कि वहां की गवर्नमेंट की प्रदर्शनी में लिये गये थे। उसमें पुंछ के सब अफसर थे। एक आह खींचकर कुछ समय तक वह चुप बैठा रहा, शायद उसे वतन की याद आ रही थी। फिर मुझसे कहने लगा, “आपको किस चीज की जरूरत है? कहिये।”

वहां श्री जी० के० रेड्डी वगैरह भी बैठे हुये थे । सब कहने लगे, “इनके पास आप क्या देख रहे हैं ? कपड़े की इन्हें बेहद जरूरत है ?” इसपर मैंने उनसे प्रार्थनापूर्वक कहा, “मैं कुछ नहीं लेना चाहती । जब तक लिये बगैर काम चल नहीं सकता था, तब तक बहुत लिया । पर अब तो दो दिन की बात है । अब मैं कुछ न लूंगी । आप सब लोग मेरे लिये इतना कुछ कर रहे हैं । इसके लिये मैं आपको धन्यवाद देती हूं ।” कुछ देर बाद वह चला गया और उसने कपड़े के कई थान भेजे । परन्तु मैंने वे लेने से इन्कार कर दिया । श्री जी० के० रेड्डी ने बहुत कहा, पर मैं नहीं मानी । मैंने श्री रेड्डी तथा उसके साथियों से मुजफ्फराबाद के कुछ लोगों को निकलवाने के लिये प्रार्थना की । आते समय उन्होंने हमसे कहा था कि हम उन्हें भूलें नहीं, उनके छुटकारे का प्रबन्ध करें । मैंने तब उन्हें तसल्ली देते हुए कहा था कि जब समय मिलेगा तो मैं उनके निकलवाने की अवश्य कोशिश करूंगी । इन सबने उनके नाम मोट कर लिये और मुझे तसल्ली दी कि वे अवश्य ही उन लोगों की सहायता करेंगे । उन्होंने मुझसे कहा कि अलीबेग कैम्प, मीरपुर की दशा बहुत बुरी है । अगर भारत से या जम्मू से उसके लिये कुछ आर्थिक सहायता मिले, तो मैं उनके पास जरूर भिजवाऊं । अलीबेग कैम्प की बातें सुनकर मन बहुत ही दुःखी हुआ ।

श्री रेड्डी ने कहा कि वे लोग पेट्रोल का प्रबन्ध कर रहे हैं । परसों हमें जम्मू सीमा तक पहुंचा देंगे । ब्रिगेडियर रसल के० हेजर एक कैमरा लाया और हमसे कहने लगा, कि अगर हमें कोई एतराज न हो तो वह हम सबका एक फोटो लें । इन दिनों की यादगार सबके पास रहेगी । मुझे कोई एतराज नहीं था । इसपर उसने हम सबका एक ग्रुप फोटो लिया । उसका बैरा हमारे खाने-पीने का खयाल खास तौर पर रखता था और बच्चों को बहुत अच्छी तरह खिलाता था । दो दिन ही में हम लोगों की हालत सुधर गई ।

उसी दिन रात के नौ बजे मैं अपने कमरे से निकल कर इन लोगों के

कमरे की ओर चली। जाते समय मैंने अपने साथियों से कहा “आज मैं खतरे में पांव रख रही हूँ। मैं नहीं जानती इसका क्या परिणाम होगा? परन्तु मैं अपने वतन के लिये यह काम जरूर करूंगी।” वे सब मना करने लगे और कहने लगे कि मुझे अपनी जिम्मेदारियों और स्थिति का ध्यान रखना चाहिए परन्तु मैं वतन के सामने किसी भी चीज की कीमत नहीं समझती थी इसलिये मैं उनके कमरे में गई और इधर-उधर की बातें करने के पश्चात् बोली, “मैं हैरान हूँ कि आप जैसे ऊंचे विचारों के व्यक्ति इन लोगों के साथ हैं जिन्होंने बिना सोचे-समझे बेगुनाहों पर अत्याचार ढाये हैं। तीन दिन में ही मैंने यहां देख लिया है कि आपने इन लोगों को हिन्दू-मुस्लिम एकता का पाठ पढ़ाया है। मैंने और भी बहुत-सी अच्छी बातें देखी हैं। इसलिए मैं कहती हूँ कि आपको इनका साथ छोड़ना चाहिये। अगर आप ऐसा नहीं करेंगे तो मैं ईश्वर से प्रार्थना करूंगी कि आपको तीन दिन के अन्दर ही यहां से त्याग-पत्र देना पड़े। मैं जानती हूँ कि मैं जो-कुछ कह रही हूँ वह मुझे कहना न चाहिये परन्तु मैं मजबूर हूँ। अपने कर्तव्य का पालन करते हुए मुझे डर नहीं लगता।” मेरी बातें सुनकर उनमें से एक व्यक्ति बोला, “अब तो काश्मीर थोड़े दिन में पाकिस्तान के कब्जे में आ जायेगा। कल ५०० पठान जम्मू सतवारी तक पहुंच गये हैं।” मैंने कहा, “आप सब बातें जानते हैं परन्तु मैं कुछ जाने बगैर आपसे कहती हूँ कि ये लोग कभी कामयाब नहीं हो सकते हैं। इन्होंने जो गड़ढा खोदा है उसमें वे खुद ही गिरेंगे। बेगुनाहों के खून इन्हें कभी आगे नहीं बढ़ने देंगे।”

जम्मू से हमारे तबादले की दो दिन तक कोई इत्तला नहीं आई परन्तु तीसरे दिन आ गई। हमें तीन दिन रुकना पड़ा। भगवान् की करनी, इन लोगों को आपसी फूट के कारण तीन दिन के अन्दर ही त्यागपत्र देना पड़ा। हमारे सामने ही इन्होंने चार्ज दे दिया।

एक भला व्यक्ति, जिसकी मैं जितनी तारीफ करूँ थोड़ी है, जात का मुसलमान और बड़ा ही नेक और उच्च विचार का था। उसने इस कठिन समय में मेरी जो सहायता की उसे शायद ही मैं इस जन्म में भूलूंगी। वह

मुझे कहा करता था, “बहन! तुम चिन्ता न करो। तुम्हारे बच्चों की पढ़ाई मेरे जिम्मे। जहां तक होगा मैं तुम्हारी मदद करूंगा। तुम हिन्दुस्तान जाकर जबतक चाहो मेरे घर पर रह सकती हो। उसने एक तसबीह (जप माला) मुझे और एक श्रीमती मोदी को दी और कहा, “यह मेरा छोटा-सा तोहफा है। जब कभी तुमपर कोई मुसीबत आयेगी तो इससे तुम्हें तस्कीन होगी।” मैंने उसको धन्यवाद दिया।

: २३ :

मुक्ति के स्थान पर जेल

एक दिन दुर्रानी सब प्रबन्ध करने के बाद हमारे पास आया और कहने लगा, “कल के लिये हमें तैयार रहना चाहिये।” अगले दिन हम यहां एक सप्ताह रह कर चले। श्री जी० के० रेड्डी और ब्रिगेडियर किसी कार्यवश हमारे साथ न चल सके पर जिस भले व्यक्ति का मैं पीछे जिक्र कर आई हूं वह हमारे साथ चलने को तैयार हुआ और दुर्रानी तो था ही। इसके अतिरिक्त आठ काश्मीरी बड़ी हमदर्दी से हमारे साथ चले।

बहुत-सा सफर तय करने के बाद जब हम जेहलम पुल पर पहुंचे तो पठानों ने सामने आकर लारी को रोक दिया। कुछ लोग लारी की छत पर चढ़ गये और कुछ आस-पास खड़े होगये। कहने लगे, “हमें भी साथ ले चलो। हम भी मोर्चे पर जायेंगे।” हमारे सब साथी नीचे उतरे और उन्हें समझाने लगे कि इसमें जगह नहीं है। परन्तु वे तो कुछ भी सुनने को तैयार नहीं थे। उन्होंने बन्दूकें तानकर कहा, “अगर एक कदम भी आगे बढ़ने की कोशिश की तो हम फायर कर देंगे।” देखते-ही-देखते भीड़ बढ़ गई। ज्यादातर उसमें पठान ही थे। रास्ते में भी हमने थोड़ा-सा बोझ और बन्दूकें उठाये हुए पठान-ही-पठान देखे थे जो मोर्चे पर पैदल चले जा रहे थे। एकाएक यह एक नई विपत्ति आ गई। हम लोग बहुत घबराये। परन्तु इतना शोर मचाने के बावजूद उन्होंने लारी के अन्दर झांक कर नहीं देखा। नहीं तो आफत आजाती।

इतने में एक पुलिस अफसर आया और दुरानी तथा दूसरे व्यक्तियों से पूछने लगा, “तुम कहां जा रहे हो?” दुरानी ने जवाब दिया, “यह आजाद काश्मीर की लारी है। हम इन लोगों को जम्मू सीमा पर पहुंचाने जा रहे हैं।” उसने कहा, “तुम् तबतक नहीं जा सकते, जबतक तुम्हारे पास रावलपिंडी के कमिश्नर का पास नहीं होगा।” इसपर दूसरा साथी बोला, “हमें पास की जरूरत नहीं है। हम कई महीनों से आजाद काश्मीर में काम कर रहे हैं। आप हमारे काम में रुकावट क्यों डालते हैं?” पुलिस अफसर ने बताया कि अब ऊपर के अधिकारियों से ऐसी ही आज्ञा मिली है। आप आफिस चल कर पता लें। अब मेरा माथा ठनका। मैं भगवान् से सब कुछ सहन करने की शक्ति की प्रार्थना करने लगी।

जब उन्होंने देखा कि लारी अब आगे नहीं जा रही है तो सब पठान लारी पर से उतर गये। एक आफिस के आगे लारी खड़ी की गई। और हमारे साथवाला व्यक्ति अन्दर गया। मैंने दुरानी से कहा, “भाई, तुम संभल कर रहना ऐसा न हो कि मेरी खातिर तुमपर कोई आंच आये। मुझे कुछ अच्छे शकुन नहीं दिखाई दे रहे हैं। न जाने अब किन विपत्तियों का सामना करना पड़े।” वह कहने लगा, “आप मेरी फिक्र न करें। कोई बात नहीं है। आज नहीं तो कल हम आपको पहुंचा देंगे।” इतने में वह व्यक्ति अन्दर से आया। उसका चेहरा गुस्से से तमतमा रहा था। लारी पर बैठते हुए कहने लगा, “इन लोगों की चालें समझ में नहीं आतीं। हर बात में शक करते हैं। अब हम वापस रावलपिंडी जा रहे हैं। वहां कमिश्नर की कोठी पर चलकर अभी पास ले लेंगे और कल आप लोगों को जम्मू की सरहद पर पहुंचा देंगे। घबराने की कोई बात नहीं है।” उसकी ये बातें सुनकर मैं समझ गई कि वह यह सब हमारे धीरज के लिये कह रहा है। मामला कुछ पेचीदा होगया है। दुरानी वहीं उतर गया। कहने लगा, “मुझे यहां पर कुछ काम है। कल आप लोग पास लेकर आयेंगे तो मैं यहीं पर आपसे मिलूंगा।”

हमारी बस रावलपिंडी वापस लौटी। वहां पहुंचते ही हम सीधे

कमिश्नर के बंगले पर पहुंचे। हमारे साथवाला व्यक्ति उतर कर अन्दर गया। फिर कुछ देर बाद बाहर आकर इधर-उधर टहलने लगा। वह कभी अन्दर जाता और कभी बाहर आता। चेहरा उसका क्रोध के कारण लाल हो रहा था। वह बड़बड़ा रहा था, “ये हमपर यकौन नहीं करते जैसे हम चोर हैं। इतना काम करते हुए भी ये हमपर शक करते हैं।” उसने श्री जी० के० रेड्डी को फोन किया और वह शीघ्र ही मोटर साइकिल पर वहां पहुंच गया। सबने अन्दर जाकर कुछ बातें की जो मुझे नही मालूम हो सकीं। इसके बाद वे सब हम लोगों को लेकर ‘पुंछ हाउस’ आये। यहां आकर उन्होंने पहरे के लिये कुछ पुलिस मंगाई। उस समय यह मामला मेरी समझ में नहीं आ रहा था। किसीसे पूछ भी नहीं सकती थी। वे सब घबराये हुए थे। रात को काफी पहरा था। ब्रिगेडियर भी कमरे के एक-एक कोने को हाथ में पिस्तौल लिये देख रहा था। वह रात भर इसी तरह घूमता रहा। हमें इन लोगों ने यह नहीं बताया कि कुछ पठान आज रात को यहां पर हमला करनेवाले हैं। उन्हें मालूम होगया था कि यहां पर कुछ हिन्दू औरतें हैं। खैर ! रात को हमला नहीं हुआ। मैं यह नहीं जान पाई कि यह सब कैसे रुका।

श्री जी० के० रेड्डी वगैरह ने हमें विश्वास दिलाया कि दो-तीन रोज में पास मिल जायगा तो वे हमको जम्मू सीमा तक पहुंचा देंगे और अब वे लोग भी यहां पर नहीं रहेंगे। सब के चेहरों से उदासी टपक रही थी। इसी तरह पास की इन्तिजार में दो तीन दिन निकल गये पर पास न मिला। एक दिन श्री रेड्डी ने आकर कहा, “अब आपको जम्मू नहीं भेजा जायगा। आपका जाना बन्द होगया है पर हम कोशिश कर रहे हैं कि ये लोग आपको पेशावर भेज दें। वहां से आपको हिन्दुस्तान भिजवाया जा सकता है। हम पेशावर के प्राइम मिनिस्टर से बातें कर रहे हैं। आज वह यहां पर आने वाले हैं। शाम को उनसे सब बात तय करेंगे। वह हमारे दोस्त हैं जहां तक होगा वह आपको हिफाजत से भिजवा देंगे।” शाम को जब श्री रेड्डी और वही व्यक्ति जो हम लोगों को पहुंचाने गया था, कयूम साहब से मिलने

जाने लगे तो मेरे छोटे लड़के विमल से कहा, “तू कहता है कि मैं पठानों से नहीं डरता, चल आज तुझे एक बहुत बड़ा पठान दिखायें। देखते हैं कि तू उससे डरता है या नहीं।” वह जाने के लिए तैयार होगया और वे लोग उसे साथ लेकर मिलने गये। परन्तु वह कहीं बाहर गया हुआ था। दूसरे दिन ये लोग उसके पास फिर गये और वापस आकर मुझे बताया, कि अब ये लोग हमें जेल भेज रहे हैं। उन्होंने बहुत कोशिश की पर सब बेकार हुआ। हां, जेल में वे हमें यूरोपियन वार्ड में रखा सकने में सफल होगये हैं। यह सुनकर मैं कुछ घबरा गई।*

मैंने सब बच्चों, श्रीमती मोदी तथा दोनों नौकर ओम् और जोधा को जेल जाने की बात बताई। वे सब घबराये और मुझे कहने लगे कि मैं जो हर एक बात पर विश्वास कर लेती हूं यह उसी का फल है। चौधरी तो उस दिन से फिर दिखाई ही नहीं दिया। दुरानी ने जब कठिनाई देखी तो वहीं रह गया। मैं क्या कहती। सोचा कुछ था हुआ कुछ।

*उस समय मुझे किसी ने यह नहीं बताया कि जेल भेजने का क्या कारण है? हां, बहुत दिन बाद मुझे मालूम हुआ कि पाकिस्तान सरकार को फौजी पुलिस की सी० आई० डी० ने यह इतला दी थी कि मुझसे बहुत से काश्मीरी लोग मिले हुए हैं। मैंने उन्हें बहुत-कुछ कहा है बल्कि वहां के बहुत से फौजी भेद भी मैं ले गई हूं। इसलिये मेरा जम्मू जाना खतरनाक है। मुझे जेल में रखना चाहिए।

यह सब गलत बात थी। मैंने कोई फौजी भेद नहीं लिया था। न मुझे किसी आदमी ने यहां के फौजी भेद बताये थे। हां, मैंने केवल इतना ही किया था कि पाकिस्तान के बारे में काश्मीरियों की राय पूछी थी। यह कोई जुर्म नहीं था। कई व्यक्तियों ने मुझे यहां तक कहा था कि जब तुम भारत जाओ तो हमारे संदेश ले जाना। और हमारी अमुक-अमुक बात पंडित नेहरू और शेख साहब से कहना। यह बातें भी कोई फौजी भेद की न थीं।

सब आनेवाली नई विपत्ति का इंतजार करने लगे। एक दिन शाम को जेल की लारी छः सिपाही और दो पुलिस के अफसरों को लेकर आई। श्री रेड्डी और उनके साथी ने एक बोरी में बहुत-सी खाने-पीने की सामग्री हमारे साथ ले जाने के लिए रखी। मैंने उन्हें बहुत रोका परन्तु वह कहते जाते थे कि न जाने कब कैसा समय आयागा। उस समय इसे इस्तेमाल कीजियेगा। हमने सब चीजें इकट्ठी कीं। वह समय बड़ा दर्दनाक था। उनके घर के सब नौकर तथा छोटे-बड़ों की आंखों में आंसू थे। कई काश्मीरी बाहर से भी आये हुए थे। उनकी आंखें भी डबडबा आयीं। खानसामाने आकर एक अफसर को आंसू भरी आंखों से कहा, “खुदा के लिये साहब, इनको अच्छी तरह रखना।” वह हैरान होकर पूछने लगा, “ये तुम्हारे कौन लगते हैं?” उसने उत्तर दिया, “ये हमारे वतनी हैं।” यह कहते-कहते उसका गला भर आया।

हम सब लारी के पास आये। बच्चे सहमे हुए थे। हम भी घबराये हुए थे, परन्तु लाचार थे। जब हम लारी पर बैठने लगे तो श्री जी० के० रेड्डी ने मुझे तीस रुपये दिये। मैंने लेने से इन्कार किया। वह कहने लगा, “हो सकता है किसी समय बच्चों के लिये जरूरत पड़े, रख लीजिये।” पुलिस अफसर भी कहने लगा, “रख लीजिये न, बतौर कर्ज के ही सही, रख लीजिये। जब आपके पास होगा तो वापस कर देना।” मैंने ले लिये। श्री रेड्डी ने कहा, “आपको कुछ दिन वहां पर रहना पड़ेगा। फिर आपको यह लोग जम्मू भिजवा देंगे।” मैंने श्री रेड्डी और उनके साथी को बहुत धन्यवाद दिया और कहा, “हमारे लिये आपने इतने दिन तक जो कुछ किया उसे मैं कभी भी नहीं भूलूंगी।” सबने बच्चों को प्यार से लारी पर बिठाया। मैं भी लारी पर सवार हो गई। इतने में वह काश्मीरी बैरा आया और उसने मेरा हाथ पकड़ कर अपने हृदय पर रखा। मैंने देखा, उसका हृदय धक-धक कर रहा था। उसने रोते हुए कहा, “अम्मा! ये बेगुनाह बच्चों को जेल ले जा रहे हैं। मेरा तो दिल फटा जा रहा है।”

मैंने उसे धीरज देकर कहा, “प्रभु हमारे साथ हैं। उसीने हर जगह

हमारी सहायता की है वही अब भी करेगा।” इस बँरे ने हम लोगों की बहुत खिदमत की थी। वह बच्चों को बड़े ही लाड-प्यार से खिलाता था। उसके प्रेम के कारण थोड़े ही दिनों में सबके शरीरों में ताकत आने लगी थी। अब हमारे लिये वे आराम के दिन भी स्वप्न बन गये।

हम जेल पहुँचे। बाहर फाटक पर लारी रोकੀ गयी और हमें अन्दर ले जाया गया। एक अफसर ने कहा, “आपको बी क्लास में रखा जायगा। लेकिन नौकर आपके साथ नहीं जा सकते।” मैंने कहा, “तब तो फिर जहाँ पर नौकर रहेंगे वही पर हम भी रहेंगे। हमें बी क्लास की जरूरत नहीं है।” मैं जानती थी कि अगर हमने इनका साथ छोड़ दिया तो वे खत्म कर दिये जायेंगे। जेल के बाहर गबलपिंडी में कौन किसी हिंदू को जिन्दा देख सकता था। आखिर मेरे बहुत कहने पर वे मान गये।

जेल का बड़ा फाटक खुला। काफी अन्दर चले जाने के बाद एक और दरवाजा खुला। उसके अन्दर एक छोटा-सा बाग, बीच में बड़ा-सा आंगन और एक तरफ बड़ा-सा बरांडा था। उसमें तीन चार कमरे थे। वही कमरे हमको दिये गये। जगह अच्छी साफ-सुथरी थी और काफी फूल वहाँ पर लगे हुए थे। साथ में एक रसोई भी थी। हम यहाँ आ गये तब उन्होंने पूछा, “वृताओ तुम्हारे पास क्या है? माफ करना जेल का कानून ही ऐसा है?” मैंने वह जेवर जो मुजफ्फराबाद में मेरे पास था और वह तीस रुपये जो श्री रेड्डी ने दिये थे निकाल कर दिये। जेवर उन्होंने तोल लिया और कहा, “यह आप नहीं रख सकती। यह यहाँ के दरोगा के पास रहेगा। जब आप जायेंगी तब आपको वापस दे दिया जायगा।” यहाँ पर जितने मुलाजिम और अफसर वगैरह थे सब बड़े आदर से पेश आ रहे थे जिसे देखकर हमें बड़ी तसल्ली हुई। दरोगा तो हिंदू था। पहले तो यह देखकर मैं हैरान हुई परन्तु बाद में पता चला कि जेल के अफसर ने उसे अपनी जिम्मेदारी पर कुछ दिनों के लिये रख लिया है। जेल अधिकारियों ने हमारा काम करने के लिये कैदी मुकर्रर किये थे जो बारी-बारी से आकर हमारा काम कर जाते थे।

इस अहाते का दरवाजा बन्द रहता था और पठान उसकी रखवाली करते थे ।

हमें खाने-पीने की काफी सामग्री मिलती थी । दूध, घी, अंडे वगैरह सब ही चीजें दी जाती थीं । इसके अलावा सब्जी भी काफी मिलती थी । बच्चों के खेलने के लिए कैरम बोर्ड, ताश तथा लूडो सब उन्होंने दिये थे । कुछ पुस्तकें भी दी थीं । मुझे पूजने के लिये श्रीकृष्ण की एक तस्वीर और धूप आदि तथा गीता और रामायण आदि पढ़ने के लिये भी मिलीं । यहां पर हम अपने आपको स्वतन्त्र महसूस करने लगे । कहां तो तीन मास तक बच्चे चैन की सांस भी नहीं ले सकते थे और कहां अब उन्हें इस प्रकार खेलकूद का अवसर और सुभीता मिला ।

मैं और श्रीमती मोदी दोनों प्रातःकाल चार बजे उठकर बाहर आंगन में नल के नीचे खूब आनन्द से स्नान करती थी । उम मुनसान जगह पर तारों की टिमटिमाहट में स्नान करना बहुत ही सुखद लगता था । सायंकाल के समय घंटों तक हम प्रेम से भगवान् का भजन करते थे । यहां पर किसी प्रकार की रोक-टोक नहीं थी ।

‘ए’ क्लास में कुछ सिख ‘नेता’ थे । उन्होंने जब हमारे बारे में सुना तो कहला भेजा, “आपको फिक्र नहीं करनी चाहिए । अब तो थोड़े ही दिनों की कठिनाई है । शायद हम सब यहां से इकट्ठे जायेंगे । तब हम आपकी हर प्रकार से सहायता करेंगे । जैसे आपने अब तक हर बात का मुकाबला किया है उसी प्रकार आगे भी दृढ़ रहिये ।”

उन दिनों यह खयाल किया जाता था कि जल्दी ही पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के कैंदियों का तबादला हो जायगा । हमारा खयाल था कि हम यहां पर केवल चार पांच दिन के लिये आये हैं । परन्तु दिन गुजरते गये और हमारे जाने की बात भी दूर होती गयी । सारी पार्टी मुझे कोसने लगी कि तुमने यहां आकर गलती की । अब सारी उम्र यहीं पर सड़ना पड़ेगा । पर मैंने उन्हें समझा-बुझा कर शान्त किया और बताया कि भविष्य के बारे में कभी भी निराश नहीं होना चाहिए ।

ऊपर मैंने जिस दारोगा साहब का जिक्र किया है वह घंटों हमारे पास बैठा रहता था। अपने बच्चों को हमारे बच्चों के साथ खेलने के लिये भेजता था। वह हमसे कहा करता था कि न जाने ये लोग आपका इतना खयाल क्यों रखते हैं? शायद ऊपर से हिदायत है। एक दिन सचमुच इस बारे में यहां के कमिश्नर का फोन भी आया था। श्रीमती मोदी के पैरों में कुछ तकलीफ हो गई थी। एक कम्पाउंडर रोज आकर पट्टी कर जाता था। मेरी और श्रीमती मोदी की कमीजें बिल्कुल फट गयी थीं। जेल के दारोगा ने दो नई कमीजें और दो चप्पलें बनवा दी थीं। यही पर मैंने अपने पिता, देवरों तथा अन्य रिश्तेदारों को पत्र लिखे। यहां से काश्मीर को पत्र नहीं जा सकता था। इसलिये पहले उन्हें भारत में एक परिचित के नाम भेजा गया। वहां से उन्होंने उन्हें काश्मीर भेज दिया। इस प्रकार तीन महीने के बाद मेरे रिश्तेदारों को मेरे बारे में मालूम हुआ।

जो पठान हमारे दरवाजे पर पहरा देते थे वे कभी-कभी अन्दर आकर हमारे साथ बातें करते थे। कहते थे कि आजकल उन्हें बड़ी तकलीफ है। वे दिन-रात काम पर लगे रहते हैं, पर उनका ध्यान घर पर रहता है। आजकल कबाइलियों ने गांव-गांव में लूट-मार मचा रखी है। इन्हें संभालना अब बड़ा मुश्किल हो गया है। कुछ को तो हुकूमत ने लड़ाई के लिये बुलाया है पर कुछ खुद ही लूट-खसोट करने आ गये हैं। यह लोग और भी कितनी ही बातें करते थे परन्तु मैं उन्हें यही समझाती कि प्रेम से काम लो और साम्प्रदायिकता को दूर फेंको। यह तुम्हारा साथ नहीं देगी। मैं देखती थी कि सब मेरी बातों को बड़े ध्यान से सुनते थे। कभी-कभी हम उन्हें खाना भी खिलाते थे।

तिथि के हिसाब से मेहता साहब को शहीद हुए तीन मास हुए और अष्टमी आयी, तो मैंने जेल-कर्मचारियों से कहा, “भाई! मेरे पास खाने-पीने का काफी सामान है मैं कुछ कैदियों को भोजन कराना चाहती हूं।” वे लोग मान गये और कुछ साधु कैदियों को भोजन कराने ले आये। इन दिनों बापू ने भारत में आमरणव्रत रखना आरम्भ किया था। कुछ जेल के मुसलमान

कर्मचारी आकर मुझसे कहने लगे, “देखो ! हिंदुस्तान की चाल, वह सब तरफ़ रुख़ बदलता है।” मैंने उनसे कहा, “आज नहीं तो कल तुम लोग इस बात की बड़ी इज्जत करोगे। अभी तुम्हारे दिलों में द्वेष की अग्नि धधक रही है जब यह ठंडी हो जायगी तब तुम्हें भले-श्वरे का ज्ञान होगा।”

: २४ :

फिर नरक में

इस जेल में दो सप्ताह व्यतीत हो गये। इन्ही दिनों दारोगा ने अपना परिवार अम्बाला भेज दिया। एक दिन रात को स्वप्न में मैंने एक वृद्ध महात्मा देखा। उसने मुझे कहा, “तीन दिन में तुम यहां से जा रही हो।” प्रातः काल मैंने सबको यह स्वप्न सुनाया तो किसी को विश्वास न आया। पर तीसरे दिन जब हम खाना खा रहे थे तो दारोगा ने आकर कहा, “आपको मुबारक हो। आप लोग आज जम्मू जा रहे हैं। शीघ्रतापूर्वक तैयार हो जाइये। परन्तु किसी दूसरे को पता नहीं लगना चाहिए। कमिश्नर की ऐसी ही हिदायत है।” हम सब तैयार होगये। सब प्रसन्न थे कि अब हमारे दुःखों का अन्त आ पहुँचा है। ठीक चार बजे कमिश्नर ने दो अफसरों के साथ अपने यहां से स्टेशन वेगन भेजी। जब हम जाने लगे तो सब कैदी, कर्मचारी आदि जो इतने दिनों से हमारा काम कर रहे थे बड़ी हमदर्दी से प्रार्थनाएं करने लगे कि ईश्वर इन बच्चों को कुशलता पूर्वक इनके वतन पहुँचावे। जाते समय जेल का दारोगा जेवर और तीस रुपये मुझे वापस दे गया। मैंने सबको धन्यवाद दिया और कार पर सवार हुई। यह लोग हमें कमिश्नर की कोठी पर ले गये। यहां काफी फौजी सिपाही थे। एक मुसलमान हमसे आकर पूछने लगा, “क्या तुम शेखनियां बनी हो?” मैंने कहा, “नहीं, हम हिंदू हैं शेख नहीं हैं और न बनेंगे।” वह नाक-भौं सिकोड़ कर चला गया। इतने में दोनों अफसर आये। यह दोनों देखने में पठान लगते थे। उन्होंने हमें लारी पर बैठने को कहा। हम लारी पर बैठ गये। उसमें

और भी कुछ आदमी थे जिनमें से एक मुज़फ़्फराबाद का भी था। यह सब मुसलमान थे। मैंने पूछा, “ये अफसर कौन हैं?” जवाब मिला, “एक वजीर वजारत, मीरपुर, पेशावर के प्राइम मिनिस्टर का भाई और दूसरा सी. आई. डी. का सुपरिन्टेंडेंट है। यह लोग आपको लेजाने के लिये आये हैं।” सी. आई. डी. के अफसर ने हमारी लारी के शीशों पर परदे लगवा दिये ताकि बाहर के लोग न देख सकें। मुझसे आकर कहने लगा, “क्या करें? हालत ऐसी ही खराब है। लोग काबू से बाहर हो गये हैं। यहां से आपको बड़ी हिफाज़त से ले जाना पड़ेगा।” आगे-आगे मोटर चली, उसके पीछे एक ट्रक जिस में कुछ सैनिक तथा रजाइयां भरी हुई थीं। बाद में हमारी लारी थी और उसके पीछे फिर एक और ट्रक था। हम सबका यही खयाल था कि ये लोग हमे जम्मू सीमा पर ले जा रहे हैं।

जब हम जेहलम पहुंचे तो काफी अंधेरा हो गया था। वहां पर हम रके। और एक मकान के एक कमरे में सोये। प्रातःकाल हमारे कमरे में वही मुज़फ़्फराबाद वाला आदमी आया, जो लारी में हमारे साथ था। मैंने उससे पूछा, “यह लोग हमें जम्मू सीमा पर कब ले जायेंगे?” वह कहने लगा, “यह लोग आपको जम्मू नहीं, मीरपुर जिले में ले जा रहे हैं।” यह सुनकर हम सब हैरान रह गये। उन्होंने हमें धोखा क्यों दिया? मैंने वजीर वजारत (डी. सी.) को अपने कमरे में बुलाया और पूछा, “हमें आप लोग कहां ले जा रहे हैं?” वह कहने लगा, “मैं आपको जिला मीरपुर ले जा रहा हूं।” मैंने कहा, “आपने हमारे साथ धोखा किया। हम समझ रहे थे कि आप लोग हमें जम्मू सीमा पर ले जा रहे हैं। आप हमें फिर मुसीबत में फंसाना चाहते हैं। क्या आपको उस प्रभु का डर नहीं?” यह कहते हुए मेरा गला भर आया और आंखों में आंसू आ गये।

वह कहने लगा, “आप फिक्र न करें। आपके साथ कोई धोखा नहीं किया गया है। मुझे आप नहीं पहचानतीं, मैं भी काश्मीर में सबजज था। मैं आपके पति को जानता हूं। मैं पेशावर के प्राइम मिनिस्टर का भाई हूं।” उसने अपना नाम बताया और कहने लगा, “मुझे कुछ दिन पहले ही मालूम

हो गया था कि यह सब होने वाला है। इसलिये मैं अपने बच्चों को पेशावर पहुंचा आया था। अब मैं आजाद काश्मीर के साथ काम कर रहा हूं। क्या मेहता साहब को पता नहीं था कि यह सब होने वाला है ? उन्हें चाहिए था कि वे वहां से हट जाते या आप लोगों को श्रीनगर भेज देते।”

मैंने कहा, “मेहता साहब अपने परिवार और मुज़फ़्फराबाद के लोगों में भेद नहीं समझते थे। क्या उन सबकी जानों से हमारी जानें कीमती थीं ? अगर वह चाहते, तो उस समय भी छिपकर बच सकते थे; परन्तु उन्होंने कर्तव्य के आगे चार दिन की जिन्दगी को ठुकरा दिया।” वह कहने लगा, “खैर, उन्होंने जो किया अच्छा किया। पर इन बच्चों की और आपकी जिन्दगी कैसे कटेगी। क्या आपने कभी इसके बारे में भी सोचा है?” मैंने कहा, “उसकी मुझे कोई फ़िक्र नहीं है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि अच्छी बातों का नतीजा कभी बुरा नहीं होता। वह सत्य पर बलिदान हुए हैं और सत्य पर ही हम चल रहे हैं और वही हमारा साथ देगा।” इसपर वह बोला, “आपको कोई फ़िक्र नहीं करनी चाहिए। आपको हम अलीबेग कैम्प में नहीं भेजेंगे। आपके लिये हमने अभी दो हफ्ते पहले दुतियाल नामक जगह पर नया कैम्प खोला है। वहां पर एक बड़ा शरीफ बूढ़ा ठेकेदार है। उसीके मकान में यह कैम्प खोला गया है। मैंने बड़े-बड़े घरों की औरतों को, जो मुसलमानों के घरों में थीं, निकलवाकर वहां पर रखा है। वहां से सभी को एक साथ हिंदुस्तान भिजवाया जायगा। उनके बदले में हमें मुसलमान औरतें वहां से मिलेंगी। आप आजाद काश्मीर के कैदी हैं इस लिये आपको रावलपिंडी में नहीं रखा जा सकता। मैं आज दिन में काम पर जा रहा हूं। शाम को आकर आपको दुतियाल पहुंचा दूंगा।” मेरी बड़ी लड़की वीणा ने उसे पहचान लिया। पूछा, “आपकी लड़की मेरी क्लासफेलो थी, अब वह कहां पर है ?” इसपर वह कुछ समय चुप रहा और फिर ठंडी आह भर कर कहने लगा, “वह सब लोग पेशावर में हैं। तुम्हें फ़िक्र नहीं करनी चाहिये, बेटी। सब अच्छा होगा। मैं आज-कल वहां का डी० सी० हूं। मैं आप लोगों का हर तरह खयाल रखूंगा।”

इतना कहकर वह चला गया ।

मैं विचार करने लगी कि हर नई मुसीबत में प्रभु कोई-न-कोई सहारा बना देते हैं । सब बातें हमारी परीक्षा के लिये होती हैं । मैंने श्रीमती मोदी से कहा, “हम बड़े खतरे में जा रहे हैं । वह मुजफ्फराबाद से भी कठिन है । मैंने ही आप सबसे चलने के लिये कहा था, पर मैं नहीं जानती थी कि अभी हमें और ठोकरें खानी हैं ।” सब पार्टी घबरा गई परन्तु चुप रहने के अलावा और चारा ही क्या था ।

शाम को डी० सी० आया और हमसे चलने को कहा । तब काफी अंधेरा हो चुका था । ट्रकों में रजाइयां भरी हुई थीं । उन्हींके ऊपर हमें बिठाया गया । वह सफर कितना भद्दा था । बच्चे यह सब देखकर ठंडी आहें खींचने लगे । मैंने कहा, “अब तुम्हें फिर एक और बड़ी परीक्षा की तैयारी करनी होगी जो बीते हुए दिनों से भी कठिन है । परन्तु हिम्मत रखो और खुशी से इन ट्रकों पर चढो । भगवान् तुम्हारी परीक्षा ले रहे हैं !” ट्रक तेजी से चल पड़ी । साथ ही वह लोग मोटर में चले । रास्ते भर पठान ही पठान नज़र आते थे । तेजी से चलने के कारण हमें बैठने में बड़ी कठिनाई हो रही थी । गिरने का भय लगा रहता था । तेज हवा के झोंके चल रहे थे । जैसे-तैसे हम एक स्थान पर पहुंचे । यहां ट्रक रुकी । डी० सी० ने कहा, “दुतियाल यहां से दो मील पर है । आपको पैदल जाना पड़ेगा क्योंकि वहां ट्रक नहीं जा सकती । मैं यहां से दूसरी जगह जा रहा हूं । आपके साथ एक और आदमी जायगा । वह आपको कैम्प तक पहुंचा देगा । परन्तु आपके नौकर वहां नहीं जा सकेंगे । वहां मर्दों को रखने की इजाज़त नहीं है ।” मैंने कहा, “यह नहीं होगा । हम जहां जायेंगे ये भी साथ ही जायेंगे । मैं इन्हें किसी भी हालत में अलग नहीं कर सकती ।” वह कहने लगा, “अच्छा । मुझे आपके लिये यह कायदा तोड़ना पड़ेगा । आप इन्हें साथ ही ले जाइये । मीरपुर के मंगला-भाई जागीरदार का परिवार वहां पर भेजा गया था परन्तु जागीरदार को वहां रहने की इजाज़त नहीं मिली थी और वह अलीबेग कैम्प में भेज दिया गया था । वहीं पर कुछ दिन बाद उसे किसीने कत्ल कर दिया ।”

हम सब एक आदमी के साथ अपनी नई मंजिल का सफर करने चल पड़े। रास्ता खेतों में से होकर जाता था। मुजफ्फराबाद के उस व्यक्ति ने मुझसे कहा था कि जरा संभल कर जाना। यहां के लोग बड़े जालिम हैं; परन्तु इसका इलाज सिवाय धीरज और ईश्वर-विश्वास के और क्या था। थोड़ी देर में हम वहां पहुंच गये। साथवाले व्यक्ति ने बाहर से आवाज़ दी। एक आदमी ने दरवाजा खोला और हमें एक कमरे में ले जाया गया। कमरा क्या था, नरक था। इसमें पचास स्त्रियां तथा बच्चे थे। जमीन पर घास पड़ी हुई थी, उसी पर सब लेटे हुए थे। कमरे में धीमी-धीमी रोशनी हो रही थी। सारा कमरा खचाखच भरा हुआ था, कहीं पर पांव रखने की जगह नहीं थी। वहां पर इतनी दुर्गन्ध थी कि हमारा दम घुटने लगा और एक मिनट खड़ा रहना मुश्किल होगया। सब स्त्रियां घबराई हुई-सी नज़र आती थीं और सूख कर कांटा होगई थी। तीन-चार बूढ़ी स्त्रियों को छोड़ बाकी सब नव-जवान महिलाएं थी। वे हमसे कहने लगीं, “आप यहां पर क्यों आई हैं? यहां पर बहुत मुसीबतें हैं। रोज पठान यहां से गुजरते हैं। कई बार उन्होंने यहां आने की कोशिश की है। बहन, इस ज़िन्दगी से तो मरना ही अच्छा है। हम चक्की पीसती हैं। हमारे मुखों में सूखा बाजरा खा-खा कर पस पड़ गई हैं।” दो-चार स्त्रियों ने तो अपने मुंह भी खोल कर दिखाये। सचमुच ज़ख्म ही ज़ख्म थे। फिर कहने लगीं, “देखो, कितनी जुएं हमारे बालों में पड़ी हैं। वे हमारे बिस्तरों के ऊपर रेंग रही हैं।” उन्होंने मुझे रोशनी में वह बोरियां दिखाई जो वह ओढ़े हुए थीं। सचमुच इनपर जुएं रेंग रही थीं।

हम सब यह देखकर बहुत घबराये और हमारा धीरज जाता रहा। फिर दो-चार को छोड़कर वे सब कलमा पढ़ने लगीं। मैंने पूछा कि यह क्या है तो वे कहने लगीं, “हम तो पक्की मुसलमान हैं। तीन-तीन महीने तक हम उनके घरों में रही हैं। अब हमें यह लोग यहां लाये हैं। कहते हैं कि तुम्हें हिंदुस्तान भेजेंगे। देखा जायगा जब भेजेंगे। अभी तो ये लोग हमारी और भी बेइज्जती करना चाहते हैं। यह कैम्प जो इन्होंने बनाया है इसकी हर

जगह यही शोहरत हो गई है कि जगह-जगह की नवजवान तथा सुन्दर स्त्रियां यहां पर हैं। हर समय पठान और आजाद काश्मीर के आदमी बुरी नीयत से यहां आते हैं। परन्तु हमारी किस्मत से यहां का कैम्प कमांडेंट अच्छा है। वह किसी को अन्दर नहीं आने देता। इसी कारण वे लोग उसके भी बैरी हो गये हैं। अगर तुम यहां पर रहोगी तो सब कुछ मालूम हो जायगा।” मेरे साथी यह सुनकर रोने लगे और कहने लगे, “न जाने इस डी. सी. को क्या सूझी जो हमें यहां ले आया?” मैं अन्दर नहीं ठहर सकी और बाहर आंगन में आकर खड़ी हो गई। इतने में कैम्प कमांडेंट जिसे वहां ठेकेदार कहते थे, अन्दर आया। इसकी आयु करीब पचास साल की थी। देखने से वह कोई भला आदमी जान पड़ता था। आते ही मुझे कहने लगा, “आपको यह लोग यहां क्यों ले आये, यहां तो बड़ी तकलीफें हैं। यहां पर तो हर समय कबाइलियों का डर लगा रहता है। इस कैम्प की शोहरत फैल गई है कि यहां पर जवान स्त्रियां हैं और वे लोग भी यही हैं जिनके घरों से यह औरतें निकालकर लाई गई हैं, वे इन्हें फिर भगाकर ले जाना चाहते हैं। क्या कहूं यह औरतें भी बड़ी अजीब हैं। कहतीं हैं हम हिन्दुस्तान नहीं जायेंगी। हमें उन्हींके साथ भेज दो। यहां पर मैं हूं और एक मेरा नौकर है। इसके अलावा मैंने अपनी एक रिश्तेदार औरत खाना पकाने के लिये रखी है। अपना सब खान्दान जेहलम पहुंचा आया हूं। अपने सब मकान इस अहाते में कैम्प के लिये खाली कर दिये हैं। मेरी भी लड़कियां हैं, मैं इन्हें उन्हींके समान समझता हूं। मुझे तो खुदा पर भरोसा है। वही बचाएगा। जिस काम की जिम्मेदारी मैंने ली है उसको आखिर तक निभाऊंगा। आजाद काश्मीर वालों ने कोई खास इन्तिजाम नहीं किया है। कल की बात है कि पठानों का लीडर बादशाह गुल कुछ अपने पठान सिपाहियों के साथ यहां आया। साथ में एक लारी तथा मशीनगन भी लाया था। वह यहां से कुछ जवान लड़कियों को लेने आया था। बताइये, अगर खुदा ही मेरी मदद न करता तो मैं उनका मुकाबला कैसे कर सकता था। यहां आकर उन्होंने दरवाजे खटखटाने शुरू किये और गालियां दे दे कर कहने लगे, ‘खोलो

किवाड़, नहीं तो हम तोड़ देंगे ।' मैं ऐसा नीच काम कभी भी नहीं कर सकता था कि इन बेगुनाह, पनाह में आई हुई लड़कियों को उनके हवाले कर देता । चाहे वे लोग मुझे मार ही क्यों न देते । यह लोग इस्लाम के नाम पर धब्बा लगा रहे हैं लेकिन मैं दुनिया को बता दूंगा कि सच्चा इस्लाम क्या है ? और वह क्या फरमाता है । जब वह लोग बहुत दिक् करने लगे तो मैं पिछली दीवार फाद कर गांव में चला गया और वहां पर मैंने गांववालों को इकट्ठा किया और कुछ आदमियों को गोविन्दपुर थाने पर इत्तला देने के लिये भेजा । गांववालों को देखकर वे लोग चले गये । मैं उन मुसलमानों में से नहीं हूं जो कि मजहबी ताअस्सुब की वजह से अपना ईमान खो बैठते हैं । कल आपको और भी यहां की बातें सुनाऊंगा । ऊपर की मंजिल में और भी औरतें हैं । आज आपको बाहर की तरफ के कमरे देते हैं । कल मैं अपने साथवाला कमरा आप के लिये खाली कर दूंगा । आप लोग अपना सब इन्तिजाम अलग कर लें । रात को जरा सभल कर सोना । जालिमों का बड़ा खतरा रहता है । इन दो हफ्तों में उन्होंने कई बार यहां पर हमले करने की कोशिश की है ।' मैंने कहा, "आपके विचार बड़े ही अच्छे हैं । मुझे आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई । मैं आपसे बहुत कुछ सीखूंगी । आपको क्या कठिनाई हो सकती है । आपकी सहायता सच्चाई करेगी जिसको आपने अपनाया है ।"

हम सब लोग बाहर के कमरे में आये । यहां भी काफी सामान था । नौकरो ने सामान एक तरफ रखा और नीचे घास बिछा कर उसपर हमारे बिस्तरे बिछाये ; परन्तु रात भयानक दिखाई दे रही थी । सब इस नई आने-वाली विपत्ति के कारण घबराये हुए थे । मैं भी हौसला हार चुकी थी । विशेषकर मुझे इन स्त्रियों की दशा पर रोना आ रहा था । साथ ही लड़कियों और ओम् व जोधा की भी चिन्ता थी । न जाने किस समय इन्हें जान से हाथ धोना पड़े ।

इसी सोच में मेरी आंखों से आंसू बहने लगे, कितनी कोशिश की कि दिल को संभालूं ; परन्तु बेकार । तरह-तरह के विचार मन में आये । क्या

भारत की नारी में इतनी कायरता आ गई है, जो वह अपने आत्म-गौरव को खो बैठी है। उसे तो जन्म से ही मरना सिखाया जाता था किन्तु अब तो इन लोगों में कष्ट सहन करने की कोई शक्ति ही नहीं रह गई है। यह सोचकर मैंने निश्चय किया कि चाहे कुछ भी हो अपने ऊपर विपत्ति लेकर इन्हें भारत ले जाऊंगी और इन्हें हिम्मत देने की कोशिश करूंगी ताकि यह दुःख का मुकाबला खुशी-खुशी कर सकें।

इसी तरह रात बीत गई। प्रातःकाल बारी-बारी से स्त्रियां मेरे कमरे में आने लगीं और अपनी दुःख-भरी गाथा सुनाने लगीं। जिसे सुनकर दिल कांप उठता था। मुझे अपनी बीती इनके दुःखों के सामने तुच्छ जान पड़ी। मैं इतना रोई कि मेरे सभी साथी परेशान हो गये। वे हैरान थे कि इसको आज क्या हो गया है? पूरे दो दिन तक मेरी यही दशा रही।

दुतियाल कैम्प से कोई चार मील दूर गोविन्दपुर गांव था। आज़ाद काश्मीर वालों ने जिले का दफ्तर यही पर रखा था। थाना भी यहीं था। इस इलाके में पठान बहुत फैले हुए थे। वे यहां के मुसलमानों तक को भी लूटते थे। उनके पशु वगैरा मारकर खा जाते थे। इसलिये आज़ाद काश्मीर वालों ने जिम्मेवार अफसर सब पठान ही रखे थे। पुलिस भी पठानों की रखी थी परन्तु फायदा कुछ नहीं था। जब पठानों का काफिला निकलता तो किसीको हिम्मत नहीं पड़ती थी कि उन्हें रोकें। इन स्त्रियों के मुख से जो सुना, उससे यही अनुमान होता था कि मीरपुर के मुसलमानों ने हिन्दू स्त्रियों, बच्चों तथा मरदों पर जितने जुल्म किये थे, शायद ही उतने किसी जगह हुए हों।

सांयकाल के समय गोविन्दपुर से तीन कालिज के लड़के आये। ये पेशावर से यहां के कैम्पों की देख-रेख करने आये थे। इनमें से एक यहां के डी. सी. का भतीजा था और बाकी दो उसके मित्र थे। ये मेरे पास आये और मेरी लाल आंखें देखकर बोले, “आप इतनी घबराई हुई क्यों हैं?” मैंने कहा, “कल से इन स्त्रियों की दशा देखकर मेरा मन काबू से बाहर हो गया है।” वे कहने लगे, “आगे सब ठीक होगा। अबतक जो होना

था सो हो गया।” मैंने कहा, “आप यह क्या कह रहे हैं। क्या आपने यह कैम्प मज़ाक के लिये बनाया है। दिखावे भर के लिये दो बूढ़े सिपाही रख छोड़े हैं। प्रतिदिन पठानों का खतरा रहता है। इनकी यह दशा है कि न इनके पास बिस्तरे हैं और न कपड़े। घास पर पड़ी रहती हैं और दो-दो रोटियां खाने को मिल जाती हैं।” वे कहने लगे, “ये सब बातें हम डी. सी. से कहेंगे।” उनमें डी. सी. का भतीजा बहुत ही शरीफ दीख पड़ा। कहने लगा, “अगर आप अलीबेग कैम्प की हालत देखें या पूरी तौर से सुनें तो आपको मालूम होगा कि यहां पर इनको कितना आराम है।”

वह कैम्प क्या था काफी बड़े अहाते में चार पांच मकान एक साथ बने हुए थे। बीच आंगन के एक कुआं था। आस-पास मीलों तक खेत-ही-खेत थे। पास में थोड़ी दूरी पर मुसलमानों के नौ दस घर थे। इस मकान के निचले हिस्से में पचास औरतें और बच्चे थे। इन सबका खाना एक जगह बनता था। बारी-बारी से वे स्वयं खाना बनाती थीं। उन्हें एक मिट्टी की हंडिया मिली हुई थी। उसीमें दाल बनाती थीं और तंदूर में रोटियां लगा लेती थीं। दूसरी मंजिल में तीस के करीब औरतें और बच्चे थे। ये अपना खाना अलग पकाती थीं। यहां मुझे कुछ मीरपुर की जानी-पहचानी औरतें मिलीं। श्रीमती मोदी की भी कई परिचित थीं।

सांयकाल को सी. आई. डी. का सुपरिन्टेंडेंट मेरे पास आया और मुझे अलग बुला कर कहने लगा, “मुझे बताइये कि आप अपना जेवर या रुपया मुजफ्फराबाद में जमीन में गड़ा हुआ तो नहीं छोड़ आई हैं। अगर हो तो हम वहां से मंगवा कर आपके लिये यहां खर्च करेंगे।” मैंने कहा, “मेरा जेवर या रुपया जो कुछ भी था वह कोठी में ही रह गया। मैंने कहीं गाड़ा नहीं था।”

मैंने फिर उससे बड़ी नरमी से कहा, “मैंने यहां आकर बहुत कुछ सुना है। अगर तुम हमारा या इन बहनों का पूरा प्रबन्ध नहीं कर सकते तो यह कैम्प क्यों बनाया है? आपको इनके साथ अच्छी तरह सलूक करना होगा और जो यहां पर पहरा देते हैं, उनसे भी यही कहना होगा।”

उसने पहरे वाले बूढ़े सिपाहियों को मेरे सामने बुला कर कहा, “इनका खास ध्यान रखना । अगर कोई भी शिकायत आई तो तुम लोगों को गोली से उड़ा दूंगा ।”

इन सिपाहियों की वाबत मैंने बहुत कुछ सुना था कि इनका कैम्प की स्त्रियों के साथ बहुत बुरा सलूक था । डी. सी. भी आया, उसने सबको एक एक-नई रजाई दी और हमारे पास जो पुरानी रजाइयां थी वह ले ली ।

: २५ :

भारत नहीं जाएंगी

एक दिन कैम्प कमांडेंट मुझसे कहने लगा, “बहन जी ! ये औरतें हिन्दुस्तान नहीं जाना चाहतीं । इनमें से केवल थोड़ी-सी हैं जो जाना चाहती हैं । मैं इनको बहुत समझा चुका हूँ परन्तु ये मानती ही नहीं । अब डी. सी. के सामने इनके बयान होंगे, जो जाने पर राजी होंगी उन्हें भेजा जायेगा, जो नहीं जाना चाहेगी, उन्हें जिनके घर से लाये थे, उन्हींके घर वापस भेज दिया जायेगा । देखिये, इतने अमीर घरों की औरतों को कसाई, मजदूर, किसान तथा मोची वगैरह भगा कर ले गये । यह उनके पास तीन-तीन महीने तक रही । इस काम में आप मेरी मदद करें और जब मैं बाहर जाऊँ तो आप इनकी देख-रेख करें । आपको इस कैम्प पर पूरा हक है ।”

उसकी बातें सुनकर मैं बहुत प्रभावित हुई और मैंने उसकी सहायता करने का निश्चय किया । मैंने सब स्त्रियों से कहा कि कल हम सब प्रातः-काल तथा सायंकाल मिलकर भगवान् का भजन करेंगी । कुछ तो मान गई परन्तु कुछ कहने लगीं, कि वे तो मुसलमान हैं । वे भजन में शामिल नहीं हो सकतीं । मैंने उन्हें समझाया कि आना होगा क्योंकि भजन करने से किसीका धर्म नहीं जाता । दूसरे दिन ईश्वर-भजन के लिये जो स्त्रियाँ आईं उनसे मैंने कहा, “दो साल हुए, मुझे श्रीनगर में एक महात्मा मिले थे, जिन्हें सब मगन बाबा कहते हैं । उन्होंने मुझे सदा मगन रहने का

उपदेश दिया था। उन्होंने मुझे कुछ ऐसे भजन बताये थे जिनसे सचमुच मुझे बल मिलता रहा। वही भजन मैं यहां बताऊंगी। और देखो आज तक तुम-पर जो बीती, सब जबरन थी, तुम्हारा कोई दोष नहीं था। अब आगे जो बुरा करोगी वह पाप होगा क्योंकि वह तुम जान-बूझकर करोगी। इस मुसीबत से तुम्हें सबक सीखना चाहिये, अपना कर्तव्य नहीं भूलना चाहिये।”

मेरी बातें सुनकर वे कहने लगी कि उनपर क्या बीती है? क्या बतायें। उनके सामने उनके पति और बच्चे कुल्हाड़ी से कत्ल किये गये हैं। कातिल कहते थे कि वे काफिरों पर छः आने की गोली खर्च नहीं करेंगे। वे उन्हें अपने घर ले गये और उनसे निकाह किया। उनके गोदी के बच्चे रास्ते में फेंक दिये गये। एक स्त्री ने कहा, “मैंने पहाड़ी से नीचे छलांग लगाई कि जान निकल जाय। कमर टूट गई पर जान नहीं निकली।” दूसरी बोली, “मैं कुएं में कूद गई थी। वे मुझे कुएं से निकाल लाये।” एक ने अपना बदन और मुह दिखाया जिसपर बरछों के कई घाव थे। वह बोली, “मैंने कहकर अपने ऊपर पांच बार बरछों से करवाये परन्तु मैं मरी नहीं। हुआ वही जिससे मैं डरती थी। अब तुम कहती हो, यह करो, वह करो, बताओ कहां है तुम्हारा ईश्वर?”

मैंने किसी तरह उनको ढाढस बंधाया और सब मिलकर ईश्वर-भजन करने लगीं। उसके बाद यह प्रतिदिन का नियम बन गया। अन्त में कई दिन के उस परिश्रम का यह परिणाम हुआ कि सब हिन्दुस्तान आने को राजी हो गई। उन्होंने डी. सी. को बयान दिया कि चाहे हमारे टुकड़े कर दो पर हम भारत ही जायेंगी।

कुछ ही दिनों में प्रभु की कृपा से कैम्प की हालत सुधर गई। पहरों के लिये और सिपाही आ गये। अब भी प्रतिदिन लोगों के घरों से दो-दो चार-चार स्त्रियां लाई जाती थी जिन्हें समझाने के लिये मुझे कई-कई दिन लग जाते थे। यहां तक कि मुझे उनके साथ सख्ती भी करनी पड़ती थी; परन्तु अन्त में वे सब अपने कर्तव्य को समझ जाती थीं।

बाद में छानबीन करने पर पता चला कि जो स्त्रियां भारत नहीं आना चाहती थीं, उसमें उनका दोष नहीं था। उन्हें यह कहा गया था कि ये लोग तुम्हें हमारे घरों से निकाल कर पठानों के हाथ में दे देंगे। अगर तुम हिन्दुस्तान भी गईं तो तुम्हारे साथ कोई बात तक नहीं करेगा। मैंने उन्हें विश्वास दिलाया, कि वे बेफिक्र रहें। माना यहां पठानों का डर है। परन्तु हम भी तो उनके साथ हैं। मैंने उनसे वादा किया कि अपनी लड़कियों से पहले मैं उन्हें बचाने की कोशिश करूंगी। और उन्हें हर तरह से दृढ़ रहने की बात सुझाई। जब उन्होंने मेरे प्रेम को समझा तो वे सब तैयार हो गईं। कहने लगीं, कि भारत पहुंचकर, जो मैं कहूंगी, वही वे सब करेंगी। इसपर भी वे कभी-कभी यह सोचकर निराश हो जाती थीं कि हम कभी भारत जावेंगी भी या यहीं घुल-घुल कर मर जायेंगी। परन्तु मैं उन्हें कहती, “अपने भविष्य के बारे में निराश मत होओ। जो होगा, अच्छा ही होगा। तुम सबको कहना चाहिये, कि तुम भारत जाओगी।”

सब सिपाही मुझे माताजी कहते थे। गांव से भी मुसलमान स्त्रियां मेरे पास आती थीं। और घंटों बैठ कर तरह-तरह की बातें पूछती थीं। मैं उन्हें समझाती थी कि जो कुछ इस इलाके में हो रहा है या हुआ है, वह तुम लोगों पर मुसीबत लायेगा। तुम स्त्रियां हो, तुम्हें स्त्री-जाति के इस अपमान को महसूस करना चाहिये। ये जो हिन्दू स्त्रियां तुम्हारे घरों में जा रही हैं, ये आग की चिनगारियां हैं किसी भी समय धधक उठेंगी। घरों में कितनी फूट पड़ रही है। जब कोई व्यक्ति किसी हिन्दू स्त्री को अपने घर ले जाता है तो पहली स्त्री, उसके बच्चे और मां-बाप, सब में झगड़ा हो जाता है और तुम्हारी ज़िन्दगी नरक बन जाती है। अगर तुम सब बहनें मिल कर सहायता करो, तो एक तो जिस स्त्री पर अत्याचार हो रहा है, वह बच जायेगी और दूसरे तुम्हारा घर नरक नहीं बनेगा।” मेरी यह बात उनके मन में बैठ गई और वे इस बात की निन्दा करने लगीं। उन्होंने मुझे कई लड़कियों का पता बताया, जो कैम्प में रहनेवाली स्त्रियों की पुत्रियां थीं। मैंने कैम्प के सिपाहियों की सहायता से उन्हें लोगों के

घरों से निकलवाया। ये लोग मेरी बात मानते थे।

इस काम में कैम्प के कमांडेंट ने भी बड़ी सहायता की। अब रोना-धोना कम हो गया। शाम-सवेरे हम सब मिलकर भजन करने लगीं। कुछ मुसलमानों ने इस बात पर एतराज किया कि यहाँ भजन क्यों पढ़े जाते हैं? रात को जब हम भजन करते थे, तो ये लोग बाहर खाली फायर करते थे और हमसे आकर कहते थे कि पठान आये हैं, भजन बन्द करो। हम बन्द नहीं करते थे, परन्तु जब उन्होंने बहुत एतराज किया तो हम आहिस्ता-आहिस्ता भजन करने लगीं; परन्तु छोड़ा नहीं। वे भी समझ गये कि अब यहाँ दाल गलनेवाली नहीं है। इसलिये उन्होंने एतराज करना छोड़ दिया। इतना कुछ होते हुए भी वहाँ हर समय कबाइलियों का भय रहता था। अक्सर कबाइलियों की पार्टियां जब उस रास्ते से होकर नौशहरा के मोर्चे पर जाती थीं तो कैम्प में उसका भय छा जाता था। थी भी भय की बात। जिनके घरों से स्त्रियां यहाँ लाकर रखी गई थीं वे उन्हें बताते थे कि यहाँ अच्छे-अच्छे घरों की नव-युवतियां हैं। इसलिए जब उनकी पार्टियां हमारे कैम्प के सामने से गुजरतीं तो सारे कैम्प में सन्नाटा छा जाता था। कोई स्त्री ऊँचा सांस तक नहीं लेती थी। कोई घास में तो कोई कहीं कोने में छिप जाती थी। राने में हंसने की बात यह थी कि इस भय में वे मेरी ओर देखती रहती थीं कि जो उपदेश मैं उन्हें देती हूँ खुद उसका पालन करती हूँ या नहीं। कभी-कभी वे मुझे घेरकर बैठ जाती थीं। तब मैं उनसे कहती, “डरो मत। दृढ़ रहो और पूरी ताकत से विपत्ति का सामना करो। अगर अभी से डर के कारण अपनी शक्ति खो दोगी, तो समय पर अपनी रक्षा नहीं कर सकोगी।” मैं आहिस्ता-आहिस्ता राम-नाम जपती थी, वे भी जपती जाती थीं और इस प्रकार भय टल जाता था। मेरा छोटा लड़का विमल जब सुनता था कि कोई पार्टी आ रही है तो झट बाहर से दौड़कर मेरे पास आता और मुझसे कहता, “सुनो माताजी! पठानों की पार्टी इस तरफ आ रही है। तुम चिंता मत करो। तुम यहीं बैठो और लड़कियों को घास

में छिपा दो। मैं बाहर जाता हूँ। मैं किसीको तबतक अन्दर नहीं आने दूंगा जबतक मैं जिंदा हूँ।” वह निर्भय होकर बाहर चला जाता था। मैंने उसे एक दिन भी नहीं रोका। मैं उसका दिल तोड़ना नहीं चाहती थी और साथ ही उसे यह भी नहीं जताना चाहती थी कि वह बालक कुछ नहीं कर सकता। उसके जाने के बाद मैं अक्सर दोनों हाथों से अपना सिर थाम लेती थी, मां की ममता आंखों से आंसू बन कर बहने लगती थी। कभी-कभी सोचती थी, जाने जिंदा लौटेगा भी या नहीं। कैम्प की स्त्रियां अक्सर मुझ-से कहती थीं कि तुम इसे रोकती क्यों नहीं? कहीं बाहर गोली चली, तो बच्चे से हाथ धो बैठोगी। मैं कहती, “मैं सब कुछ जानती हूँ पर मैं उसे डराना नहीं चाहती।”

इस रोज-रोज के हमले से हम सब बहुत तंग आ गई थीं। परन्तु सहने रहने के अलावा और कोई इलाज भी नहीं था। एक बार मैं सब बच्चों को लेकर बैठी हुई थी। रात का समय था। सब कहने लगे कि अब यह जीवन-लीला समाप्त होनी चाहिये। ऐसे कबतक चलेगा? यहां से छूटने की कोई उम्मीद नहीं है। अब गर्मी आ रही है। खेतों में सांप निकलेंगे। जिस दिन इस जीवन से ऊब जायेंगे, जाकर खेतों में लेट जायेंगे और सबको सांप काट लेंगे। घुल-घुल कर मरने से मौत कहीं अच्छी है।

एक बार पास वाले गांव में पठानों की एक पार्टी आई। आपस में कुछ कहा-सुनी हो गई। गांववालों ने उनका एक साथी मार दिया। अब क्या था, सब पठान वहीं धरना देकर बैठ गये। उनके पशु मार-मार कर खा गये। वहां से उठने का नाम नहीं लेते थे। कहते थे कि जब तक वे गांव वालों का एक व्यक्ति नहीं मार लेंगे, तब तक नहीं उठेंगे। गांव वालों ने बहुत कहा, कि वे सब मुसलमान हैं। अब जाने दो। परन्तु तीन दिन तक वे लोग वहीं बैठे रहे। बाद में सरकारी आदमियों ने आकर उन्हें वहां से हटाया। इसी तरह एक दिन हमारे कैम्प के पहरेदार सिपाही के घर पच्चीस कबाइली आकर बैठ गये। अन्दर से आटा वगैरह सब निकाल खाया। फिर भी उठने का नाम न लिया। सब घबराये। पुलिस बुलाई गई,

वे भी पठान थे । उन्होंने आकर कबाइलियों को समझाया कि तुम अपने भाइयों के साथ क्या कर रहे हो । उठा, और अपने घर जाओ । वे कहने लगे, कि वे मोर्चे पर लड़ने जा रहे हैं । पुलिस के आदमी ने कहा, कि वे पच्चीस आदमी हैं और उनके पास एक बन्दूक है । वे मोर्चे पर जाकर क्या करेंगे ? बहुत डराने-धमकाने पर वे वहां से गये । जोधा कभी-कभी कहता था कि चाहे उसे हत्या ही का पाप लगे, परन्तु जीते जी इन लड़कियों को कहीं नहीं जाने देगा । जब समय पड़ेगा, तो इनका गला घोटकर खान्दान की इज्जत बचाएगा । इसपर लड़कियां “पहले मेरा” “पहले मेरा” कहने लगती थीं । ऐसी भयानक अवस्था थी पर इस अंधेरे में भी प्रकाश की एक किरण थी । कैम्प का इंचार्ज ठेकेदार हमारी हर तरह से सहायता करता था । न जाने भगवान् ने उसे कितना नेक बनाया था । वह हर एक के साथ हमदर्दी से पेश आता था । एक मर्नवा एक गांव की हिंदू स्त्री कैम्प में आई । इसका सब परिवार मारा गया था । एक बच्चा बचा था । इस स्त्री ने इस्लाम कबूल कर लिया था । वह और इसका बच्चा दोनों बहुत बीमार थे । इस औरत का पेट बहुत खराब हो गया था । उसे बार बार टट्टी आती थी और बाहर जाने की शक्ति नहीं थी । ऐसी अवस्था में कैम्प का इंचार्ज ठेकेदार उसका पाखाना खुद उठाता था । मैंने उससे कहा, कि यह काम मैं करूंगी । मुझे सेवा करने में शांति मिलती है । परन्तु वह नहीं माना । सचमुच वह महान् व्यक्ति था । वह राष्ट्र का सच्चा हमदर्द था । उसे अपने धर्म भाइयों के अत्याचारों से सख्त नफरत थी । सारी-सारी रात कुरान-शरीफ पढ़ते मैंने उसे देखा है । भगवान् से हमेशा प्रार्थना करता था कि वह इन बेगुनाह अबलाओं की रक्षा करे । इन्हें क्षमा करे । उसकी ऐसी अवस्था देखकर मैंने उससे कहा कि जब हम चले जायें, उसके बाद भी वह और लड़कियों को अत्याचारियों के पंजे से छुड़ा कर अपने यहां रखे । उसने ऐसा ही किया । हमारे भारत आने के बाद उसने कैम्प में कुछ और लड़कियां रखीं और वे बहुत अच्छी दशा में भारत पहुंची ।

कैम्प की स्त्रियों को सबसे बड़ा दुःख तब होता, जब उन्हें कैम्प की सफाई

वगैरह का काम करना पड़ता था ? अक्सर स्त्रियां रोती थीं । हाय, हमने कोई काम नहीं किया, आज ये लोग हमसे काम करा रहे हैं । जो कल हमारे टुकड़ों पर पलते थे आज पैरों से धकेल-धकेल कर हुकम देते हैं । वे गाली निकालने में भी संकोच नहीं करती थीं । अक्सर ये सिपाही जब वहां कैप का इंचार्ज नहीं होता था साम्प्रदायिकता के वशीभूत होकर बदतमीजी कर बैठते थे । तब भी मैं उन स्त्रियों को समझाती थी । यह दुःखी होने की बात नहीं है । देखो, मैं भी खुद झाड़ू लेकर अपने घर के बाहर सफाई करती हूं । मैं उसे बुरा नहीं समझती । वे मेरी बात मान लेती थी । हमें पाखाने के लिये खुले खेतों में जाना पड़ता था । वहां भय रहता था कि कहीं पीछे से कबाइली छिपकर न आ जायें । मैं जब खेतों में जाती तो कैम्प का एक कुत्ता मेरे साथ जाता । जब तक मैं वहां रहती वह चारों तरफ भौंक-भौंक कर दौड़ता रहता था । जब मैं लौटती तो साथ लौट आता था । हालांकि मैंने कभी उसे रोटी का टुकड़ा नहीं दिया था न ही प्यार किया था । पर वह सदा मेरे साथ रहता था । सब कहते, कि देखो, कुत्ता भी माताजी की सहायता करता है । वे सच कहते थे, हैवानों ने समय-समय पर मेरी सहायता की ।

इस कैम्प में एक नवयुवती थी । यह मीरपुर के अच्छे घराने की थी । इसका पति मारा गया था पर ससुर आदि जीवित थे । साल भर का बच्चा उसकी गोद में था । ससुर ने भय से इस्लाम कबूल कर लिया था । वह अक्सर कैम्प में इसके पास आता था और इसे तंग करता था । कहता था कि तुम उसी मुसलमान के पास चली जाओ जिसके सुपुर्द मैंने तुम्हें किया था। हिन्दुस्तान जाकर क्या करोगी? वहां तुम्हारे साथ कोई सीधे मुंह बात भी नहीं करेगा। वह मेरे पास आकर रोती थी । कहती थी, “बहन! जिस दिन से हमने कैम्प में भजन-कीर्तन आरम्भ किया है, किसी चीज की इच्छा नहीं रही है । सब दुनिया एक खेल-तमाशा दिखाई देती है । हमने अपने फर्ज को अच्छी तरह समझ लिया है । परन्तु मैं क्या करूं ? यह मेरा ससुर मुझे मजबूर कर रहा है । फिर मुसलमान के घर जाने को कहता है और कहता है, अगर तुम नहीं गई तो मुझे भी वे लोग मार देंगे । असल में इसने मुझे एक गेहूं

की बोरी भर अनाज तथा कुछ थोड़े रुपयों में बेचा था ।” यह लड़की बड़ी सुशील थी और बड़े प्रेम से भजन-कीर्तन करती थी । काफी अर्से तक मथुरा-वृन्दावन रह चुकी थी । मैंने उससे कहा, “ससुर को कह दो कि, चाहे वे उसे मारें या रखें, तुम्हें दुःख नहीं है, और कि तुम उनके घर नहीं जाओगी । चाहे हिन्दुस्तान में कोई अपनाये या न अपनाये ।” लड़की ने यही कहा और अन्त में वह बच गई ।

: २६ :

इसे सारी उम्र पाकिस्तान में रखो

एक दिन मीरपुर के कुछ स्थानीय आदमी रात के समय कुछ पुराने कपड़े वगैरह लेकर कैम्प देखने आये और कैम्प के इंचार्ज से कहने लगे कि यहां उनके मुहल्ले की कुछ हिन्दू स्त्रियां हैं, वे उनसे मिलेंगे । वे सब मुसलमान थे । कैम्प का इंचार्ज इन्हें मीरपुर की कुछ औरतों के पास ले गया । इन्होंने उन्हें कुछ कपड़े और शायद चार-चार, छः-छः आने दिये । वे इन औरतों ने ले लिये । जब आदमी पर विपत्ति आती है तब उसकी बुद्धि सचमुच काम नहीं करती । इनको यह याद ही नहीं रहा कि हम इन दुष्टों से पैसे-कपड़े किस लिये ले रही हैं । इन्होंने ही हम सबको बरबाद किया है । असलमें वे लोग इसी बहाने इन स्त्रियों को पसन्द करने आये थे । कहते थे कि वे इन्हें मोहब्बत से ले जायेंगे और अपने यहां रखेंगे । जब इन्हें यह मालूम हुआ कि इस कैम्प की कोई भी औरत पाकिस्तान में नहीं रहेगी, सब हिन्दुस्तान जायेंगी और यह भी मालूम हुआ कि मैं इन सबको ये सब बातें समझा रही हूं, तो वे आग-बबूला होकर कहने लगे कि क्या अभी काफिरों की स्त्रियों में इतना गरूर है? इन्होंने डी० सी० के पास जाकर कहा कि इस स्त्री को सारी उम्र पाकिस्तान में रखो । यह बात बड़े जोर से कही गई । मुझे कैम्प के इंचार्ज ने ये सब बातें बताई । मैंने उससे कहा, “तुम जाकर मेरी ओर से डी० सी० से कह दो कि अगर मेरे यहां

रहने से ये सब बहनें हिन्दुस्तान चली जायें तो मैं सारी उम्र पाकिस्तान में रहने के लिये तैयार हूँ। मुझे कोई भय नहीं है।” वह बोला, “डी० सी० ने उन्हें वहीं धमका कर कहा था कि वे तुम्हारे बारे में गलत खयाल कर रहे हैं। वे तुम्हें भारत जाने से नहीं रोक सकते।”

फिर इन लोगों ने दूसरी चाल चली। एक दिन गांव में यह अफवाह फैला दी कि यहां इन काफिरों की स्त्रियों को किस आराम से रखा गया है। रियासत जम्मू में हमारी मुसलमान बहनों को शेख मुहम्मद अब्दुल्ला ने मोर्चा-खुदाई पर लगाया हुआ है। एक कमीज और निकर उनके तन पर है। अब क्या था। सब गांववाले बिना सोचे-समझे कैम्प इंचार्ज के पास आये। वह भी कुछ तेज हो गया और मेरे पास आकर कहने लगा कि वह हम लोगों के लिये यहां क्या कुछ नहीं कर रहा है। सब इलाका उसका दुश्मन हो रहा है। लेकिन जम्मू में उनकी बहनों पर बड़े जुन्म हो रहे हैं। मैंने उससे कहा, “भाई साहब, मैं तो इस बात पर यकीन नहीं करती। शेख साहब के होते हुए वहां कभी ऐसा नहीं हो सकता। ये तो कैम्प को बरबाद करने के लिये सब गलत बातें उड़ा रहे हैं। इससे तो अच्छा है कि आप हमें एक ही बार खत्म कर दें, ताकि हम भी इन प्रति दिन के कष्टों से छुटकारा पायें।” पर वह भी क्या करता। वह तो सच्चा था, पर गांव के लोग उसे ऐसी-ऐसी बातें बता-बता कर तंग करते थे। एक दिन फिर एक काश्मीरी भाई, जो इस जिले में कंट्रोल अफसर था, सड़ा हुआ गेहूं और बदबूदार चावल ले आया और कैम्प के इंचार्ज को दिखाकर कहने लगा, “तुम रोज हमें तंग करते हो कि इन औरतों के लिये अच्छा अनाज वगैरह दो। देखो, जम्मू में यह कीड़े-वाला आटा तथा यह सड़ा हुआ चावल हमारी बहनों को दिया जाता है।” ऐसी ही साम्प्रदायिकता की बातें फैला-फैला कर ये इस कैम्प को बरबाद करना चाहते थे। इन बातों से कैम्प में काफी हलचल मच जाती थी।

एक दिन डी. सी. के सामने एक सिपाही के घर से एक पन्द्रह साल की लड़की लाई गई। सिपाही और इस लड़की का चाचा भी साथ था। वह एक अच्छे खानदान से ताल्लुक रखता था। पर अब मुसलमान बन गया था।

लड़की रोती जाती थी और कहती जाती थी, “मैं कैम्प में नहीं जाऊंगी। वहां हिन्दू स्त्रियां हैं। मैं मुसलमान हूं।” इत्तफाक से ओम् वहां था। उसे देखकर डी० सी० ने कहा, “तुम इसे कैम्प में ले जाओ।” वह और दो-तीन आदमी उसे कैम्प में ले आये। वह रो-रो कर चिल्ला रही थी। जब वह कैम्प में आई, किसी हिन्दू स्त्री से छुए तक नहीं, यही कहती जाये, “चाहे कुछ हो मैं हिन्दुस्तान नहीं जाऊंगी। तुम्हारा छुआ हुआ तक नहीं खाऊंगी।” उसे सबने समझाया; परन्तु बेकार। तब कुछ स्त्रियां मेरे पास आई। मैंने उसे अपने कमरे में बुलाया। उसे देखकर मुझे बहुत दुःख हुआ। मैंने उससे कहा, “बेटी, तुमने क्या हल्ला मचाया है। अगर तुम जाना नहीं चाहती, तो दूसरी बात है, परन्तु यह पागलपन छोड़ कर रोना-धोना बन्द करो। तुम्हें जबरदस्ती कोई नहीं रखेगा। धीरज धरो, सब सुनो, ममझो, फिर जैसा मुना-सिब हों, करना। मैं तुम्हें कैम्प में नहीं रखूंगी। तुम मेरे साथ रहो। देखो, यह सब तुम्हारी ही बहने है।” वह मेरे पास रहने को राजी हो गई। मैंने उससे कहा, “अपनी बीती सुनाओ। किसकी लड़की हो? मां-बाप कहां हैं?” वह देखने से खान्दानी तथा मुशील मालूम पड़ रही थी। उसने अपने मां-बाप का नाम बताया। कहने लगी, “जब हम लोग मीरपुर से भागे तो पिताजी हम से छूट गये। मैं और मेरी मां तथा दो छोटे भाई अलीबेग कैम्प में लाये गये। एक छोटा भाई रास्ते में एक दौड़ते हुये ऊंट के पांवों के नीचे आ गया और तड़प-तड़प कर मर गया। आपने अलीबेग कैम्प के अत्याचार तो सुने होंगे। वहां आजाद काश्मीर वाले स्त्रियों के साथ कैसा सलूक करते थे।” यहां वह कुछ रुकी। उसका शरीर कांप रहा था। कुछ संभल कर उसने फिर कहा, “जब हम वहां पहुंचे, तो देखा, बचे हुये हिन्दुओं को नहर के किनारे ले जा कर कुल्हाड़ों से बारी-बारी मारते हैं। और लड़कियों तथा स्त्रियों के साथ बहुत-से अत्याचार करते हैं। जिसका जी चाहता है वहीं वहां से किसी भी लड़की या स्त्री को घर ले जाता है या कबाइलियों को सौंप देता है। बारह-बारह और तेरह-तेरह आने में लड़कियां मुसलमानों ने बेची हैं। कबाइलियों का तो मोर्चे पर आने-जाने का रास्ता ही अलीबेग कैम्प के बीच से बनाया

गया है। आते-जाते वे वहीं ठहरते हैं और मनमाने अत्याचार करते हैं। किसी को कुछ कहने की हिम्मत नहीं। मुंह से कोई कुछ बोला नहीं कि गोली का शिकार हुआ नहीं। कभी-कभी थोड़ा-सा सड़ा-गला अनाज दे देते हैं। बहुत से लोग पेचिश से बीमार हैं। बच्चे भूख से तड़प रहे हैं। वे लोग इतने निर्दयी हैं कि बीमार आदमी को भी बाहर पाखाने जाने की सहूलियत नहीं देते। एक दिन एक बूढ़े आदमी को बहुत पेचिश हो रही थी। वह बाहर जाने के लिये उठा। थोड़ी दूर गया था कि गिर पड़ा, बेचारे का पाखाना वहीं निकल गया। तब एक सिपाही ने आकर उससे कहा कि, 'अभी भी उस में मस्ती है।' उसने गिड़गिड़ा कर कहा कि उसके बस की बात नहीं है। वह अभी साफ किये देता है। परन्तु जालिम ने उसे गोली से मार दिया। स्त्रियों की जो दशा है वह मैं कह नहीं सकती। यह सब जब मेरी मां ने देखा, तो यहां से एक आदमी को बुला कर कहा। कि मैं यह लड़की तुम्हारे सुपुर्द करती हूं। तुम इसे अपने घर ले जाओ, ताकि यह इन जुलमों से बच जाय। वही यह सिपाही था। यह मुझे अपने घर ले गया। परन्तु इसकी औरत तथा मां-बाप बिगड़ गये। यह उनसे अलग हो गया। अब मुझे इसी के पास से लाया गया है।" मैंने पूछा, "तुम्हारी मां कहां है?" वह कहने लगी, "उसे वहीं से मीरपुर का एक किसान अपने घर ले गया और अपने साथ निकाह पढ़ने पर मजबूर करने लगा। परन्तु मां ने नहीं माना। वह जब बहुत तंग करने लगा तो एक दिन जब वह कहीं बाहर गया था, मां ने समय पाकर कुछ मिट्टी का तेल, जो वहीं पड़ा हुआ था, अपने ऊपर छिड़का और आग लगा ली। इतने में वह आ गया। उसने मां को मरने से बचाया। परन्तु मां की छाती तथा मुंह काफी जल गया था। किसान पर इस बात का बहुत असर हुआ और वह उस कैम्प में पहुंचा आया। मां काफी जख्मी थी। इत्तफाक से एक दिन कुछ टुक शरणार्थियों को लिये जम्मू गये। उनमें चुन-चुन कर बूढ़ी जख्मी स्त्रियां भेजी गईं। उन्हीं में मां भी चली गई। आजकल वह हिन्दुस्तान में है।" यह कहते हुये उसकी आंखें डबडबा आईं। मैंने उसे धीरज देते हुये कहा, "घबराओ नहीं, जैसा तुम कहोगी, हम वैसा ही करेंगे।"

अगर तुन चाहो तो यहीं रहो, अगर चाहो तो हमारे साथ भारत जा सकती हो।” वह कहने लगी, “आप लोगों को भारत कौन भेजेगा? यह तो कहने की बात है। हम इसी तरह तड़प-तड़प कर मर जायेंगी या ये लोग हमें पठानों के हाथ सौंप देंगे। इससे तो अच्छा है कि आदमी एक ठिकाने रहे।” मैंने उसे समझाया, “जब कोई काम हम करने लगते हैं तब उसकी भलाई या बुराई दोनों के लिये हमें तैयार रहना चाहिये। हम सत्य पर रहकर दोनों बातों के लिये तैयार हैं। अगर हिन्दुस्तान भेजा तो भी, अगर तड़पाने को यहां रखा तो भी। हमें देखो, हम निर्भय होकर दिन काट रही हैं। हम इन धमकियों से नहीं डरतीं। जब तक हिम्मत है, किसी की ताकत नहीं कि हमें अपने कौल से गिराये। तुमने अपने देश की वीर नारियों का इतिहास तो पढ़ा ही होगा। हम भी उन्हीं की संतान हैं। जब वे हंसते-हंसते सब सहन करती थीं, तो क्या हम नहीं कर सकतीं? हम कर सकती हैं। हम अपने आत्म-गौरव पर आंच नहीं आने देंगी।” यह सब कुछ मुनकर वह चुपचाप कुछ सोचने लगी। बीस मिनट के पश्चात् उसने मुझे कहा, “मैं तुम्हें अपनी मां के समान समझती हूं। अगर तुम मुझे अपने पास रखो तो मैं भारत जाऊंगी।” मैंने उसके सिर पर हाथ फेरा और कहा, “मैं तुमसे वादा करती हूं, कि अपनी लड़कियों से पहले तुम्हारा खयाल रखूंगी।” वह मेरे पास रहने लगी। उसके लिये मुझे बहुत-सी कठिनाइयां सहनी पड़ीं; परन्तु मैंने उसे हाथ से नहीं जाने दिया। वह सिपाही जिसके पास वह रहती थी, प्रतिदिन कैम्प में आकर बैठता था और खत लिखकर भेजता था, “तुम आ जाओ। मेरा साथ मत छोड़ो। मैंने तुम्हारे लिये सबको छोड़ दिया है।” वहां के सिपाहियों से कहा करता था, “इसे किसी तरह यहां से भगा दो।” मैं इसे बाहर तक नहीं निकलने देती थी। बहुत-सी बातें हुई। मुझे उसने कहला भेजा, “अगर तुम इसे नहीं छोड़ोगी तो तुमपर मुसीबत आयेगी। तुम्हारी लड़कियां हैं, उनका ध्यान रखना।” मैंने इन बातों की परवाह नहीं की। ईश्वर मेरे साथ था। उसकी सारी चालें व्यर्थ गईं।

एक दिन रात को बीस साल की उम्र की एक और लड़की कैम्प में

लाई गई। बातचीत से मालूम हुआ कि यह जब बारह साल की थी तब इसके पिता राजौरी, रियासत काश्मीर में पुलिस अफसर थे। उन दिनों मेहता साहब भी वहीं थे। पं. उसे पहचान गई। वह कहने लगी, “मेरे पति को तो उसी दिन खत्म कर दिया था। मैं अपने पिता के एक मुसलमान दोस्त के पास थी। उसने मुझे बड़ी अच्छी तरह रखा। परन्तु एक पुलिस अफसर मुझसे शादी करना चाहता है। मैंने प्रण किया है कि चाहे मेरे टुकड़े-टुकड़े कर दें, पर मैं शादी नहीं करूंगी।” यह कहकर वह रोने लगी और कहने लगी, “क्या तुम मुझे बचाने का वचन दोगी? यह वचन दो, जब यहां से जाओगी मुझे साथ ले कर जाओगी, मुझे जालिमों के हाथों से बचाओगी।” मैंने उससे कहा, “तुम धीरज रखो। जब तुम अपनी रक्षा के लिये सच्चे दिल से मौत का स्वागत कर रही हो, तब किसकी शक्ति है कि तुम्हें वह धर्म से गिराये। तुम बेफिकर हो।” यह देखने में बहुत सुन्दर थी। परन्तु विपत्ति ने उसे मसल दिया था। इसकी दोनों आंखों के किनारों पर निरन्तर रोते रहने के कारण ज़ख्म हो गये थे। कैम्प में रहने से इसको कुछ शांति मिली।

कैम्प में जम्मू का एक मुसलमान भाई प्रतिदिन आता था। इसका सब परिवार जम्मू में मारा गया था। सिर्फ दो छोटे लड़के बचे हुये थे। वे भी जम्मू में फंसे हुये थे। यह अक्सर कैम्प में आकर घंटों व्यतीत करता था। कभी किसी बच्चे को उठाता, कभी किसी बच्चे को कुछ देता। मेरे पास आकर भी बैठता था। मैं उसे धीरज देती रहती थी। एक दिन बातों-बातों में उसने कहा, “बहनजी, ! तुम भी कभी सुन लोगी कि जम्मू के मुसलमानों ने अपना बदला चुका लिया है।” मैंने उसे जवाब दिया था, “वताओ, तुम्हें इससे क्या मिलेगा? देखो, मुझे बदले से कितनी नफरत है। आखिर मैं भी तो आदमी हूं।” तब वह कहता था, “हम ऐसा नहीं कर सकते।” कभी-कभी वह बच्चों की याद में आसू बहाता था। न जाने वे कैम्प में किस तरह होंगे। मैंने उससे कहा, “जब मैं जम्मू जाऊंगी, तुम्हारे बच्चों से मिलूंगी और जहां तक होगा उनकी सहायता करूंगी।”*

* भारत आकर मैंने उनका पता लिया था; परन्तु मालूम हुआ कि कुछ दिन पहले वे पाकिस्तान भेज दिये गये हैं।

अलीबेग कैम्प के आसपास रहनेवाले देहातियों ने डी० सी० के पास जाकर बहुत हल्ला-गुल्ला किया कि अलीबेग के कैम्प में गंदगी से बहुत ही दुर्गन्ध फैली है। बीमारी फैलने का खतरा हो गया है। कुछ गांववालों के कहने से और कुछ रेडक्रास वालों के आने की मुनकर अलीबेग कैम्प की तरफ हुकूमत ने ध्यान दिया। चार महीने के बाद उन्हें नहाने का पानी दिया गया और तीन-तीन फुट के गढ़े खोदकर उनमें उनके सिर के बाल वगैरह दबा दिये गये। कई स्त्रियों तथा लड़कियों के भी सिर के सब बाल कटवा दिये। क्योंकि एक अजीब किस्म की जुएं पड़ गई थीं जो कि टिड्डी की तरह उड़ती थीं। कई स्त्रियां तो डी० सी० की कृपा से हमारे कैम्प में लाई गईं। जिसके साथ हमदर्दी दिखानी होती थी, उसे इस कैम्प में लाया जाता था। हम तबतक उन्हें बाहर ही रखते थे जबतक उनके कपड़े वगैरह नहीं उबाले जाते थे। उनसे एक अजीब किस्म की दुर्गन्ध आती थी।

एक रोज डी० सी० ने दो-तीन पुरुष सपरिवार हमारे कैम्प में भेजे। इन्होंने इस्लाम कबूल कर लिया था। इनमें से एक डाक्टर थे,* मीरपुर का मशहूर गोकलशाह नामक व्यक्ति भी इन्हीं में था। इसका एक बीस साल का लड़का मार दिया गया था। इसकी स्त्री तथा दो तीन बच्चे थे। वह मुसलमान तो बन गया था, परन्तु वहां के मुसलमान उसे प्रतिदिन पकड़ कर ले जाते थे और बांध कर लाठियों से मारते थे, कहते थे, “बता तूने अपना धन कहाँ गाड़ रखा है ?” कहते हैं, इसने कुछ रुपये कहीं गाड़े थे, वे निकाल कर इन्हें दे दिये थे। परन्तु अब वे इसका पीछा नहीं छोड़ते थे। इसकी एक सोलह वर्ष की लड़की थी। इसने उसकी एक सईद से शादी कर दी। लड़की मैट्रिक तक पढ़ी थी और सुशील तथा मुन्दर थी। दो महीने उस लड़के ने उसे रखा। तीसरे महीने उसने कहा कि वह उसे नहीं रख सकेगा और किसीको सौंप देगा। लड़की ने कहा कि वह अब उसीकी है। हिन्दू बालिका की शादी एक बार होती है, उसीको वह अपना सब कुछ

*ये आजकल दिल्ली में हैं।

समझती है। वह फौज में था। उस लड़की ने उससे बन्दूक चलानी सीख ली थी। उसकी पहली स्त्री भी थी। एक दिन मौका पाकर इस लड़की ने दरवाजा बन्द करके बन्दूक हाथ में ली और बैठ कर अपने माथे पर वार कर लिया। गोली लगते ही उसके सिर की खोपड़ी फट गई। जब वह घर आया, दरवाजा खटखटाया। कोई नहीं बोला, तो किवाड़ तोड़ कर अन्दर आया। वहां लाश देखी तो उठाकर यह कहते हुए बाहर फेंक दी, “काफिर लड़की तुम्हारा यही होना था।” इस घटना की गांव में बड़ी चर्चा हुई। उसके यहां गांववालों ने खाना-पीना तक बन्द कर दिया।

तभी सुना गया कि हमारी फौजें आगे बढ़ रही हैं। सारे कैम्प में घबराहट फैल गई। डर लगा, भागते हुए पाकिस्तानी और कबाइली यहां आयेंगे और सबको कत्ल कर देंगे। मैंने स्त्रियों को समझाया, “तुम्हें खुश होना चाहिये। हमारी फौजें आगे बढ़ रही हैं। हां, एक अफसोस जरूर है कि यहां घास-लकड़ी नहीं मिलेगी, नहीं तो उनके यहां पहुंचने तक हम जोहर की रस्म अदा करतीं।”

एक दिन डी० सी० का भतीजा आया और मुझसे बोला, “आज हिन्दुस्तान ने अपना बापू अपने हाथों मार डाला। अब तुम्हारे हिन्द का रखवाला खुदा ही है। बुरे दिन दिखाई दे रहे हैं,” यह मनहूस समाचार सुनकर किसीको सुधबुध नहीं रही। सारे कैम्प में हा हा कार मच गया। “हाय बापू! तुम भी इस आपत्काल में हमें छोड़ गये। तुम्हारी ही आशा पर तो हम यहां बैठी हुई थीं,” यह कहकर सब विलाप करने लगीं।

इन दिनों पाकिस्तान के गुप्तचर स्थान-स्थान पर फिरकर लोगों से कह रहे थे, “देखो, काफिर आगे बढ़ रहे हैं। अगर तुम्हारे गांव में पहुंचें, भागना नहीं, चप्पे-चप्पे पर मुकाबला करना।” इससे यही जान पड़ता था कि भारतीय फौजें जोरों से आगे बढ़ रही थीं। इन्हीं दिनों दो विदेशी बहनें तथा एक विदेशी भाई रेडक्रास की सोसाइटी की ओर से कैम्प देखने आये थे। कटपीसों की एक-दो पेटियां, साबुन और दूध वगैरह साथ लाये थे। अक्सर वे मेरे कमरे में आकर बैठते थे। कटपीस की पेटियां उन्होंने मेरे

मुपुर्द कीं। मैंने सब बहनों को बुलाकर दो दिन में उन चार-चार गिरह के टुकड़ों को जोड़कर कपड़े सिये। उन्होंने लेकर कैम्प में बांट दिये। इनके आने से कुछ भरोसा हुआ। तभी पाकिस्तान का शरणार्थी मिनिस्टर गजनफर अली खान दो साथियों के साथ वहां आया। कैम्प कमांडेंट के साथ मेरे कमरे में भी वह आया। और आते ही एक अनजान व्यक्ति की तरह मुझे पूछने लगा, “क्या इस कैम्प में सिर्फ औरतें ही हैं? तुम्हारे पति कहां हैं?” मैंने कहा, “माफ करें, क्या आपको अभी तक यह भी नहीं मालूम?” यह सुनकर वह झेंपा। मैंने कहा, “वे तो शहीद हो गये। पर अभी तक यह खून की होली चल रही है। न जाने यहां की बेगुनाह स्त्रियों का कब छुटकारा होगा।” कैम्प का इंचार्ज कहने लगा, “देखिये आजाद काश्मीर की फौज के कर्नल वगैरह यहां लड़कियां लेने आते हैं, परन्तु मैं अपने जीते जी यह जुल्म नहीं होने दूंगा। मैं दुनिया को बता दूंगा कि सच्चा इस्लाम क्या है और क्या कहता है।” गजनफर अली बोला, “हम जल्दी ही तुम सबको हिन्दुस्तान भिजवाने की कोशिश कर रहे हैं।”

उसके बाद एक दिन डी० सी० ने मुझसे कहा, “तुम्हें तो भेज देते हैं। बाकी कैम्प अभी यही रहेगा। अभी हमारी बहुत-सी बहनें हिन्दुओं के घरों में हैं।” मैंने उससे कहा, “मैं इन्हें वचन दे चुकी हूं, कि मैं इन्हें साथ ले जाऊंगी। मैं आपसे वादा करती हूं कि जम्मू-काश्मीर में जाकर हिन्दुओं के यहां से अपनी बहनें निकलवाऊंगी।” *

: २७ :

भारत माता की जय

आखिर एक दिन डी० सी० ने कहला भेजा, “तैयार रहो, शाम को जाना है।” सबके मन खिल उठे पर फिर भी यह चिन्ता थी कि न जाने

*जब मैं भारत आई तो अपने वचन को पूरा करने के लिये काश्मीर गई, परन्तु वहां कहीं किसी के पास मुसलमान बहन नहीं पाई।

रास्ते में क्या होगा। उसपर वे लोग डाक्टर साहब तथा और दो-तीन दूसरे व्यक्तियों को नहीं भेज रहे थे। कहते थे कि जब ये मुसलमान बन गये हैं तो क्यों जा रहे हैं? कैम्प के इन्चार्ज को मैंने डी० सी० के पास भेजा। आखिर वह मान गया, सबकी गुप्त रूप से तैयारी होने लगी। कैम्प के इन्चार्ज ने मुझसे आकर कहा, “तुम यहां की सब स्त्रियों को ले जा रही हो। अच्छा है। पर सुना है जो लड़की तुम्हारे पास है तथा दूसरी, जिसे पुलिस का अफसर रखना चाहता है, इन्हे रास्ते में उड़ाने की साजिश हो रही है।” बड़ी मुश्किल आई। मैंने उन दोनों के सिर के बाल खुलवा कर उनका अजीब-सा लिबास बनाया। गरम फटे हुए कबल ओढ़ाये। कमर झुका कर चलने को कहा। सायंकाल को सब लोग निकले। उन लड़कियों को लेने के लिये सिपाही आया हुआ था। और भी बहुत से पाकिस्तान की फौज के सिपाही थे। उमने सबको कहा, “देख देखकर स्त्रियों को जाने देना।” वे सबको देख देखकर आगे भेजने लगे। जो आगे निकल जाती, उसे डांट कर रोकते थे। उन लड़कियों को मैंने बीच में रखा था। कभी उनके आगे रहती थी, कभी पीछे। वे दोनों कांप रही थीं। प्रभु की कृपा से वे अंधेरे में पहचानी नहीं गई। हमें करीबन एक मील पैदल चलना था। आगे ट्रक थे। पाकिस्तान का कैम्प कमाण्डर भी वहां तक साथ आया था और डी०सी० ने मेरे पास कंट्रोल अफसर को भेजा था कि उन्हें अच्छी तरह बैठा देना। बहुत से ट्रक लाइनवार खड़े थे। रेडक्रास की वे विदेशी बहनें तथा साहब भी थे। उनकी कार साथ थी, जिससे सबको बड़ा सहारा मिला। रास्ता आराम से कटने की आशा बंधी। सब स्त्रियां मेरे आगे-पीछे थीं और कहती थीं, कि मैं उनके साथ बैठूं। मैंने उन्हें समझाया कि सबके साथ कैसे बैठ सकती हूं? तुम निर्भय होकर बैठो। मैंने सबकी गिनती करके ट्रक पर चढ़वाया। स्त्री-वच्चे-पुरुष सब मिला कर लगभग एक सौ अस्सी थे। सब के पीछेवाली ट्रक पर मैं बैठी। सब वच्चे तथा वे दोनों लड़कियां जिन्हें मैं मुश्किल से लाई थीं, मेरे साथ थे। ट्रक चलानेवाले सब पठान ड्राइवर थे। इनके साथ कुछ फौजी सिपाही भी थे। ये लोग हमें कुछ ऐसी नज़र से

धूर धूर कर देख रहे थे कि भय मालूम होता था। न जाने कब क्या हो जाए। हमारी ट्रक दस कदम चलकर रुकी तो उसपर दो आदमी चढ़ गये। एक तो किसान दिखाई देता था, दूसरा बर्दीपोश सिपाही था। उस लड़की ने, जो मेरे पास बैठी थी, मुझसे कहा, “बचाव दे, वह आ पहुंचा।” जब वह ट्रक पर सवार हुए तो ट्रक चल पड़ी। अब वह किसान स्त्रियों को तंग करने लगा। कभी एक को धक्का दे, कभी दूसरी को। स्त्रियां चिल्लाने लगीं और मुझसे कहने लगीं, कि इसीलिये हम कहती थी कि नहीं जायेंगी। मैंने सब से कहा, “देने दो धक्का, अभी ट्रक रुकवा कर हम पूछते हैं कि यह कौन यहां बिना मतलब चढ़ गया।” यह सुनकर वह उठा और ड्राइवर के पास जाकर बैठ गया। मन में बड़ा भय लग रहा था। कही यह इस लड़की को ले तो नहीं जायगा। मैं इसे कैसे बचाऊंगी ? टेढ़ी जगह है, एकदम ट्रक से उतार कर ले जायेंगे, हमसे कुछ करते नहीं बनेगा। वह सिपाही मुझसे कहने लगा, “आप जानती हैं कि इस लड़की के लिये मुझे कितनी दिक्कतें उठानी पड़ी हैं। मेरे घर के सब अलग हो गये हैं।” मैंने कहा, “मैं सब सुन चुकी हूं। तुमने इसे बचाया है। तुम्हारे जैसे वीर भाई अगर सब होते तो कितनी लड़कियां आज बच जातीं। मैं तुम्हें बहुत-बहुत धन्यवाद देती हूं। भगवान् तुम्हारे सहायक होंगे। वही तुम्हें इस नेक काम का फल देंगे। तुम्हारी वजह से यह लड़की भारत जा रही है।” ऐसी उल्टी सुनकर वह हैरान होगया और कहने लगा, “यह आप क्या कह रही हैं ?” मैंने कहा, “मैं सच कह रही हूं। भगवान् अच्छे-बुरे सब काम देखता है।” उसने कहा, “अच्छा, आप इसे अच्छी तरह ले जाइये और इसकी मां के सिपुर्द कर दीजिए।” मैं चकित रह गई कि ज़रा-सी देर में उसकी बुद्धि कैसे ठिकाने आ गई थी। एक जगह ट्रक रुकी। वह उतर गया। असल में इसने ही उस बदमाश किसान को चढ़ाया था कि वह जरा हल्ला-गुल्ला मचाए तो शायद वह डरकर साथ आजाये। हमारी ट्रकें सराय आलमगीर पहुंची। वहां सबको उतार, एक ट्रेन पर बिठा दिया गया। उसमें अलीबेग कैम्प के शरणार्थी भी थे। सब ट्रेन पर चढ़

गये । पर मैं आगे ही बढ़ी जा रही थी, ट्रेन पर चढ़ते भय मालूम हो रहा था । एक डिब्बे में कुछ सिपाही थे । हमें देखकर कहने लगे, “इस डिब्बे में बैठिये ।” पन्ना प्रभु हर समय सहायक होते थे । मैं आगे चली गई और बीचवाले डिब्बे में चली । मैं, वे दोनों लड़कियां, श्रीमती मोदी और सब बच्चे एक साथ थे । सिर्फ दोनों नौकर और मेरा लड़का सुरेश छूट गया । वे कहीं और बैठ गये होंगे यह सोच कर हम चुप होगये । डिब्बे में बहुत भीड़ थी । जैसे-तैसे भीतर घुसे । रात का समय था किसी ने दियासलाई जलाकर कुछ रोशनी की । देखा कि अलीबेग कैम्प के कुछ पुरुष, औरतें तथा बच्चे हैं । सब औरतों को बड़ी मुश्किल से बैठाया । पर मुझे बैठने के लिये जगह न मिली, मैं खड़ी रही । जिस लड़की को मैं लाई थी उसका चाचा मिला । मैंने उसे उसके सिपुर्द कर दिया । वह बहुत धन्यवाद देने लगा । हमें सारी रात इस अंधेरी ट्रेन में काटनी थी । चार बजे सवेरे उसे हिन्दुस्तान रवाना होना था । भय से किसी के मुंह से आवाज तक नहीं निकल रही थी । दुर्गन्ध इतनी थी कि सांस लेना मुश्किल था ।

कोई तीन बजे का समय था । चांद की थोड़ी-थोड़ी रोशनी भीतर आ रही थी । एक वर्दीपोश पाकिस्तानी सिपाही गाड़ी में चढ़ा । जहां सामान की सीट होती है वहां हमारे कैम्प की एक स्त्री बैठी हुई थी । एक जागीरदार का परिवार हमारे कैम्प में रहता था । वह उसी परिवार की थी । यह वहां से अच्छी तरह आई थी । इसके साथ ही मेरी लड़की शीला बैठी हुई थी । वह सिपाही उसका बाजू पकड़ कर खींचने लगा । उसके पास बच्चा था । उसने कहा, “मैं बच्चा छोड़ कर आती हूं ।” उसने नीचे छलांग लगाई और सीट के नीचे छिप गई । शीला ने मेरे ऊपर छलांग लगाई । मैं उसे लेकर वहां आई जहां बाकी लड़कियां बैठी थीं । अभी मैं खड़ी ही थी कि सिपाही ने मेरा बाजू जोर से पकड़ा । मैंने सीट पर बैठते हुए मुड़ कर देखा, उसने संगीन निकाल कर मेरी पसली पर रखी । सब बच्चे देख रहे थे । वह कहने लगा, “बता तूने उसे कहां छिपाया ? नहीं तो मैं संगीन अभी भोंकता हूं ।” जैसे बिजली कौंधी । मैंने पुकारा, “भगवन् यह क्या । जीती हुई

बाजी हार रही हूं।” सामने वह स्त्री सीट के नीचे छिपी हुई थी। एक निगाह उसकी ओर थी, दूसरी बच्चों की ओर। एक विचार तड़पा, नहीं कोई माथ नहीं देगा। इसे बचाना ही होगा। मैंने कहा, “भौंक दे। मैं चाहती हूं कि इस दुनिया से मेरा छुटकारा हो जाय।” “क्या तू चाहती है कि तेरा इस दुनिया से छुटकारा हो जाय ?” यह कहकर उसने संगीन उठा ली और जिस ओर लड़कियां बैठी हुई थीं उस तरफ गया और कहने लगा, “ये कौन लड़कियां बैठी हुई हैं? वह लड़की नहीं मिली तो इनमें से एक ले जाऊंगा।” यहां बहुत-सी लड़कियां इकट्ठी बैठी हुई थी। वहां पर बैठे हुए पुरुष आवाज लगा कर उस स्त्री से कहने लगे, “निकल कर चली जा, बच जायगी।” जब उसने मुझसे पूछा, “ये लड़कियां कौन हैं?” तो मेरे मुंह से अचानक निकला, “ये मेरी बच्चियां हैं।” वह कहने लगा, “सब ?” और वहां से मुड़ा। पर तभी उसकी नज़र सीट के नीचे उस स्त्री पर पड़ गई। उसे निकाला और कहने लगा, “तुमने मुझे धोका दिया है। मैं तुम्हें इसकी सजा दूंगा।” वह कहने लगी, “बीरजी (भाई) मुझे माफ करो।” इतने में उस स्त्री की मां ने खिड़की से बाहर देखा और चिल्ला कर आवाज दी। सवेरा होगया था। वह भाग गया। मैं तो समझती हूं, भगवान् ने मेरी परीक्षा ली थी। कुछ भी हुआ; प्रभु ने मेरा प्रण निभाया। और हम सब सकुशल अमृतसर आ पहुंचे।

एक मंजिल का अन्त होगया। दुःखों की घनघोर घटा पीछे छूट गई। नये जीवन का सवेरा चमकने लगा। भावों ने दिल को इतना जकड़ लिया था कि बहुत देर तक तो विश्वास ही नहीं आया कि हम भारत माता की गोद में पहुंच गये हैं। गहरे अन्धेरे में से जब कोई रोशनी में आता है तो एकाएक उसे कुछ दिखाई नहीं देता। कुछ भी हो यह दास्तान यहीं खत्म होती है। आगे की कहानी उगते प्रकाश की कहानी है। उसे सब जानते हैं।

